शोधादर्श

90

डॉ. शशि कान्त जैन

स्मृति अंक

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति
उत्तर प्रदेश, लखनऊ

आद्य सम्पादक	:	(स्व.) डॉ. ज्योति प्रसाद जैन
पूर्व प्रधान सम्पादक	:	(स्व.) श्री अजित प्रसाद जैन
पूर्व सम्पादक	:	(स्व.) श्री रमा कान्त जैन
पूर्व मार्गदर्शक	:	(स्व.) डॉ. शशि कान्त
सम्पादक	:	श्री नलिन कान्त जैन
सह–सम्पादक	:	श्री सन्दीप कान्त जैन
	:	श्री अंशु जैन 'अमर'
	:	सौ. डॉ. अलका अग्रवाल

प्रकाशक

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.

ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–226004

ई–मेल : shodhadarsh@gmail.com मो. 9236062715

णाणं णरस्स सारं – सच्चं लोयम्मि सारभूयं

ज्ञान ही मनुष्य जीवन का सार है

सत्य ही लोक में सारभूत तत्त्व है

शोधादर्श–90

वीर निर्वाण संवत् 2546–2547 जनवरी–जून व जुलाई–दिसम्बर 2020 ई.

विषय क्रम

			पृ.
1.	सम्पादकीय	श्री नलिन कान्त जैन	4
2.	हमारे पूर्वज	श्री राजीव कान्त जैन	5–26
3.	डॉ. शशि कान्त जैन – जीवन परिचय, व्यक्तित्व एवं कृतित्व	श्री राजीव कान्त जैन	27–60
4.	महावीर और उनका संदेश	डॉ. शशि कान्त जैन	61–64
5.	The Teachings of Mahavira	Dr. Shashi Kant Jain	65 67
6.	डॉ. शशि कान्त जैन के कुछ छपे–अनछपे भाव (पद्य)		
	तिमिर–हर		68–69
	इन अलसाई–सी पलकों में		69
	भारतीय युवक से		70
	छिट–पुट (उर्दू)		71
	जीवन–चक्र		71

	सपनों का राही		73–74
	शाश्वत राग		74
	इतिहास–संदेश		75
	क्या खोया, क्या पाया		76–77
	बहो, बहो, बहते चलो		77–78
	हम हिन्दू हैं		78
	आवाहन – मै कगार पर खड़ा		79–80
	संदेश– चिर स्वतन्त्र भारत के जन		80–81
7.	निर्भीक चिंतक और निष्पक्ष पुराविद–इतिहासज्ञ : डॉ. शशि कान्त जैन	डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल	82–96
8.	स्मृत्यालोक में सहृद्वर डॉ. शशि कान्त जैन	डॉ. कैलाश नाथ द्विवेदी	97–98
9.	विकृतियों की कलई खोलने वाली कृति नारद के संवाद के बहाने डॉ. शशि कान्त की अविस्मरणीय याद	श्री सूर्य कुमार पांडेय	99–101
10.	मित्र का बिछोह	श्री कैलाश नारायण टण्डन	102–106
11.	वे जैन धर्म, दर्शन तथा इतिहास के प्रकाण्ड विद्वान थे	डॉ. परमानन्द जड़िया	107–108
12.	एक अपूरणीय क्षति	डॉ. अनिल कुमार जैन	109
13.	एक प्रज्ञावान समाजचेता का अवसान	श्री सन्दीप कान्त जैन	110–112
14.	बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे डॉ. शशि कान्त जी	श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध'	113–114
15.	समाज के सजग प्रहरी : डॉ. शशि कान्त	श्री अंशु जैन 'अमर'	115–119
16.	शत–शत नमन	श्री लूणकरण नाहर जैन	119
17.	जैन सांस्कृतिक मूल्यों एवं मर्यादाओं के संरक्षक	श्री सुरेश जैन	120–121
18.	जैनागम व साहित्य जगत में अपूरणीय क्षति	डॉ. लोकेश, डॉ. दीपा जैन	121–122
19.	आदर्श जैन श्रावक एवं साहित्यकार	डॉ. अमित जैन	122–123
20.	बेबाक लेखक	श्री ललित कुमार नाहटा	123
21.	शोध–मनीषी डॉ. शशि कान्त जैन	डॉ. कुसुम पटोरिया	124
22.	अपूरणीय क्षति	डॉ. प्रभाकिरण जैन	124

23. श्रद्धा–सुमन

ती. महावीर स्मृति केन्द्र समिति – श्री लूणकरण नाहर जैन		125
श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन सभा – श्री विनित जैन		125
कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ – डॉ. अनुपम जैन		126
श्री अजित जैन 'जलज'		126
श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश'		127
श्री बी.डी. अग्रवाल		127
श्री मनोज आभा जैन		128
Dr. Kamal, Dr. Beena Jain		128
डॉ. अभय कुमार जैन		128
श्रद्धासुमनांजलि – डॉ. कैलाश नाथ द्विवेदी		128

24. चित्र वीथिका 129–136

25. परिवार के उद्‌गार

'मेरे पापा' मेरी नजर से	डॉ. अलका अग्रवाल	137–138
मेरे मौसा जी	श्रीमती सरिता अग्रवाल	139
यादों के झरोखें से 'ताऊ जी'	श्रीमती इन्दु कान्त जैन	140–141
यादों में रह गए पापा	श्रीमती शेफाली मित्तल	142–143
हमारे ताऊ जी	श्रीमती सौम्या जैन	143
मेरी स्मृतियाँ	श्री अखिलेश मित्तल	144
Memories of Babaji	**Sri Shishir Jain**	144–145
मेरे बाबा जी	श्री केशव जैन	145–146
मेरे नाना जी	श्रीमती अनुभूति अग्रवाल	146–147
जीवंत नाना जी	श्रीमती आकांक्षा मित्तल	148
मेरे प्यारे नाना जी	कु0 संचिता मित्तल	149
अग्रज	श्री रमा कान्त जैन	150–151
मैंने तो मित्र खोया है	श्री विभव जैन	151

26. डॉ. शशि कान्त जैन की प्रिय – राष्ट्र–वन्दना 152

27. परिशिष्ट "अ" 153–160

28. परिशिष्ट "ब" 161–168

29. तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति प्रतिवेदन वर्ष 2019–20 169–172

30. अभिनन्दन 173

31. आभार 173

32. शोक संवेदन 174

33. समाचार विविधा 175

34. आवश्यक सूचना 176

सम्पादकीय

यह हमारे लिए बड़ी पीड़ा की बात है कि **शोधादर्श** के मार्गदर्शक डॉ. शशि कान्त जैन अब हमारे बीच नहीं रहे। दिनांक 30 अक्टूबर 2020 को वह लगभग 2 माह की बीमारी के बाद इस लोक से महाप्रयाण कर गये। उनकी सशक्त लेखनी, गहन विद्वता और सहज मार्ग दर्शन के बिना **शोधादर्श** का सम्पादन दुष्कर सा प्रतीत होता है। उनका कृतित्व और आशीर्वाद हमें इसकी सतत् प्रेरणा देते रहे हैं कि हम उनकी बौद्धिक प्रवृत्तियों को और शोध–खोज की परम्परा को आगे बढ़ायें। **शोधादर्श** के लिए जो प्रतिमान वह निर्दिष्ट कर गये हैं, उनका अनुसरण होता रहे यह हमारा दायित्व है और इसका निर्वहन सुधि पाठकों की सहृदयता और विद्वान लेखकों के सहयोग से संभव होगा, ऐसा हमारा विश्वास है।

शोधादर्श का प्रस्तुत अंक आ. पिता जी डॉ. शशि कान्त जैन की स्मृति को समर्पित है। जैन विद्वत समुदाय और साहित्य जगत के अनेक मनीषियों ने डॉ. शशि कान्त जैन जी के प्रति अपने भावभीने उद्‌गार और संस्मरण तथा परिवार के लिए सान्त्वना संदेश भेजे हैं। इन सभी में उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का सहृदयता पूर्वक विवेचन किया गया है। यह सभी सन्देश इस अंक में समाहित हैं।

इस अंक के संयोजन में मेरे सहयोगी श्री सन्दीप कान्त जैन, श्री अंशु जैन 'अमर' और डॉ. (श्रीमती) अलका अग्रवाल रहे। विशेष सहयोग भाई राजीव कान्त जैन का रहा।

इस बात का खेद है कि इस अंक में साहित्य सत्कार स्तम्भ नहीं दिया जा सका। अन्य सभी स्तम्भ सम्मिलित हैं। विशेष रूप से डॉ. शशि कान्त जी से सम्बन्धित एक चित्रावली दी जा रही है।

शोधादर्श का यह अंक 90 जून व दिसम्बर 2020 में प्रकाश्य अंकों का संयुक्तांक है। इसके माध्यम से हम आ. पिता जी का सम्यक् रूपेण स्मरण करने का प्रयास कर रहे हैं।

उन सभी सम्माननीय मनीषियों के प्रति हम कृतज्ञ हैं जिन्होंने डॉ. शशि कान्त जैन के प्रति अपने उद्‌गार और संस्मरण तथा परिवार के लिए सांत्वना संदेश भेजे हैं।

अन्त में पुनः हम अपनी भाव विगलित श्रद्धांजलि **तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.** तथा **शोधादर्श** के लेखकों और पाठकों की ओर से उस दिवंगत पुण्यात्मा मनीषी को अर्पित करते हैं और यह अभ्यर्थना करते हैं कि उनका आशीर्वाद हमें इस गम्भीर दायित्व का निर्वहन करने की क्षमता प्रदान करे।

– नलिन कान्त जैन

31.12.2020

सम्पादक

हमारे पूर्वज

– **श्री राजीव कान्त जैन**

लगभग 1600 ई. के आस–पास, मुगल सम्राट अकबर के शासन काल में, मेरठ प्रान्त निवासी अग्रवाल जाति के गोयल गोत्रीय एक जैन धर्मावलम्बी नवयुवक अपनी योग्यता और व्यापार कुशलता के बल पर स्थानीय शाही खजाने में खजाँची के पद पर नियुक्त हुए। उनके बाद उनके पुत्र और तदुपरान्त उनके पौत्र भिन्न–भिन्न प्रान्तीय शाही खजानों में खजाँची रहे। पौत्र का राज्य में अच्छा मान था। औरंगजेब के शासन काल में उन्हें वर्तमान जिला मुजफ्फरनगर के अन्तर्गत मन्सूरपुर–बिहारी के परगने जागीर में मिले। इनके पुत्र साम्राज्य के शाही खजांचियों में थे।

किन्तु औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् मुगल बादशाहत में गद्दी के लिये घमासान मचा था, विशेषकर सन् 1712 से 1720 ई. तक का काल तो इतना अराजक रहा कि उन्होंने भी शाही नौकरी में अपने धन और जन को सुरक्षित न देखकर, अपने परिवार और भाई–बन्धु सहित अपनी जागीर पर जाकर रहने का निश्चय किया और मन्सूरपुर–बिहारी में एक आलीशान हवेली और उसके सामने एक पक्का कुआँ बनवाया और एक बहुत बड़ा बाग लगवाया जिनके भग्नावशेष हमारे बाबाजी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के युवा काल (1930 के दशक) में पूर्वजों के समृद्ध अतीत के स्मृति–चिन्ह के रूप में विद्यमान थे।

उनका परिवार बहुत बड़ा था–कई पुत्र, पौत्र इत्यादि थे। उस परिवार में 18वीं शती के मध्य के लगभग एक विशेष घटना घटित हुई जिसके ऐतिहासिक प्रमाण आज भी उपलब्ध हैं। परिवार के ज्येष्ठ पुत्र का विवाह पास ही के चरथावल नामक स्थान में हुआ था। पुत्र को गौना कराने के लिए परिवार के पुरोहित के साथ भेजा गया। उनका पालतू कुत्ता भी पीछे–पीछे चला गया। पुरोहित को लालच आ गया और उसने पुत्र के गहने उतार लिये तथा उसे मारकर रास्ते में ही गाड़ दिया। कुत्ता वापस लौट आया और पिता की धोती पकड़ कर खींचने लगा। उसकी इस हरकत से घरवालों को संदेह उत्पन्न हुआ और वे लोग कुत्ते के पीछे–पीछे चले। एक स्थान पर आकर कुत्ते ने पैरों से जमीन खोदनी शुरू की तो युवा पुत्र का शव मिला। पुत्र की ससुराल में जैसे ही यह समाचार पहुंचा उनकी पत्नी को बहुत अवसाद हुआ और उन्हेंने भी पति के साथ सती होने का निश्चय कर लिया। अन्त्येष्टि के

समय सभी प्रकार रोकने के बावजूद वह चिता पर जा बैठीं। स्वामीभक्त कुत्ते ने भी स्वामी की चिता में अपने को दहन कर दिया। तब से हमारे परिवार में यह परम्परा बनी कि ज्येष्ठ पुत्र के विवाह पर अथवा ज्येष्ठ पुत्र की उत्पत्ति पर पति–पत्नी को सती के स्थान पर दर्शनार्थ ले जाया जाये और वहाँ पर कुत्ते को भोजन कराया जाये। **'सती का थान'** अथवा **'सती का घोर'** नाम से वह स्थान उस क्षेत्र में प्रसिद्ध है और एक पवित्र स्थान माना जाता है।

सन् 1929 में बाबा जी डॉ. ज्योति प्रसाद और सन् 1953 में उनके ज्येष्ठ पुत्र एवं हमारे पिता जी डॉ. शशि कान्त विवाह के बाद दर्शन के लिए वहां गये थे। अभी हाल में गत 26 दिसंबर, 2020 ई. को बाबा जी के द्वारा उल्लेखित पते एवं मार्ग के अनुसार उस स्थान को देखने की सहज उत्कंठा से मैं परिवार के साथ गया। बाबा जी के उल्लेखानुसार वह स्थान मुजफ्फरनगर–शामली रोड पर पिन्ना गांव में था और वहां तक पक्की पगडंडी जाती थी। सती की समाधि के सामने स्वामिभक्त कुत्ते की समाधि भी थी और वो एक खेत में बने हुए थे। बाबा जी एवं पिताजी जब वहाँ गये थे तो वह स्थान जीर्ण अवस्था में था परन्तु वहाँ के लोग उस स्थान को पूज्य भाव से देखते थे।

जब हम मुजफ्फरनगर रेलवे स्टेशन से मुजफ्फरनगर– शामली रोड पर पिन्ना गाँव के मोड़ पर पंहुचे (रोड के बांयी ओर पिन्ना ग्राम का प्रवेश द्वार है और यह मुजफ्फरनगर रेलवे स्टेशन से लगभग 75 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है) हमने वहाँ मिले कुछ बुजुर्ग गाँव वालों से उस स्थान के विषय में पूछा तो उन्होनें बताया कि वो स्थान पास में ही है और गाँव के अन्दर जाने वाला रास्ता उस स्थान को जाता हैं। बहुत पहले वहाँ पर लोग आते थे, पर बहुत समय से कोई नहीं आया है। गाँव के अन्दर प्रवेश करने पर थोड़ी दूरी पर एक बुजुर्ग सज्जन दिखाई दिये, उनसे हमने यही प्रश्न किया। उन्होंने बहुत उत्साह से बताया कि उनका नाम श्री यशपाल सिंह है और सन् 1998 से वो लोग यहाँ रह रहे हैं। उन्होंनें बताया कि यह पूरा खेत था, और यहाँ उन्होनें अपने आवास का निर्माण कराया है। सती की समाधि उनके घर के पीछे ही है और घर के पीछे के चहारदीवारी का निर्माण उस स्थान को छोड़ते हुए किया है। यद्यपि जब से वो यहाँ रह रहे हैं इस स्थान पर कोई नहीं आया है पर उन्हें यहाँ के महात्म्य का पता है, मन में श्रद्धा है और उनके घर के लोग प्रतिदिन यहाँ दीपक जलाते हैं। घर अच्छा बड़ा था। उनको इस

बात की सुखद अनुभूति हो रही थी कि जिस स्थान के कहानी–किस्से सुनते थे, वो वास्तविकता में घटित एक सत्य एवं ऐतिहासिक घटना है। हमे इतने अरसे बाद इस स्थान के विद्यमान रहने के प्रति आशंका थी अतः श्री यशपाल सिंह का यों प्रकट होना मानो वो हमारी ही प्रतीक्षा कर रहे हों, हमारे लिये भी सुखद संयोग था।

वो हमारा मार्गदर्शन करते हुए हमें घर के पीछे उस स्थान पर ले गये। सामने खेत में पानी भरा हुआ था अतः लगभग 10 मीटर की दूरी से हमने दर्शन किये। वहाँ पर गुंबद नुमा एक भग्नावशेष अभी विद्यमान है। हमनें उस स्थान की तस्वीरें ली और अक्षांश एवं देशान्तर भी नोट किये ताकि वो स्थान वैज्ञानिक प्रकार से भविष्य के लिए चिन्हित हो सके। उद्देश्य मात्र इतना था कि ये हमारे वंश की सततता का एक ऐतिहासिक बिन्दु है और इसकी भौगोलिक स्थिति का सही ज्ञान रहे।

हमारे परिवार में कुछ प्रथायें उस समय से चली आ रहीं हैं। दीपावली पर जो मिंसा–पूजा जाता है, उसमें सती, पुत्र और कुत्ते के नाम से जात निकाली जाती है। यह परम्परा आज भी कम–से–कम हमारे परिवार में चली आ रही है। बहू को अपनी ससुराल के बिछुए न पहनाने की आन भी तभी से पड़ी है। इस विषय में श्रुति कुछ यों है कि अग्निदाह के समय सती अपने सुहाग–चिन्ह उतारकर आशीष स्वरूप परिवार की सुहागन स्त्रियों को दान कर रही थी किन्तु बिछुए उतार कर दे पाने से पहले ही अग्नि ने उन्हें अपनी गोद में समेट लिया।

परिवार में यह परम्परा लगभग गत ढाई सौ वर्षों से चली आ रही है। इसका तात्पर्य सती प्रथा की पक्षधरता अथवा महिमामंडन से नहीं है वरन् एक त्रासदायक ऐतिहासिक घटना के स्मरण किये जाने से तथा उसके हमारे वंश से जुड़े भावनात्मक पक्ष से है।

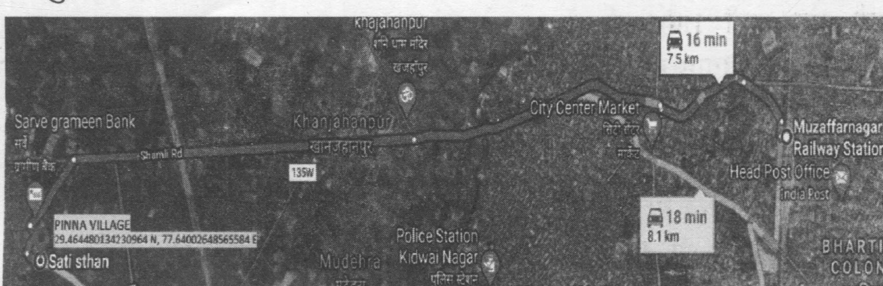

गूगल मैप पर इंगित 'सती स्थान'

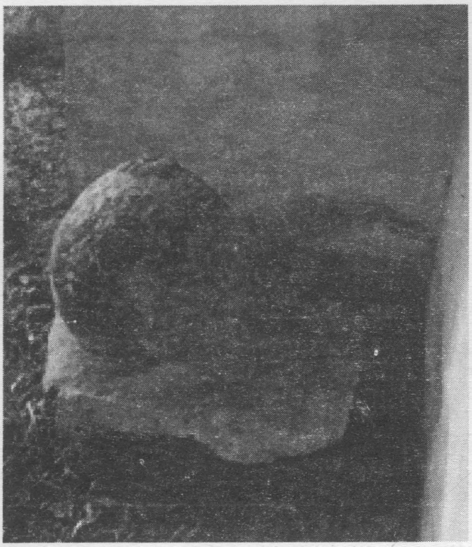

'सती स्थान' पर विद्यमान समाधि का अवशेष भाग

'सती स्थान' पर बांये से दांये– मैं राजीव कान्त, श्री यशपाल सिंह एवं भतीजे मलय के साथ

समय के साथ एक ओर परिवार बढ़ा तो दूसरी ओर आर्थिक स्थिति खराब होने लगी। कुटुम्ब में जो उद्यमी और उत्साही थे, वह घर–गांव छोड़ कर जीविका की खोज में परदेस चले गये, और वहीं बस गये। उनके वंशज आज भी मेरठ, रुड़की, बरेली, ग्वालियर, पीलीभीत आदि में विद्यमान हैं।

कंवरसेन

18वीं शती में परिवार का बिखराव होने लगा। उस शती के उत्तरार्ध में एक पुत्र सरधना आ गये। उनके नाम का स्मरण अब नहीं है। सरधना में 18वीं शती के अंतिम दशकों में बेगम समरू का आधिपत्य था और जान–माल सुरक्षित नहीं थे। अतः वह पूर्वज अपनी पत्नी के साथ मेरठ चले आये ओर यहाँ 1805 ई. में उनके कंवरसेन नामक पुत्र का जन्म हुआ। कंवरसेन का विवाह हापुड़ के एक प्रतिष्ठित घराने में हुआ। उनकी सास **बीबी सहजो** प्रसिद्ध हकीम थीं, और उनके साले बृजलाल अपने समय के प्रसिद्ध सांगाचार्य (स्वांग/अभिनय करने में महारथ) थे और खलीफ़ा कहलाते थे।

कंवरसेन की पत्नी **"राम की पुतली"** के नाम से प्रसिद्ध हुई। वह वैष्णव परिवार से आयी थीं, परन्तु कंवरसेन का कुलधर्म जैन था और उनकी पत्नी भी कुलधर्म का ही पालन करती थीं। कदाचित् विवाह के पूर्व ही कंवरसेन की

माता दिवंगत हो चुकी थीं। अतः परिवार में रीति–रिवाजों की परम्परा "राम की पुतली" ने ही डाली। 1825 ई. में कंवरसेन के **तुलसीराम** नाम का पुत्र हुआ। कंवरसेन की मृत्यु जल्दी ही 31–32 वर्ष की उम्र में हो गई और उस समय तुलसीराम मात्र 10–11 वर्ष के बालक थे। तुलसीराम की एक छोटी बहन भी थी।

तुलसीराम

पिता कंवरसेन की मृत्यु के बाद परिवार की असहाय अवस्था को देखकर तुलसीराम के मामा बृजलाल अपनी विधवा बहन और उसके पुत्र व पुत्री को अपने साथ हापुड़ ले गये। युवावस्था प्राप्त होने पर तुलसीराम को मामा का आश्रित होना पसंद नहीं आया और वे अपनी माँ व बहन को लेकर मेरठ चले आये। मेरठ सदर में रहकर उन्होंने छावनी क्षेत्र में बर्तनों की फेरी लगाना शुरू किया। वह समय बेहद विपन्न अवस्था का था, जब मात्र 3–4 पैसे रोज की आमदनी पर गुजारा करना होता था। परन्तु अपने अध्यवसाय से उन्होंने धीरे–धीरे मकान बनवा लिया और कसेरट (बर्तनों) की दुकान भी खोल ली। तुलसीराम ने अपने जीवन काल में पर्याप्त समृद्धि अर्जित की। शहर में कसेरट की एक अच्छी दुक़ान थी, सदर में एक–एक करके पांच दुकानें, एक मकान और शहर में डालमपाड़े में भी दो मकान खरीद लिये थे।

तुलसीराम को 1857 के गदर में स्वतंत्रता सेनानियों से सहानुभूति थी और वे सदर में काली पलटन के महादेव मंदिर में क्रांतिकारियों की बैठकों में सम्मिलित होते थे। उन्हें कविता से भी प्रेम था। प्रतिवर्ष रामलीला में राम वनवास के अवसर पर दालमण्डी के कुएं पर बैठकर लाला तुलसीराम कसेरे के अपने नये बनाये 4–5 झूलने अवश्य होते थे। रामबक्स ठठेरा उस समय का एक प्रसिद्ध कवि था और उसके लिखे बारहमासे बहुत प्रसिद्ध हुये थे, वह तुलसीराम को अपना गुरु मानता था। ठठेरे का काम करते समय बरतनों को मठारते–मठारते वह कविता लिखा करता था।

तुलसीराम के 18 सन्तान हुयीं, परन्तु केवल 3 ही जीवित रहीं। जीवित सन्तानों में **गणेशीलाल** ज्येष्ठ पुत्र थे जिनका जन्म 1852 ई. में हुआ था। उनके बाद एक पुत्री चावली थी और एक पुत्र बनवारी लाल थे जो अपने भाई से लगभग 10 वर्ष छोटे थे।

सन् 1870 के लगभग लाला तुलसीराम जी का देहान्त हो गया। वह एक उद्यमी, स्वाभिमानी और स्वावलम्बी पूर्वज श्रेष्ठ थे। परिवार में स्वावलम्बन,

स्वाभिमान, स्वदेश–प्रेम, स्वतंत्र चिन्तन और साहित्य साधना की जो प्रवृत्ति है वह तुलसीराम जी से चली आ रही परम्परा की देन है। इस परम्परा को हमारे पड़–बाबाजी श्री पारस दास, बाबाजी डॉ. ज्योति प्रसाद और पिताजी डॉ. शशि कान्त ने विशेष रूप से परिपुष्ट किया। छोटे बाबाजी श्री अजित प्रसाद और चाचाजी श्री रमा कान्त ने भी इस परम्परा का निर्वहन किया। उनके ये संस्कार परिवार में आज भी प्रवृत्त हैं।

गणेशीलाल

गणेशीलाल के 8 सन्तान हुयीं, जिनके नाम इमरतराय, द्वारिका प्रसाद, मुखनी, बिशम्भर सहाय, मंगलसेन, मन्नूलाल, लटूरीलाल (पारस दास) और नन्हेंमल थे। तुलसीराम से लेकर नन्हेंमल तक सभी नाम वैष्णव हैं जिसका श्रेय "राम की पुतली" को है, परन्तु कुलधर्म जैन ही बना रहा। "राम की पुतली" ने लगभग 80 वर्ष की आयु पाई और उनके जीवन काल में ही उनके पौत्र गणेशीलाल की पत्नी अपनी अंतिम सन्तान नन्हेंमल को जन्म देकर सन् 1894 में दिवंगत हो गयीं।

गणेशीलाल की 'लाला तुलसीराम गणेशीलाल की फर्म' के नाम से कसेरट की दुकान रही, इसके अलावा आढ़त आदि का व्यवसाय उन्होंने किया। गणेशीलाल सन् 1852 से 1915 तक रहे।

विशम्भर सहाय के ज्येष्ठ सुपुत्र ओम प्रकाश (ओंगी) ने सन् 1935 में मेरठ शहर में कसेरट की दुकान शुरू की थी। उनके अन्य सुपुत्र जय प्रकाश एवं नरेन्द्र प्रसाद जैन मेरठ के प्रसिद्ध वकीलों में थे। जय प्रकाश बाबाजी हस्तिनापुर तीर्थक्षेत्र कमेटी के मंत्री व भारतीय जैन मिलन के उपाध्यक्ष भी रहे। मंगलसेन के एक सुपुत्र महेश चन्द्र दिल्ली जा बसे थे। उनके अन्य सुपुत्र सुरेश चन्द्र उत्तर प्रदेश सरकार में पुलिस सेवा में रहे। मुझे बालपन की स्मृति है, लखनऊ में उनका तबादला हुआ था तब वो प्रायः बाबाजी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन से मिलने घर आते थे और शुरू में कुछ दिन घर में ठहरे भी थे। सुरेश बाबाजी के एक सुपुत्र श्री अरविन्द जैन आई.पी.एस. अधिकारी हुए। कोटा (राजस्थान) में मेरी नियुक्ति के दौरान 1994–96 में अरविन्द चाचाजी वहाँ डी.आई.जी. के पद पर तैनात थे और तब आपका एवं चाचीजी का स्नेह हमारे परिवार को मिलता रहा था। मन्नूलाल के सुपुत्र मोतीलाल हुए। उस पीढ़ी की अन्य संतति के विषय में मुझे अभी कुछ विशेष ज्ञात नहीं है।

गणेशीलाल जी की सातवीं संतान हमारे पड़–बाबा थे। बचपन में बालक कृष्ण की तरह इनके बाल लटदार थे, इसलिए पर–दादी "राम की पुतली" ने इनका नाम **लटूरीलाल** रख दिया। इनका जन्म 19 अप्रैल 1891 ई. को हुआ था। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में मेरठ शहर में हिन्दी–मुण्डी और महाजनी की पढ़ाई के लिए मुरारी पांडे और किशन पांडे की पाठशालायें विख्यात थीं। इन पाठशालाओं में उन्होंने पढ़ाई की थी। 1908 में जब उन्होंने गवर्नमेंट हाई स्कूल में अपना नाम लिखवाया तो नाम **पारस दास** जैन लिखवाया और उसके बाद वे इसी नाम से जाने जाते रहे।

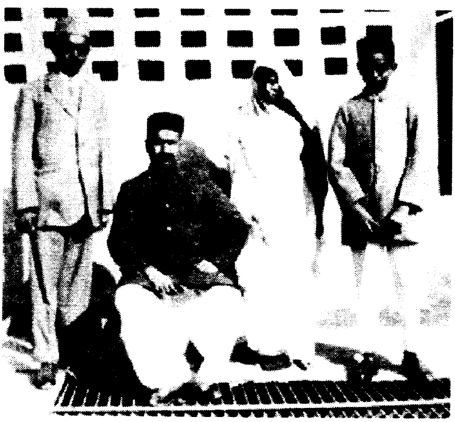

सन् 1933 : पारस दास धर्मपत्नी राम कटोरी, पुत्र ज्योति प्रसाद (बांये) व अजित प्रसाद (दांये) के साथ

1908 ई. में ही उनका विवाह बागपत जिले के नगला ख्वाजा के मुखिया और लम्बरदार लाला शिताब राय की पुत्री **राम कटोरी** से सम्पन्न हुआ और सन् 1911 में गौना कराने के बाद उन्होंने गृहस्थी सम्भाली। 6 फरवरी, 1912 ई. को हमारे बाबा **ज्योति प्रसाद** जी का जन्म हुआ। उस समय पूरे कुटुम्ब में गणेशीलाल जी के वही एकमात्र पौत्र थे। गणेशीलाल अपने पौत्र से परिहास वश अपने पिता को कहने को बोलते थे– 'राम खूब मिलाइन जोड़ी, एक लटूरी एक कटोरी।'

सन् 1915 में पारस दास ने गवर्नमेंट हाई स्कूल से स्कूल लीविंग सर्टीफिकेट (मैट्रिक) की परीक्षा उत्तीर्ण की। उस समय मि. फैरीयर उनके स्कूल के हैडमास्टर थे। जनवरी 1915 में एक पुत्री **मैनावती** का जन्म हुआ। उसी वर्ष उनके पिता गणेशीलाल का देहान्त हो गया जिनके अन्त्येष्टि कर्म के दायित्व का उन्होंने ही निर्वहन किया। 1 जनवरी, 1918 ई. को उनकी तीसरी सन्तान और कनिष्ठ पुत्र **अजित प्रसाद** का जन्म हुआ।

जून 1956 : पारस दास धर्मपत्नी राम कटोरी, पुत्र ज्योति प्रसाद (बांये) व अजित प्रसाद (दांये) के साथ

मैट्रिक पास करने के बाद पारस दास जी की नियुक्ति कलेक्ट्रेट में हुई। आयकर का विभाग तभी खुला था। (ब्रिटिश शासन की आय का मूल स्त्रोत मालगुजारी था जो जमींदारों से वसूल की जाती थी। 20वीं सदी के प्रारंभ में इन्कमटैक्स को आय के स्त्रोत के रुप में जोड़ा गया। प्रारंभ में व्यापारी वर्ग जो प्रायः सभी हिन्दु था, इसकी परिधि में आया।) व्यापारी अपना हिसाब–किताब हिन्दी–मुण्डी में रखते थे अतः हिन्दी–मुण्डी जानने वाले कर्मचारियों की आवश्यकता हुई और उसी के परिणामस्वरूप हमारे पड़–बाबा पारस दास जी की प्रथम नियुक्ति इस विभाग में बही–टेस्टर के रूप में हुई और बाद को आयकर विभाग में ही वे क्लर्क नियुक्त हो गये। सेवाकाल में आपका स्थानान्तरण बुलन्दशहर, आगरा, मुरादाबाद, लखनऊ और सहारनपुर भी हुआ तथा अंत में मेरठ से ही सन् 1946 में इन्कमटैक्स इन्सपेक्टर के पद से वे सेवानिवृत्त हुये।

26 जनवरी, 1956 ई. को उन्हें प्रपौत्र (हमारे पिता डॉ. शशि कान्त जी की प्रथम संतान और हमारे ज्येष्ठ भ्राता श्री शिरीष कान्त) का सुख प्राप्त हुआ। 4 सितम्बर, 1956 ई. को आपने इस असार संसार से विदा ली।

हमारी पड़–दादी **राम कटोरी** जी की मुझे अच्छी स्मृति है। वो मुझे बहुत प्यार करती थीं। रोज रात में वो जैन धर्म से जुड़ी एक कहानी सुनाती थीं। णमोकार मंत्र मैंने उन्हीं से सीखा। अकलंक–निकलंक और ऐसी अनेक कहानियां बचपन में मैंने उनसे सुनी जो मेरे भीतर जैन–संस्कार की नींव बने। 22 अप्रैल, 1976 को लगभग 82 वर्ष की वय में हमारी पड़–दादी **राम कटोरी** जी ने परिवार से अन्तिम विदा ली।

सुपुत्री मैनावती का विवाह 1 मार्च, 1926 ई. को मेरठ निवासी गर्ग गोत्रीय लाला उग्रसेन जैन सौदागर के एकमात्र सुपुत्र श्री शीतल प्रसाद के

साथ हुआ। उनकी सिगरेट की एजेंसी थी। हम बच्चे उन्हें बड़ी बुआ जी कहते थे। उनकी ज्येष्ठ संतान कनक माला का विवाह श्री सुरेश चन्द जैन से हुआ। मसूरी में सुरेश फूफाजी का लकड़ी के फर्नीचर का व्यवसाय था। मैं विवाहोपरांत सपत्नीक अक्टूबर, 1991 में मसूरी गया था। तब हमें कनक बुआ जी–फूफाजी के स्नेहातिथ्य पाने का सौभाग्य मिला था। बड़ी बुआजी के ज्येष्ठ सुपुत्र हुकम चंद जी (जन्म : 1 दिसंबर, 1933 ई.) का हमारे परिवार के गमी–खुशी में प्रायः आना–जाना रहा। वे हमारे पिताजी डॉ. शशि कान्त से लगभग दो वर्ष छोटे थे और गत 18 दिसम्बर, 2019 ई. को उनकी भी मृत्यु हो गयी। कनिष्ठ संतान टैनी बुआजी का विवाह श्री सुमत प्रसाद जैन से हुआ। आपका हरदोई में व्यवसाय है।

पारस दास के कनिष्ठ सुपुत्र श्री अजित प्रसाद का विवाह 18 जनवरी, 1937 ई. को सरूरपुर कलां (जिला मेरठ) के रईस व जमींदार लाला नाहर सिंह की पुत्री धनवती के साथ हुआ। उनके दो पुत्र सूर्यकान्त और मणिकान्त, तथा दो पुत्रियां सरोज एवं सन्तोष हुईं जो संभ्रांत घरानों में विवाहित हुए। वीरेन्द्र फूफाजी (सरोज बुआजी के पति) उत्तर प्रदेश विद्युत विभाग से अधीक्षण अभियंता के पद से सेवानिवृत्त हुए। महेश फूफाजी (सन्तोष बुआजी के पति) ने आई.आई.टी. कानपुर से इंजीनियरिंग की और वो लोग अमेरिका (CERRITOS) में बस गये हैं। मणिकान्त चाचाजी के ज्येष्ठ सुपुत्र मनीष भारतीय सेना में इंजीनियर संवर्ग में लेफ्टीनेंट कर्नल स्तर के अधिकारी हैं। अजीत प्रसाद जी सन् 1976 में उ.प्र. सचिवालय–सवंर्ग के लिए तब उपलब्ध उच्चतम पद–उपसचिव से ससम्मान सेवानिवृत्त हुए। हम लोग उन्हें छोटे बाबा जी कहते थे। उनका अपने अग्रज डॉ. ज्योति प्रसाद से प्रगाढ़ स्नेह और हमारे परिवार पर आजीवन वरद्हस्त एवं परम वात्सल्य भाव रहा। वो सप्ताह में कम से कम एक बार अवश्य घर आते थे। उनके परिवार के सब सदस्यों से हम लोगों के घर–जैसे आत्मीय सम्बंध हैं और सब त्योहार साथ मनाते हैं। वे अपने विद्यार्थी जीवन से जीवनपर्यन्त सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक कार्यक्रमों में सक्रिय रहे और उनसे जुड़ी अनेकों संस्थाओं से संबद्ध रहे। 'शोधादर्श' अंक 30 (नवम्बर 1996) से उनके निधन तक अंक 56 के प्रधान सम्पादक श्री अजित प्रसाद जैन रहे। सृष्टि के शाश्वत नियम के अनुसार 21वीं शती के प्रथम दशक में 25 जून, 2005 ई. को छोटे बाबा जी (श्री अजित प्रसाद) के आशीर्वाद की शीतल छाया से हम वंचित हो गये। शोधादर्श अंक 57 उनके स्मृति अंक के रूप में प्रकाशित हुआ।

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन

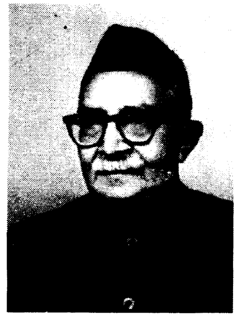

जन्म : हमारे बाबा जी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का जन्म 6 फरवरी, 1912 ई., को उत्तर प्रदेश के मेरठ जिले के ख्वाजा नगला ग्राम (परगना–छपरौली, तहसील–बागपत, जिला–मेरठ) में हुआ था। ख्वाजा नगला ग्राम उनका ननिहाल था।

परिवार में अपनी पीढ़ी में सबसे ज्येष्ठ होने के कारण ज्योति प्रसाद जी को 'भाई साहब' के नाम से सम्बोधित किया जाता था। तदनुसार हमारे पिताजी एवं चाचा जी भी उन्हें भाई साहब ही कहते थे, अपनी माँ को भाभी कहते थे, बाबा पारस दास जी को लाला जी और दादी को अम्मा कहते थे जैसा उनकी बुआ मैनावती जी और चाचा अजित प्रसाद जी इन लोगों को सम्बोधित करते थे।

शैक्षिक पृष्ठभूमि : प्राथमिक शिक्षा सन् 1918 में मेरठ शहर के मोहल्ला तीरगरान के दिगम्बर जैन मंदिर की पाठशाला में प्रारंभ हुई। वहीं 'बाल बोध–जैन धर्म' के चारों भाग भी पढ़े, धार्मिक शिक्षा और धार्मिकता की नींव पड़ी। पं. छेदालाल, जुगमन्दर टेढ़ीनाड़ व पारस राम आदि उनके अध्यापक रहे। ज्योति प्रसाद जी ने भी हिन्दी–मुण्डी और महाजनी की पढ़ाई मेरठ शहर में मुरारी पांडे और किशन पांडे की पाठशालाओं से की थी। जुलाई 1925 में गवर्नमेंट हाई स्कूल, मेरठ में 8वीं कक्षा में प्रवेश लिया, विज्ञान वैकल्पिक विषय था। बाद में आपने मेरठ कॉलेज में पढ़ाई की। (बीसवीं सदी के प्रारंभ में मेरठ कॉलेज की भी स्थापना की गई जिसमें इण्टरमीडिएट और स्नातक एवं स्नातकोत्तर कक्षायें चालू की गयीं। इसका प्रिंसिपल भी सन् 1940 तक अंग्रेज ही होता था। यह कॉलेज प्रारंभ में इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से सम्बद्ध रहा, परन्तु आगरा यूनिवर्सिटी की स्थापना के बाद यह आगरा यूनिवर्सिटी से सम्बद्ध हो गया) आपके शिक्षण काल सन् 1928–36 में कर्नल टी.एफ.ओ' डोनल प्रिंसिपल थे।

सन् 1930 में सविनय अवज्ञा आन्दोलन (Civil Disobedience Movement) प्रारम्भ हुआ। बाबाजी ने भी कांग्रेस सेवादल की सदस्यता ग्रहण की। उनके साथियों में कैलाश प्रकाश थे। इस आन्दोलन से जुड़ने के कारण सन् 1930 में वे इण्टरमीडिएट की परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो गये। उसी वर्ष गाँधी जी मेरठ

आये थे। गाँधीजी के मंच पर मेरठ कॉलेज के अंग्रेज प्रिंसिपल कर्नल टी.एफ. ओ' डोनल मौजूद थे। इससे बाबाजी के मन में आन्दोलन के उद्देश्य के प्रति शंका उत्पन्न हुई और उन्होंने अपनी पढ़ाई में दत्तचित्त होना श्रेयस्कर समझा। तदनुसार सन् 1931 में उन्होंने इण्टरमीडिएट (विज्ञान पक्ष) की परीक्षा कक्षा में तृतीय स्थान प्राप्त कर ससम्मान उत्तीर्ण की।

सेन्ट जॉन्स कॉलेज, आगरा से आपने सन् 1933 में (अंग्रेजी, इतिहास एवं अर्थशास्त्र विषय में) बी.ए. किया। आगरा में वह नागरी प्रचारिणी सभा के संपर्क में आये और उन्होंने सन् 1932 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की 'साहित्य विशारद' परीक्षा (साहित्य, इतिहास एवं अर्थशास्त्र विषय में) प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। हिन्दी साहित्य के अध्ययन से जैन साहित्य के उद्धार की प्रबल आकांक्षा तभी से उनके दिल में रहने लगी।

बी.ए. करने के बाद एम.ए. एवं एल–एल.बी. एक साथ करने का निर्णय किया जो एक चुनौतीपूर्ण शिक्षा–साधना थी। सन् 1933 में आगरा के सेन्ट जॉन्स कॉलेज में एम.ए. के लिए तथा आगरा कॉलेज में एल–एल.बी. के लिए प्रवेश लिया। अगले वर्ष लंबी बीमारी के कारण केवल एल–एल.बी. (प्रथम वर्ष) की परीक्षा दे सके और उत्तीर्ण रहे। सन् 1934 में आगे की पढ़ाई के लिए मेरठ आ गये। सन् 1935 में मेरठ कॉलेज, मेरठ से एल–एल.बी. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। यहीं से सन् 1936 में इतिहास एवं राजनीति शास्त्र विषय में एम.ए. की परीक्षा कॉलेज में प्रथम तथा विश्वविद्यालय में चतुर्थ स्थान के साथ उत्तीर्ण की। यह दोनों कॉलेज आगरा विश्वविद्यालय के अंतर्गत थे। आपके अनुज और हमारे छोटे बाबाजी श्री अजित प्रसाद जी ने भी सन् 1936 में बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। मेरठ के जैन समाज में इस प्रकार उच्च शिक्षित होने वालों में हमारा परिवार अग्रणी था।

ज्योति प्रसाद जी ने सन् 1939 में ज्योतिष का भी अध्ययन किया था। उनको इस विधा का अच्छा ज्ञान था और अपने बच्चों की जन्म कुंडली उन्होंने स्वयं बनायीं थी।

ज्योति प्रसाद जी को अपने दो अध्यापकों से जीवन में विशेष सहयोग प्राप्त हुआ। मेरठ कॉलेज में एम.ए. में इतिहास विषय के उनके अध्यापक डॉ. बी. आर. चटर्जी थे। वह अन्ततः मेरठ कॉलेज के प्रिंसिपल भी हो गये। सन् 1950 के प्रारम्भ में जब ज्योति प्रसाद जी से उनकी भेंट हुई तो उन्होंने ज्योति प्रसाद जी की शोध प्रवृत्ति को और उसके परिपालन में उनके द्वारा किये गये

लेखन को देखते हुये उन्हें प्राचीन भारतीय इतिहास के जैन स्त्रोतों पर पी–एच.डी. के लिए शोध करने का सुझाव दिया। डॉ. चटर्जी के प्रोत्साहन से ज्योति प्रसाद जी ने अपना शोध–प्रबन्ध आगरा विश्वविद्यालय को प्रस्तुत किया और सन् 1956 में आगरा विश्वविद्यालय ने प्राचीन भारत के इतिहास के जैन स्त्रोतों पर उनके शोध–प्रबंध पर उन्हें पी–एच.डी. की उपाधि प्रदान की। दूसरे शिक्षक मि. रहमान का जिक्र आगे है।

1 फरवरी, 1979 ई. (बसंत पंचमी)–
परिणय स्वर्ण जयन्ती

दाम्पत्य जीवन : ज्योति प्रसाद जी का विवाह मास्टर उग्रसेन कंसल की सुपुत्री **अनन्त माला** से 12 फरवरी, 1929 ई. को बसंत पंचमी के दिन सम्पन्न हुआ। अनन्त माला जी का जन्म 21 नवम्बर, 1913 ई., को मेरठ में हुआ था।

उग्रसेन कंसल जी ने सन् 1915 के लगभग मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण कर क्रिश्चियन मिशन हाई स्कूल में अंग्रेजी और गणित के अध्यापक के रूप में अध्यापन कार्य प्रारंभ किया था। उन्होंने हाई और मिडिल कक्षाओं के छात्रों के लिए दो पुस्तकें Commercial Practice और Simple Essays And Letters भी लिखीं। दूसरी पुस्तक सन् 1926 में प्रकाशित हुई थी, और यह हमारे पुस्तक संग्रह में संरक्षित है।

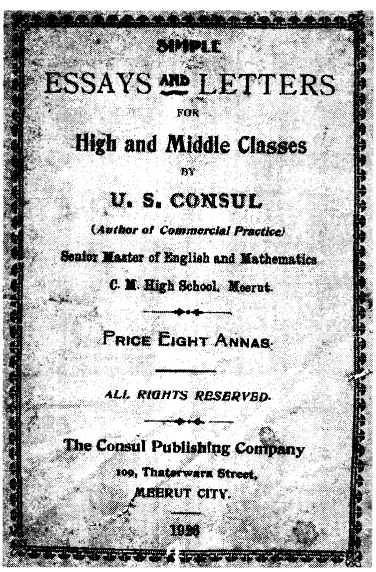

SIMPLE
ESSAYS AND LETTERS
FOR
High and Middle Classes
BY
U. S. CONSUL
(Author of Commercial Practice)
Senior Master of English and Mathematics
C. M. High School, Meerut.

PRICE EIGHT ANNAS.

ALL RIGHTS RESERVED.

The Consul Publishing Company
109, Thaterwara Street,
MEERUT CITY.
1926

उग्रसेन कंसल के बड़े भाई मित्रसेन ड्राइंग में अध्यापक थे। इन दोनों भाइयों ने मेरठ में ठठेरवाड़े में एक किराये का

मकान लेकर जैन बोर्डिंग हाउस की स्थापना की थी, जिसमें आस--पास के गाँवों आदि से शिक्षा के प्रति जागरुक जैन बालकों को रहने और अध्ययन करने की सुविधा प्रदान की जाती थी। रुड़की के थाम्पसन इंजीनियरिंग कॉलेज में ओवरसियर और इंजीनियर कक्षाओं में प्रवेश के लिये मास्टर मित्रसेन ड्राइंग और मास्टर उग्रसेन गणित एवं अंग्रेजी का अभ्यास कराते थे। यह कार्यक्रम उनका अपने व्यवसाय से अलग निःशुल्क था। उस समय के बहुत से ओवरसियर और इंजीनियर उन दोनों भाइयों द्वारा प्रवेश हेतु शिक्षित किये गये थे। बाद में रेलवे रोड पर एक विशाल भूखण्ड पर जैन बोर्डिंग हाउस के भवन का निर्माण हुआ। जैन विद्यार्थियों को धार्मिक शिक्षा भी दी जाती थी और 1930 के दशक में मेरठ में अपने प्रवास के दौरान ज्योति प्रसाद जी सप्ताह में एक दिन बोर्डिंग हाउस के विद्यार्थियों को जैन धर्म के दर्शन और सिद्धान्त के ग्रन्थों को ज्ञान कराया करते थे।

उग्रसेन जी स्वयं अध्यापक थे अतः स्त्री शिक्षा में उनकी रूचि थी। उन्होंने अपनी पुत्री अनन्त माला को हिन्दी वर्नाक्यूलर मिडिल की परीक्षा तथा संस्कृत में प्रथमा परीक्षा उत्तीर्ण करायी। हमारी दादी को हिन्दी, संस्कृत, अंगेजी और उर्दू का ज्ञान था।

1920 के दशक में मेरठ में जैन समाज ने एक दस्तूरामल बनाया था जिसका उद्देश्य यह था कि समाज में धनी और निर्धन परिवारों में धन के कारण दूरियाँ न हो। इसके अनुसार मात्र एक रुपये से रोकने की रस्म की जानी थी। हमारे बाबाजी के विवाह में इस दस्तूरामल का पालन किया गया था क्योंकि उनके श्वसुर मास्टर उग्रसेन विशेष रूप से सिद्धान्तवादी थे।

सन् 1930 के सविनय अवज्ञा आन्दोलन (Civil Disobedience Movement) जिसमें हमारे बाबाजी ने भाग लिया था, का प्रभाव हमारे परिवार में यह रहा कि हमारे घर चरखा आ गया और मास्टर उग्रसेन जी के घर भी चरखा आ गया। हमारे पड़–बाबा पारस दास जी ने फिर अंग्रेजी लिबास नही पहना। मास्टर उग्रसेन जी ने क्रिश्चियन मिशन हाई स्कूल से, जहाँ वे सीनियर टीचर थे, त्यागपत्र दे दिया और उसके बाद अपना स्कूल अपने मकान के पास स्थापित कर लिया। मास्टर उग्रसेन जी का सन् 1935 में असमय निधन हो गया और उनका स्कूल भी बन्द हो गया।

ज्योति प्रसाद–अनन्त माला (हमारे बाबा–दादी) की 6 सन्तानें हुईं लेकिन केवल दो पुत्र जीवित रहे। हमारे पिता शशि कान्त जी का जन्म 12

फरवरी, 1932 ई. को हुआ था और उनके छोटे भाई रमा कान्त जी (हमारे चाचा जी) का जन्म 4 वर्ष बाद 10 फरवरी, 1936 ई. को हुआ था।

ज्योति प्रसाद, पुत्र शशि कान्त (बांये) व रमा कान्त (दांये) के साथ अमृत महोत्सव (6–2–1987) पर

5 अप्रैल, 1986 ई. को हमारी दादी अनन्त माला नश्वर देह को त्याग कर इस असार संसार से विदा हुईं।

ज्येष्ठ सुपुत्र डॉ. शशि कान्त जैन एक प्रख्यात इतिहासविद्, प्रखर समालोचक, प्रगतिशील लेखक, स्वतंत्र चिंतक, निष्पक्ष एवं निर्भीक संपादक और ओजस्वी वक्ता थे। वह गत् 30 अक्टूबर, 2020 ई. शरद पूर्णिमा के दिन अपरान्ह 3.30 बजे विगत लगभग दो माह से अस्वस्थ चल रही नश्वर काया का परित्याग कर इस असार संसार से विदा ले देवलोक वासी हो गये। उनका जीवन परिचय, व्यक्तित्व एवं कृतित्व अगले आलेख में वर्णित है।

कनिष्ठ सुपुत्र श्री रमा कान्त जैन ने सन् 1954 में लखनऊ विश्वविद्यालय से बी.ए. किया और उसी वर्ष हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से 'साहित्यरत्न' की परीक्षा उतीर्ण की। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की 'तमिल कोविद' परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की तथा प्रथम स्थान प्राप्त किया। उनका विवाह 18 फरवरी, 1961 ई. को जसवन्त नगर, जिला इटावा, के सेठ नरेन्द्र भूषण जैन की ज्येष्ठ सुपुत्री आशा से सम्पन्न हुआ। उनकी तीन संतानें संदीप कान्त, इन्दु कान्त एवं अंशु हैं जो संभ्रांत घरानों में विवाहित हैं। इन्दु के पतिदेव श्री महेश चन्द्र जैन फिरोजाबाद में व्यवसायी हैं। संदीप कान्त बीमा कंपनी में अधिकारी हैं और अंशु उत्तर प्रदेश सचिवालय सेवा में हैं। हम लोगों का संयुक्त परिवार रहा है और बचपन में मेलों–उत्सवों में प्रायः चाचाजी हम सब बच्चों को साथ ले जाया करते थे। संस्कृत भाषा पर उनका अच्छा अधिकार था और उन्होंने हमें बचपन में संस्कृत पढ़ाई थी। उनका अपने अग्रज डॉ. शशि कान्त से प्रगाढ़ स्नेह था और लोग उन्हें राम–लक्ष्मण की

जोड़ी कहते थे। चाचाजी से जुड़ी बहुत सी मधुर स्मृतियां हमारे मन में हैं। उत्तर प्रदेश शासन के अंतर्गत सचिवालय सेवा से फरवरी 1994 में उपसचिव के पद से ससम्मान सेवानिवृत्त हुए। वो साहित्यक प्रतिभा के धनी थे और किसी भी विषय पर तत्काल व्यंग्य क्षणिका बनाने में कुशल थे। 'शोधादर्श' अंक 57 (नवम्बर 2005) से अंक 67 (मार्च 2009) तक श्री रमा कान्त जैन ने इसके प्रधान सम्पादन के दायित्व का निर्वहन किया। काल के क्रूर हाथों ने उन्हे हमारे परिवार से छीन लिया और 26 मई, 2009 ई. को वो चिरनिद्रा में निमग्न हो गये। शोधादर्श अंक 68 उनके स्मृति अंक के रूप में प्रकाशित हुआ।

जीविका : उन दिनों इन्कमटैक्स विभाग में इन्सपेक्टर की नियुक्ति करने का अधिकार कमिश्नर को था। शिक्षा विभाग में एल.टी. के प्रशिक्षण के लिये नामांकन भी जिला अधिकारी करता था। सन् 1930 के सविनय अवज्ञा आन्दोलन से सम्बद्ध होने के कारण बाबाजी इनके लिये अपात्र हो गये। वैसे भी वे विदेशी अंग्रेजी सरकार की चाकरी करना पसन्द नहीं करते थे।

इस बीच उन्होंने जैनों की शिक्षण संस्थाओं में अपना योगदान करना चाहा परंतु उन संस्थाओं के व्यवस्थापकों की मनोवृत्ति को देखकर वह क्षुब्ध हुये, तदपि प्रायः एक वर्ष सन् 1937–1938 में उन्होंने भेल्सा (ग्वालियर स्टेट) के एस. एस.एल. जैन हाई स्कूल में (21 जुलाई, 1937 ई. – 27 अप्रैल, 1938 ई.) अपना योगदान किया। यहाँ स्वाध्याय द्वारा धार्मिक, सैद्धान्तिक ज्ञानार्जन किया जो आगे के लिये नींव हुआ।

उन्होंने 4 अक्टूबर, 1938 ई. को मेरठ में रानी मिल किराये पर लेकर ग्लास फैक्टरी आरम्भ की। दिसंबर माह में ग्लास की शीशियों का उत्पादन भी हुआ किन्तु कारीगरों की शरारत से ऊबकर लगभग चार माह में 14 जनवरी, 1939 ई. को हानि के साथ फैक्टरी बंद कर दी।

सन् 1939–41 में ताऊ मंगल सेन जी के साथ वकालत की पर उसमें आनंद नहीं आया। वकालत के पेशे में जो बेईमानी का वातावरण था और वकीलों को कचहरी परिसर में पेड़ के नीचे बैठने के लिए तख्त और बस्ता दिये जाते थे उससे अवमानना का जो बोध होता था, इन सबसे उन्हें खिन्नता होती थी।

अन्ततः सन् 1942 में वह लखनऊ चले आये और यहाँ आकर यूनियन मेडिकल स्टोर्स के नाम से औषधि का व्यवसाय प्रारंभ किया।

जब वह हाई स्कूल के छात्र थे तो उनके एक शिक्षक मि. रहमान थे।

सेवानिवृत्ति के बाद लखनऊ में संयोग से उनकी मुलाकात बाबाजी से हो गई। सेवानिवृत्ति के बाद मि. रहमान मेरठ में फैज़–आम इण्टर कॉलेज में प्रिंसिपल नियुक्त हो गये थे। उन्होंने सन् 1952–54 में आग्रह करके बाबाजी को अपने कॉलेज में अंग्रेजी के शिक्षण के लिए बुलाया।

परिस्थितियाँ अब बदल चुकी थीं। भारत अब स्वतंत्र देश था। उत्तर प्रदेश में जिला गजेटियरों के पुनर्लेखन के लिए एक कार्यालय स्थापित किया गया। उस कार्यालय के अध्यक्ष स्टेट एडिटर श्री विनोद चन्द्र शर्मा, आई.ए. एस., अपने कार्यालय के लिए एक शोध विधा में दक्ष व्यक्ति की तलाश में थे। छोटे बाबाजी (श्री अजित प्रसाद जैन) उनके साथ कार्य कर चुके थे और एक औपचारिक मुलाकात में बाबाजी के सम्बन्ध में उनसे जिक्र आया कि वे इतिहास विषय में पी–एच.डी. हैं। शर्माजी ने बाबाजी को मिलने के लिए बुलाया और उनसे प्रभावित होकर उन्हें 10 अग्रिम वेतन वृद्धियाँ देकर संकलन अधिकारी एवं उप–सम्पादक के पद पर नियुक्ति का प्रस्ताव किया जिसे स्वीकार कर सन् 1958 से बाबाजी ने गजेटियर विभाग में अपनी सेवायें दीं।

सन् 1958 से 1972 तक डॉ. ज्योति प्रसाद जी गज़ेटियर विभाग में उत्तर प्रदेश के डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स के संकलन अधिकारी एवं उप–सम्पादक के रूप में रहे। उन्होंने गजेटियर्स की रूपरेखा सुनिश्चित की और प्रायः 15 गजेटियर्स के इतिहास–अध्याय को स्वयं ही लिखा। उनके कार्यकाल में 22 जिलों के गज़ेटियर बनाये गये। वाराणसी, मुरादबाद, मेरठ, बरेली और मथुरा के इतिहास विषयक अध्यायों का लेखन उन्होंने स्वयं किया, फैजाबाद जिले के प्राचीन कालखण्ड का लेखन भी उन्होंने ही किया, तथा इलाहाबाद, बाराबंकी और सीतापुर जिलों के इतिहास विषयक अध्याय का सम्पादन किया। आई.ए.एस. संवर्ग के वरिष्ठ अधिकारी श्री विनोद चंद्र शर्मा, श्रीमती एशा बसती जोशी, श्री सैयद अली अतहर रिज़वी और श्री प्रकाश चन्द्र सक्सेना उनके सेवा काल में स्टेट एडिटर रहे थे। श्री रिज़वी ने उन्हें दो वर्ष का सेवा–विस्तार दिये जाने की विशेष रूप से अनुशंसा की थी।

उत्कृष्ट शैक्षणिक वृत्त के होते हुए भी जीविकोपार्जन की डगर सरल नहीं रही। लक्ष्मी और सरस्वती का आपस में बैर है, उक्ति सही ही है। तथापि डॉ. ज्योति प्रसाद जी ने अध्यवसाय व मितव्ययिता से 9 मई, 1960 ई. को चारबाग, लखनऊ में एक निर्मित भवन संग भूखंड क्रय कर "ज्योति निकुंज" नाम से अपना स्थायी आवास बनाया। अभी हम लोगों का पैतृक निवास यही है।

कृतित्व एवं व्यक्तित्व : ज्योति प्रसाद जी किशोरावस्था से ही सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक कार्यों के प्रति आकृष्ट हो गये थे। देश एवं निज भाषा प्रेम उनके स्वभाव में था। अपने शिक्षण काल के दौरान सन् 1927 में ही मेरठ में नवयुवकों की जैन कुमार सभा का पुनर्गठन किया और उसके प्रथम सभापति निर्वाचित हुए। इण्टरमीडिएट के शिक्षण के दौरान रोवर (Rover) स्काउट रहे।

सन् 1930 में सविनय अवज्ञा आन्दोलन (Civil Disobedience Movement) प्रारम्भ हुआ। वह भी कांग्रेस सेवादल की 'सदस्यता ग्रहण कर राष्ट्रीय आंदोलन में सम्मिलित हो गये।

आगरा में नागरी प्रचारिणी सभा के संपर्क में आये और सन् 1932 में उन्होंने हिन्दी साहित्य सम्मेलन की साहित्य–विशारद परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति उनका प्रेम और उसको समृद्ध करने के लिये उनके प्रयास फिर कभी शिथिल नहीं हुये।

सन् 1932 से 1934 में आगरा में अपने प्रवास के दौरान उन्होंने राजा मण्डी में जैन युवक संघ का गठन किया और आगरा के जैन हॉस्टल में जैन स्टूडेन्ट एसोसियेशन की स्थापना की। राजा मण्डी से 6 अक्टूबर, 1933 ई. को सर्वप्रथम जैन रथ यात्रा भी प्रारम्भ करायी। सन् 1934 में मेरठ लौटने पर जैन कुमार सभा का पुनर्गठन किया और 'जैन कुमार' पत्र निकाला। सन् 1935 में जैन सभा की प्रबंधकारिणी के भी सदस्य हो गये और मंत्री प्रचार विभाग–पुस्तकालय निर्वाचित हुए। तीरगरान के मंदिर में वीर पुस्तकालय की स्थापना की। सन् 1939 में जैन सभा के प्रधान मंत्री और जैन बोर्डिंग हाउस के संयुक्त मंत्री निर्वाचित हुये, तथा जैन पाठशाला के मैनेजर भी हुये।

2500वीं वीर शासन जयंती के प्रसंग से सन् 1946 में वे कलकत्ता भी गये परन्तु वहाँ उन्होंने समाज के नेतृत्व वर्ग की जो दशा देखी उससे क्षुब्ध होकर वापस आ गये। पुनः सन् 1946–47 में उन्होंने वीर सेवा मन्दिर, सरसावा, में अपनी सेवायें दीं और उस संस्था के शोध कार्यों को आगे बढ़ाया एवं शोध पत्रिका 'अनेकान्त' के सम्पादन में अपना योगदान किया। आचार्य जुगल किशोर मुख्तार उनसे बहुत प्रभावित थे और विशेष आग्रह करके उन्होंने बाबाजी को वीर सेवा मन्दिर बुलाया था। मुख्तार साहब से जीवनपर्यन्त बाबाजी के आदरास्पद सम्बन्ध बने रहे।

उन्होंने विविध प्रकार के व्यवसाय किये यथा वकालत, अध्यापन, व्यापार और राजकीय सेवा, तथापि उनकी रूचि अध्ययन में और समाजोत्थान की

ओर ही प्रवृत्त थी। जैन धर्म एवं अपने देश के इतिहास के सम्बन्ध में प्रचलित भ्रान्त धारणाओं का निरसन करने में अपना योगदान करना श्रेयस्कर समझते थे। उनके अध्ययन का क्षेत्र जैन विद्या के संदर्भ से भारतीय विद्या रहा और वह इतिहास, संस्कृति, साहित्य, कला, धर्म और दर्शन को आवृत्त करता है।

वह बहुत सी अखिल भारतीय सामाजिक, सांस्कृतिक और शोध संस्थाओं से सम्बंधित रहे। 'भारतीय ज्ञानपीठ' के न्यासी सदस्य, वैशाली के प्राकृत शोध संस्थान (काउंसिल ऑफ रिसर्च इंस्टीट्यूट ऑफ प्राकृत, जैनिज्म एण्ड अहिंसा) के पार्षद और वाराणसी के श्री स्याद्वाद महाविद्यालय के उपाध्यक्ष रहे। देव कुमार जैन रिसर्च इंस्टीट्यूट, आरा के सदस्य थे। जैन मिलन के संरक्षक तथा तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र एवं उत्तर प्रदेश दिगंबर जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी, अखिल भारतीय दिगम्बर जैन परिषद, दिगम्बर जैन महासमिति, दिगम्बर जैन महासभा इत्यादि अनेकों संस्थाओं के कार्यकारी मंडल के सदस्य थे।

उनके आशीर्वाद से विभिन्न बौद्धिक और शैक्षणिक कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये थे जिन्होंने बाद को 'अनन्त–ज्योति विद्यापीठ' के रूप में संस्थागत स्वरूप धारण किया। वह विद्यापीठ के अध्यक्ष और उसके मार्गदर्शक रहे।

उनकी प्रेरणा से भगवान महावीर के 2500वें निर्वाण महोत्सव के समापन पर सन् 1976 में तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति की स्थापना की गयी और उसका पंजीयन कराया गया। वह तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के संस्थापक सदस्य थे और उसकी कार्यकारिणी के सदस्य तथा उसके शोध कार्यक्रमों एवं पुस्तकालय के निदेशक रहे। इस संस्था के अंतर्गत शोध पुस्तकालय, शोधादर्श पत्रिका, छात्र सहायताकोष, जनकल्याणनिधि आदि अनेक छात्रोपयोगी, लोककल्याणकारी और साहित्यिक गतिविधियाँ सम्पन्न की जाती हैं। इस संस्था की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि समिति का आय–व्यय पत्रक अंकेक्षण के पश्चात् प्रतिवर्ष नियमित रूप से प्रकाशित किया जाता है।

अपने विशाल निजी पुस्तकालय के रख–रखाव तथा अपने बौद्धिक एवं परमार्थ कार्यों के निर्वहन के लिये उन्होंने स्वयं के एक ट्रस्ट "ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट" की स्थापना की थी। शोध छात्रों को मार्गदर्शन प्रदान करने में वह सदैव ही तत्पर रहते और कितने ही छात्रों ने अपने शोध कार्य में उनका मार्गदर्शन एवं सहायता प्राप्त की।

लेखन : जब वह विद्यार्थी ही थे, पं दरबारी लाल न्यायतीर्थ (सत्यभक्) के सर्वज्ञता खंडन विषयक "जैन जगत" में प्रकाशित लेखमाला के विरोध में "जैन मित्र" में "जैन धर्म के मर्म की अनोखी सर्वज्ञता" सर्वप्रथम मुद्रित लेख, 14 अक्टूबर, 1933 ई. को प्रकाशित हुआ। 'भगवान शीतल नाथ की जन्म भूमि भद्दलपुर (भेल्सा)' 2 मार्च, 1938 ई. को 'वीर' में प्रकाशित हुआ।

उनके एक सहस्त्र से भी अधिक लेख तथा शोध पत्र हिन्दी और अंग्रेजी में, भारत में और विदेशों में प्रकाशित हुए, आकाशवाणी और दूरदर्शन से प्रसारण किये गये। उन्होंने 80 से भी अधिक पुस्तकों का प्रणयन किया, जिनमें से कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। सन् 1954 से 1983 तक 'जैन संदेश' के शोधकांक उन्होंने सम्पादन किया और 51 शोधांक प्रकाशित किये। वह 'भारतीय ज्ञानपीठ' के प्रकाशनों यथा 'भारतीय ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी ग्रंथमाला' के सम्पादक रहे। The Jaina Antiquary, जैन सिद्धान्त भास्कर, अनेकान्त, वीर, The Voice of Ahinsa आदि अनेक जैन पत्र–पत्रिकाओं के सम्पादक रहे तथा उनके सम्पादकत्व एवं निर्देशन में लखनऊ से एक चातुर्मासिक शोध–पत्रिका 'शोधादर्श' का प्रकाशन भी प्रारंभ किया गया।

प्रमुख कृतियां :

The Jaina Sources of the History of Ancient India, 100. B.C. - 900 A.D. : सन् 1964 में प्रकाशित प्राचीन भारतीय इतिहास के जैन स्त्रोतों पर उनका अकेला प्रामाणिक ग्रन्थ है और विद्वत् जगत में इसका प्रभूत समादर किया गया। इसका द्वितीय संस्करण मुंशीराम मनोहरलाल प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा सन् 2006 में प्रकाशित किया गया। पुस्तक का संदर्भ Bulletin of the School of Oriental andAfrican Studies/VoL-29/Issue-3/ October 1966 में दिया गया। पुनः संदर्भ Cambridge University Press द्वारा 24 दिसंबर, 2009 **को** www.cambridge.org वेबसाइट पर आनलाइन प्रकाशित किया गया।

भारतीय इतिहास : एक दृष्टि : उनका दूसरा महत्वपूर्ण ग्रन्थ है जो भारतीय इतिहास के अध्ययन को दक्षिण भारत के प्रति और बौद्ध एवं ब्राह्मणीय स्त्रोतों के अतिरिक्त अन्य स्त्रोतों के प्रति न्याय करके नया आयाम प्रदान करता है। इसके दो संस्करण क्रमशः सन् 1961 एवं 1966 में प्रकाशित हुए। इसका एक और संस्करण भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन द्वारा सन् 2004 में प्रकाशित किया गया।

Religion and Culture of the Jains : जैनों के धर्म एवं संस्कृति पर उनकी यह पुस्तक बहुत ही लोकप्रिय हुयी और इसके चार संस्करण क्रमशः सन् 1975, 1977, 1983 एवं 1999 में प्रकाशित हुए। इसका अन्य संस्करण भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली द्वारा सन् 2010 में प्रकाशित किया गया।

जैन–ज्योति : ऐतिहासिक व्यक्तिकोश प्रथम खंड (अ से अं) : यह पुस्तक मरणोपरांत उनके सुपुत्रों डॉ. शशि कान्त और श्री रमा कान्त द्वारा उनकी इच्छानुसार वीर शासन जयन्ती (30 जुलाई, 1988 ई.) को प्रकाशित की गई। यह पुस्तक वह अपने जीवन काल में ही लगभग पूरी कर चुके थे और इसका आमुख मृत्यु से मात्र 8 दिन पूर्व 3 जून, 1988 ई. को लिखा था। परिशिष्ट में कुछ कार्य अपूर्ण था जिसे उनके सुपुत्रों ने उनके द्वारा कागज की चिटों पर छोड़े गये संकेत सूत्रों के आधार पर पूरा किया था। (प्रकाशक : ज्ञानदीप प्रकाशन, ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ– 226004 (उ.प्र.)

Jainism-The Oldest Religion (प्रथम संस्करण, 1951) प्रकाशक–Jain Culture Research Society, Benares; द्वितीय संस्करण, 1988, प्रकाशक–Parshwanath Vidyapeeth Research Institute, Varanasi), हस्तिनापुर (1955), प्रकाशित जैन साहित्य (प्रस्तावना तथा सम्पादन–1958), Jainism through the Age, तीर्थंकरों का सर्वोदय मार्ग (1974), प्रमुख ऐतिहासिक जैन पुरुष और महिलायें (1975, द्वितीय एवं तृतीय संस्करण भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन द्वारा सन् 2000 एवं 2017 में प्रकाशित) भगवान महावीर स्मृति ग्रन्थ (सम्पादन–1975), आदितीर्थ आयोध्या (1979), Bhagwan Mahavira : Life, Time and Teachings (1983), युगों–युगों में जैन धर्म, आदि अनेकों उनकी महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं। उनकी कुछ कृतियों का अन्य भाषाओं यथा गुजराती, फ्रेंच इत्यादि में अनुवाद भी हुआ है।

डॉ. जैन की कृतियों की एक संदर्भ सूची फरवरी 1979 में **'डॉ. ज्योति प्रसाद जैन कृतित्व परिचय'** पुस्तक में प्रकाशित की गयी थी और पंचवर्षीय अनुपूरक सन् 1984 में प्रकाशित किया गया था। 6 फरवरी, 1987 ई., को उनके अमृत महोत्सव पर प्रकाशित **'पुष्पांजलि'** में एक अर्धशताब्दी से अधिक के उनके कृतित्व की समीक्षा की गयी है।

Religion and Culture of the Jains, The Jaina Sources of the History of Ancient India, Jainism-The Oldest Religion, भारतीय इतिहास : एक दृष्टि, प्रमुख ऐतिहासिक जैन पुरुष और महिलायें आदि पुस्तकें आनलाइन

विभिन्न वेबसाइट जैसे www.amazon.in www.exoticindiaart.com, https://books.google.co.in, *www.pustak.org इत्यादि पर भी क्रय एवं संदर्भ हेतु उपलब्ध हैं।*

"शोधादर्श" का उदय :

डॉ. ज्योति प्रसाद जी समाज एवं साधु–वर्ग में शिथिलाचार रोकने के लिए अपने विचार निर्भीकता पूर्वक व्यक्त करते थे। सन् 1981 में श्रवणबेलगोला में भगवान गोम्मटेश बाहुबलीजी का महामस्तकाभिषेक धूम–धाम से सम्पन्न हुआ था। वहाँ धन और धनिकों को प्रशंसा और सम्मान दिये जाने की प्रभावना हुई थी। साधु–वर्ग में बढ़ते हुये शिथिलाचार की चर्चा करने वालों को मुनि–निन्दक की पदवी दी जाने लगी थी और उन्हें नरक–निगोद में जाने का फतवा दिया जाने लगा था। पूजा–प्रतिष्ठा और पंचकल्याणकों में अनावश्यक आडम्बर एवं विकृतियाँ तथा भौंडे ढोंग् प्रवेश कर गये थे। और भी अनेक विकृतियाँ समाज में स्पष्ट दिखाई दे रही थीं, किन्तु उनको प्रकट करने वालों का अभाव था। डॉ. साहब ने निर्भीकता पूर्वक, "समाज के सामने चुनौती" नामक आलेख लिख कर वीर, जैन सन्देश, और जैन गजट में प्रकाशनार्थ भेजा। किन्तु ये पत्र उस आलेख को प्रकाशित करने का साहस नहीं जुटा पाये। डॉ. साहब को इस बात का दुःख/पीड़ा हुयी कि समाज में कोई ऐसी पत्र–पत्रिका नहीं है जो सेठ और साधुओं के प्रभाव से मुक्त हो।

इस पीड़ा को दूर करने हेतु डॉ. साहब द्वारा तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के तत्वावधान में जैन विद्या की शोध एवं सामाजिक तथा धार्मिक मूल्यों के उन्नयन के लिये समर्पित चातुर्मासिक शोध–पत्रिका "शोधादर्श" का प्रकाशन फरवरी 1986 में प्रथम अंक से प्रारंभ किया। वो इसके आद्य–सम्पादक थे। जून 1988 में उनके स्वर्गवास तक 6 अंक उनके प्रधान सम्पादकत्व में प्रकाशित हुए। वर्तमान में 89 अंक प्रकाशित किये जा चुके हैं और पत्रिका अपने मूल्यों के प्रति सदा प्रतिबद्ध रही है।

सम्मान :

भारतीय इतिहास और संस्कृति तथा इतिहास के जैन स्त्रोत और जैन धर्म पर डॉ. जैन एक अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के अधिकारी विद्वान थे। एक विद्वान के रूप में गहन, एक शोधक के रूप में वस्तुपरक और चिन्तक के रूप में प्रगतिशील परन्तु पारम्परिक दृष्टिकोण से विच्छिन्न नहीं, ज्ञान के कोष में डॉ. जैन का योगदान बहुतों के लिए स्पृहा अपितु प्रेरणा का स्त्रोत है।

सार्वजनिक सम्मान से सामान्यतः उन्हें संकोच था। तदपि भारतीय विद्या के क्षेत्र में उनके विद्वत्तापूर्ण योगदान के लिये 7 फरवरी, 1957 ई., को लखनऊ में श्री जैनधर्म प्रवर्द्धिनी सभा द्वारा उनका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। पुनः अखिल विश्व जैन मिशन के भोपाल अधिवेशन में **"इतिहास–रत्न"** की मानद उपाधि से उनका 29 अप्रैल, 1958 ई., को सम्मान किया गया और सन् 1974 में श्री वीर निर्वाण भारती द्वारा मेरठ में उनको **"विद्यावारिधि"** की उपाधि से सुशोभित किया गया। सन् 1979 में अनंत–ज्योति विद्यापीठ, लखनऊ द्वारा उनका उत्कृष्ट इतिहासज्ञ के रूप में विशेष सम्मान किया गया और **"इतिहास–मनीषी"** की उपाधि से अलंकृत किया गया। 14 दिसम्बर, 1986 ई., को दिल्ली में अहिंसा इन्टरनेशनल द्वारा उन्हें डिप्टीमल जैन पुरस्कार से सम्मानित किया गया और वह अहिंसा इन्टरनेशनल एवार्ड के प्रथम प्राप्तकर्ता थे।

अंत समय :

अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिलब्ध इतिहासविद्, शोधकर्ता, लेखक, निष्पक्ष एवं निर्भीक संपादक, ओजस्वी वक्ता और समाज सुधारक डॉ. ज्योति प्रसाद जी 11 जून, 1988 ई. को देह बंधन से मुक्त हुए।

(नोटः उपर्युक्त आलेख डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की हस्तलिखित पाण्डुलिपि **'वंश परिचय और आत्म चरित्र'** तथा समय–समय पर प्रकाशित शोधादर्श के विभिन्न अंको में उनके सुपुत्रों डॉ. शशि कान्त और श्री रमा कान्त द्वारा दिये गये सन्दर्भ तथा वर्णन एवं अन्य उपलब्ध विषय सामग्री पर आधारित है।

सन् 1933 में डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ने 'वंश परिचय और आत्म चरित्र' लिखना प्रारंभ किया था और 6 फरवरी, 1942 ई. तक लिखा जो हस्तलिखित है। डॉ. जैन ने 6 फरवरी, 1942 ई. को पाण्डुलिपि को समाप्त करते हुए लिखा था–

'ता0 6 फ़र्वरी 1942 को हमारी आयु तीस वर्ष की हो गई और अंदाज़ आयु हमारी अधिक से अधिक साठ वर्ष की है। आधी उम्र की जद्दोजहद लिख दी। बाक़ी उम्र में अब क्या होता है सो देखिए।

इति वंश इतिहास तथा अर्ध आत्म चरित्र

–ज्योति प्रसाद जैन

6-2-1942')

डॉ. शशि कान्त जैन – जीवन परिचय, व्यक्तित्व एवं कृतित्व

– श्री राजीव कान्त जैन

जन्म एवं बाल्यकाल : भारतीय इतिहास के मर्मज्ञ विद्वान कीर्ति–शेष 'विद्यावारिधि' 'इतिहास–मनीषी' डॉ. ज्योति प्रसाद जैन और श्रीमती अनन्तमाला जैन के ज्येष्ठ पुत्र डा. शशि कान्त का जन्म उत्तर प्रदेश के मेरठ नगर में 12 फरवरी, 1932 ई., शुक्रवार, सायंकाल 5.12 बजे हुआ था। आप प्रथम पुत्र संतान और लाला जी (पारस दास) के प्रथम पौत्र थे।

सन् 1937 में बसंत पंचमी के दिन शिक्षा प्रारंभ हुई। प्रारंभिक शिक्षा मेरठ नगर के मोहल्ला तीरगरान के दिगम्बर जैन मंदिर की पाठशाला में पं. राम जी के शिक्षण में हुई। रतन आपकी प्रखर मेधा और कुशाग्र बुद्धि का बोध बाल्यकाल से ही होने लगा था। सन् 1939–40 में तीसरी कक्षा प्रथम श्रेणी में पास हुये और कक्षा में भी प्रथम आये। सन् 1940–41 में चौथी कक्षा में भी कक्षा में प्रथम आये थे।

शैक्षिक पृष्ठभूमि (उत्कृष्ट शैक्षणिक वृत्त) : हमारा परिवार मध्यमवर्गीय संभ्रान्त परिवार है। मेरठ में जैन समुदाय में आधुनिक शिक्षा अपनाने वालों में हमारा परिवार सर्वप्रथम था। पड़–बाबा स्वर्गीय पारस दास जैन गवर्नमेंट हाई स्कूल से सन् 1915 में मैट्रीकुलेट करने वाले प्रथम जैन थे। हमारे बाबाजी डॉ. ज्योति प्रसाद सन् 1936 में एम.ए. एवं एल–एल.बी. करने वाले प्रथम जैन थे। हमारे छोटे बाबा जी श्री अजित प्रसाद जैन ने भी सन् 1936 में बी.ए. किया था। यद्यपि पड़–बाबा ने इन्कमटैक्स विभाग में नौकरी की थी किन्तु बाबा जी ने तब सरकारी नौकरी नहीं की क्योंकि वे विदेशी ब्रिटिश शासन में नौकरी करने के लिए इच्छुक नहीं थे। वो अपने शिक्षण काल के दौरान कांग्रेस सेवादल से संबद्ध रहे थे और उन्होंने स्वयं को अपने समुदाय एवं देश को जागृत करने के लिये समर्पित किया।

पिता जी का जन्म सन् 1932 में हुआ था। सन् 1932 से 1947 का काल देश में फैल रही स्वतंत्रता की भावना के लिये विशेषतः उल्लेखनीय है। यद्यपि आम जनता सामान्यतः सीधे तौर पर विदेशी शासन का विरोध अथवा उसे उखाड़ फेंकने के लिये प्रयत्नशील नहीं थी लेकिन उनकी सामान्य सोच यही थी कि विदेशी शासन समाप्त होना चाहिए। पिताजी ने बचपन से यह अनुभव किया था कि शिक्षित मध्यम वर्ग में एक प्रकार की जागृति हो रही थी कि उन पर विदेशी शासन के आदेश थोपे न जायें। खुले विचारों वाले लोग

अपने बच्चों की शिक्षा के लिए सरकारी अथवा मिशन द्वारा चलाये जा रहे शिक्षण संस्थाओं के बजाय समाज द्वारा चलाये जा रहे शिक्षण संस्थानों को वरीयता देते थे। सन् 1942 में लखनऊ शिफ्ट होने पर बाबा जी ने इसी भावना के रहते पिता जी को गवर्नमेंट जुबली इंटर कॉलेज के बजाय डी. ए. वी. इंटर कॉलेज में भेजना उचित समझा जहाँ कक्षा 6 में उन्होंने प्रवेश लिया।

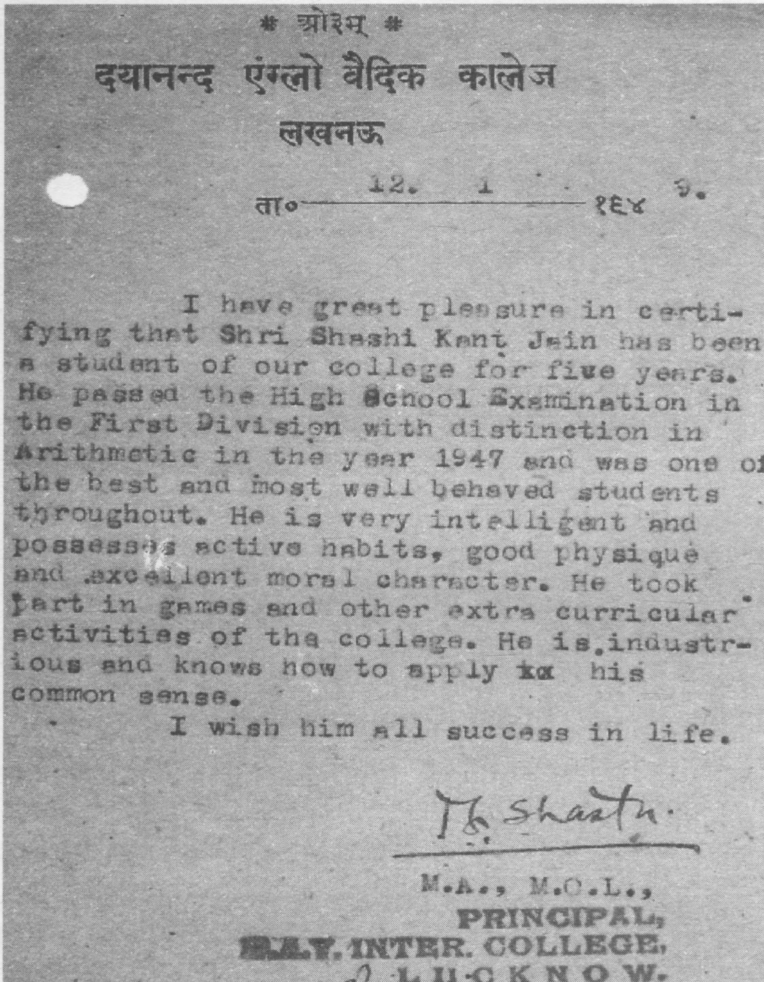

* ओ३म् *

दयानन्द एंग्लो वैदिक कालेज

लखनऊ

ता० 12. 1 १९४ 9.

I have great pleasure in certifying that Shri Shashi Kant Jain has been a student of our college for five years. He passed the High School Examination in the First Division with distinction in Arithmetic in the year 1947 and was one of the best and most well behaved students throughout. He is very intelligent and possesses active habits, good physique and excellent moral character. He took part in games and other extra curricular activities of the college. He is industrious and knows how to apply ~~kx~~ his common sense.

I wish him all success in life.

M.A., M.O.L.,
PRINCIPAL,
D.A.V. INTER. COLLEGE,
LUCKNOW.

'Board of High School and Intermediate Education, United Provinces' के अन्तर्गत सन् 1947 में हाई स्कूल परीक्षा **अंकगणित में विशेष योग्यता (Distinction) के साथ प्रथम श्रेणी** में उत्तीर्ण की। उन दिनों प्रायः स्कूल में दाखिले के समय जन्म–तिथि जुलाई अथवा जनवरी लिखा दी जाती थी। हाई स्कूल परीक्षा प्रमाणपत्र के अनुसार जन्म–तिथि 01 जुलाई, 1932 ई.

दैनिक एवं सेवा कार्यों के निर्वहन में प्रयुक्त रही। इंटरमीडिएट तक यहाँ शिक्षा ग्रहण की।

लखनऊ विश्वविद्यालय से सन् 1949 से 1953 तक शिक्षा ग्रहण की। सन् 1949 में आचार्य नरेन्द्र देव विश्वविद्यालय के कुलपति नियुक्त हुये। नयी–नयी मिली देश को आज़ादी के सम्मान मे उन्होंने शिक्षा के लिये हिंदी माध्यम के विकल्प की भी अनुमति दी। वातावरण में स्वतंत्रता की भावना थी। उसके अनुरूप पिता जी ने हिंदी माध्यम का विकल्प चुना यद्यपि अंग्रेजी भाषा पर भी समान अधिकार था। यह एक मुश्किल काम था क्योंकि उस समय सभी विषयों की किताबें अंग्रेजी में होती थीं और अध्यापन कार्य भी अंग्रेजी में होता था। बी.ए. एवं बी.ए. (ऑनर्स) में आपके विषय इतिहास, राजनीति शास्त्र, हिंदी और General English थे। इतिहास एम.ए. में विषय था। उनके अध्यापक श्री एस. सी. दूबे जो कि श्री कुंजी लाल दूबे, स्पीकर, मध्य प्रदेश विधान सभा के पुत्र थे, पिताजी के हिंदी में राजनीति शास्त्र की परीक्षा देने से बहुत प्रभावित हुये थे। बी.ए. सन् 1951 में किया। सन् 1952 में बी.ए. आनर्स (इतिहास) में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर उन्हें **सर श्री निवास वर्दाचारियर स्वर्ण पदक** से सम्मानित किया गया था और **डॉ. राधा कुमुद मुकर्जी एन्डाउमेंट स्कॉलरशिप** भी एम.ए. में प्रदान की गई थी। सन् 1953 में उन्होंने इतिहास विषय में एम.ए. **प्रथम श्रेणी** में उत्तीर्ण किया तथा रूसी भाषा में डिप्लोमा भी उसी वर्ष विशेष योग्यता के साथ उत्तीर्ण किया।

K. D. TEWARI, M.A., LL.B.
REGISTRAR
LUCKNOW UNIVERSITY
LUCKNOW

UNIVERSITY OF LUCKNOW

PHONE No. 3138
TELEGRAPHIC ADDRESS
"UNIVERSITY"
LUCKNOW.

August 3, 1953.

Certified that Shashi Kant Jain son of Sri Jyoti Prasad Jain was awarded "Sir Sri Nivasa Varadachariar Gold Medal" at the annual convocation held on Dec. 27, 1952 for being the best B.A. Honours student in Ancient Indian History for the year 1952.

Registrar,
Lucknow University,
LUCKNOW.

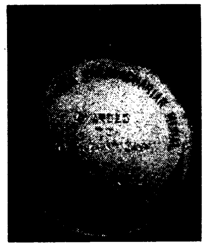

स्वर्ण पदक

अग्र भाग पृष्ठ भाग

डॉ. जैन को **'डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी' (पी–एच.डी.)** की उपाधि सन् 1969 में लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान की गई और उनके शोध–प्रबन्ध 'हिस्ट्री ऑफ वत्स' को अति–उत्कृष्ट स्वीकार कर विश्वविद्यालय एक्जीक्यूटिव काउंसिल द्वारा **अपवाद स्वरूप उन्हें मौखिक परीक्षा से अवमुक्त** किया गया था।

I.A.S. तथा I.F.S. की पात्रता : पिताजी की आन्तरिक इच्छा I.A.S. तथा I.F.S. परीक्षा को पास कर देश सेवा करना था। इसलिये उन्होंने एम.ए. के साथ–साथ रूसी भाषा जो कि बहुत कठिन भाषा है, की भी पढ़ाई की थी। इसी उद्देश्य को ध्यान रखते हुये उन्होंने नेशनल कैडेट कोर (एन. सी.सी.) में भी भाग लिया था। (रूसी भाषा की दुरुहता का अंदाज इस दिलचस्प तथ्य से प्रकट होता है कि सन् 1953 और 1954 में आयोजित आई. ए.एस. और आई.एफ.एस. प्रतियोगी परीक्षा में साक्षात्कार के लिये जितने भी उम्मीदवार बुलाये गये थे उनमें से इनके अतिरिक्त किसी और ने इस भाषा का विकल्प नहीं चुना था।)

यूनियन पब्लिक सर्विस कमीशन द्वारा आयोजित प्रतियोगी परीक्षा 'Indian Administrative Service etc., Examination' कहलाती थी और उसका प्रारूप आज से अलग होता था। 150–150 अंक के तीन विषय– English Essay, General English, एवं General Knowledge अनिवार्य थे और 200–200 अंक के तीन वैकल्पिक विषय चयन करने होते थे। इसके अलावा I.A.S. तथा I.F.S. परीक्षा में पात्रता के लिए 200–200 अंक के दो अतिरिक्त विषय और लेने होते थे। लिखित परीक्षा में चयनित होने पर व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test) के लिये 400 अंक का साक्षात्कार होता था जिसमें अलग से भी न्यूनतम अर्हक अंक (Minimum Qualifying marks) प्राप्त करना आवश्यक होता था। I.A.S. एवं I.F.S. के साक्षात्कार तथा अंतिम चयन की सूची और

Central Services के साक्षात्कार तथा अंतिम चयन की सूची अलग–अलग जारी की जाती थीं। I.P.S. भी इसी परीक्षा द्वारा चयन किये जाते थे पर चयन प्रक्रिया का प्रारूप कुछ अलग था। प्रबुद्ध वर्ग तब इस सेवा को कम ऑप्ट (opt) करते थे। पिताजी ने इस सर्विस को कभी ऑप्ट नहीं किया था अतः इसकी चयन प्रक्रिया का ज्यादा ज्ञान नहीं है।

इंडियन एडमिनिस्ट्रेटिव सर्विस प्रतियोगी परीक्षा के लिए प्रथम प्रयास में ही लिखित परीक्षा एवं व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test) में सन् 1953 में अर्हता प्राप्त की। उनका अखिल भारतीय स्तर पर वरीयता क्रम में 97वां स्थान था किन्तु I.A.S. एवं I.F.S. की कुल 53 रिक्तियाँ ही थीं। Central Services में व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test) के लिये उनकी पात्रता मानी नहीं गयी।

अगले वर्ष सन् 1954 में इंडियन एडमिनिस्ट्रेटिव सर्विस प्रतियोगी परीक्षा के लिए द्वितीय प्रयास में लिखित परीक्षा में उनका प्रदर्शन और बेहतर हुआ। उनके प्रत्येक विषय में अंक व कुल अंक I.A.S.एवं I.F.S की पात्रता के लिये उस वर्ष आवश्यक न्यूनतम अर्हक अंक (Minimum Qualifying marks) से बहुत अधिक थे किन्तु इस बार उन्हें केवल Central Services में व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test) के लिये बुलाया गया।

उनके लिखित परीक्षा में कुल 738 अंक थे जब कि I.A.S. एवं I.F.S. की पात्रता के लिये साक्षात्कार के लिये सामान्य संवर्ग में 679 अंक तक अभ्यर्थी बुलाये गये थे और इस संवर्ग में कुल चयनित 63 लोगों की सूची में कम से कम पाँच लोग ऐसे थे जिनके लिखित परीक्षा में कुल अंक 738 अंक से कम थे –(रैंक 39–716 अंक, रैंक 40 एवं 45–733 अंक, रैंक 52–692 अंक, रैंक 54–701 अंक)। Central Services के व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Test) में भी उन्हें मात्र एक प्वाइंट कम दिया गया जिसके कारण साक्षात्कार के लिये आवश्यक न्यूनतम अर्हक 105 अंक के स्थान पर 90 अंक प्राप्त हुए और उनका चयन नहीं हुआ यद्यपि तब भी कुल प्राप्त अंक सामान्य संवर्ग में कुल चयनित 151 लोगों की सूची में रैंक–136 द्वारा प्राप्त अंकों के बराबर थे। यहाँ गौर करने की बात ये है कि एक वर्ष पूर्व ही उन्होंने I.A.S. एवं I.F.S. की पात्रता के लिये साक्षात्कार दिया था और उन्हें न्यूनतम अर्हक अंक से अधिक अंक मिले थे तथा सामान्य संवर्ग में कुल चयनित 53 लोगों की सूची में कम से कम पन्द्रह लोगों को साक्षात्कार में उनके जितने अथवा उनसे

कम अंक मिले थे। अपने साथ हुए अन्याय के विरोध में उन्होंने कमीशन के तत्कालीन चेयरमैन श्री वी.एस. हेजमडी, आई सी एस, को संपूर्ण तथ्यों के साथ रिप्रजेंट किया था। कमीशन ने जवाब दिया जिसका आशय था कि ये कमीशन के विवेकाधीन है कि साक्षात्कार के लिये वे किन्हें योग्य मानते हैं। यूनियन पब्लिक सर्विस कमीशन की इस स्वेच्छाचारिता तथा विवेकाधीन शक्तियों (discretionary power) के दुरुपयोग का तब उन्होंने समाचार पत्रों द्वारा पुरजोर विरोध किया था। वे न्यायालय क्यों नहीं गये यह कभी मैंने पूछा नहीं। संभवतः तब इन सब कारणों से न्यायालय जाने का चलन नही था, आर्थिक स्थिति भी ऐसी नहीं थी। पिताजी को अपने प्रति हुए इस अन्याय का आजीवन रंज रहा। तथापि जीवन चलने का नाम है और प्रारब्ध से परे हममें से कोई नहीं।

शासकीय सेवा : पब्लिक सर्विस कमीशन, उत्तर प्रदेश द्वारा सन् 1952 में ली गयी प्रतियोगी परीक्षा के आधार पर डॉ. शशि कान्त जैन ने 1 अप्रैल, 1953 को उत्तर प्रदेश सचिवालय में सेवा प्रारम्भ की। सन् 1954 में कमीशन द्वारा अपर डिवीजन एसिस्टेंट्स की नियुक्ति के लिए आयोजित प्रतियोगी परीक्षा में उन्होंने प्रथम प्रयास में ही टॉप किया।

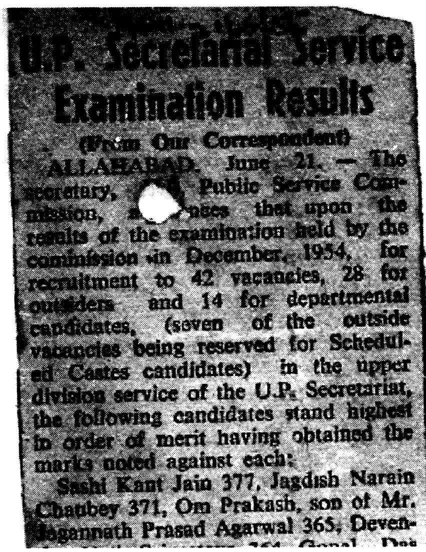

U.P. Secretariat Service Examination Results

(From Our Correspondent)

ALLAHABAD, June 21. — The secretary, Public Service Commission, a[illegible]nces that upon the results of the examination held by the commission in December, 1954, for recruitment to 42 vacancies, 28 for outsiders and 14 for departmental candidates, (seven of the outside vacancies being reserved for Scheduled Castes candidates) in the upper division service of the U.P. Secretariat, the following candidates stand highest in order of merit having obtained the marks noted against each:

Sashi Kant Jain 377, Jagdish Narain Chaubey 371, Om Prakash, son of Mr. Jagannath Prasad Agarwal 365, Deven-

डॉ. जैन ने नवम्बर 1963 से सितम्बर 1971 तक सहायक अधीक्षक के पद पर, 1 अक्टूबर 1971 से 5 मार्च 1981 तक अनुभाग अधिकारी के पद पर, 6 मार्च 1981 से 15 अप्रैल 1984 तक अनुसचिव के पद पर, 16 अप्रैल 1984 से 4 जनवरी 1987 तक उपसचिव के पद पर, 5 जनवरी 1987 से 31 जुलाई 1989 तक संयुक्त सचिव के पद पर और 1 अगस्त 1989 से 30 जून 1990 तक विशेष सचिव के पद पर कार्य किया। 30 जून 1990 को वे उत्तर प्रदेश शासन में विशेष सचिव के पद से सेवानिवृत्त हुए। वह जन–जाति कल्याण के निदेशक और तराई अनुसूचित जनजाति निगम के प्रबंध निदेशक (मैनेजिंग डायरेक्टर) भी रहे।

सचिवालय सेवा अधिकारियों के लिए **'विशेष सचिव'** के पद के सृजन में डॉ. जैन की महत्वपूर्ण भूमिका रही। सन् 1986 में वित्त विभाग में उपसचिव के पद पर कार्य करते हुए वित्त सचिव डा. जनार्दन प्रसाद सिंह के सहयोग से विशेष सचिव का एक पद सृजित कराया जा सका और इस पद पर 1953 बैच के श्री सुरेन्द्र चन्द्र जैन की नियुक्ति सन् 1987 में हुई। श्री सुरेन्द्र चन्द्र जैन के 31 दिसंबर, 1987 ई. को सेवानिवृत्त होने पर उन्हीं के बैच के श्री सतीश चन्द्र श्रीवास्तव की 1 जनवरी, 1988 ई. को नियुक्ति की गई। श्री श्रीवास्तव को नियमों का अनदेखा करके 31 दिसंबर, 1988 ई. को सेवानिवृत्ति के बाद सेवा–विस्तार दे दिया गया जिससे डॉ. जैन की पदोन्नति में बाधा उपस्थित हुई। 1954 के बैच के डॉ. जैन पात्रता क्रम में वरिष्ठतम थे। शक्तिमद में चूर मुख्यमंत्री की सेवानिवृत्त अधिकारियों को सेवा–विस्तार अथवा पुनर्नियुक्त कर प्रशासन के सेवारत अधिकारियों को हतोत्साहित करने की प्रवृत्ति का आपने पुरजोर विरोध किया। काफी संघर्ष के बाद डॉ. जैन की विशेष सचिव के पद पर 1 अगस्त, 1989 ई. से पदोन्नति हुई।

उत्कृष्ट सेवा वृत्त : सरकारी कार्य के अतिरिक्त उत्कृष्ट बौद्धिक कार्य के लिए शासन द्वारा प्रारंभ किये गये सम्मान कार्यक्रम के प्रथम बैच में **2 अक्टूबर, 1972 ई. को तत्कालीन मुख्य मंत्री, उत्तर प्रदेश, पं. कमलापति त्रिपाठी द्वारा सम्मानित** किये गये।

सन् 1974 में शासन द्वारा गठित चयन समिति जिसमें श्री गुलाम हुसैन आई.ए.एस. अध्यक्ष तथा कु. कुसुमलता मित्तल आई.ए.एस. एवं श्री एस. बी. माथुर (सदस्य, पब्लिक सर्विस कमीशन, यू.पी.) सदस्य थे, द्वारा डॉ. जैन को अनुभाग अधिकारी के पद पर नियुक्ति के लिए 'ए' श्रेणी में चयनित किया गया।

जनवरी 1990 में डॉ. जैन को "उत्तर प्रदेश सचिवालय सेवा अधिकारी संघ" का अध्यक्ष सर्वसम्मति से निर्वाचित किया गया। अपने संवर्ग में वह वरिष्ठतम थे। सेवानिवृत्ति के दिन ही डॉ. जैन ने अपना पदभार संघ के सचिव को सौंप दिया था।

सेवानिवृत्ति से एक सप्ताह पहले 23 जून, सन् 1990 ई. को डॉ. जैन ने "उत्तर प्रदेश सचिवालय सेवा अधिकारी संघ" के तत्वावधान में सन् 1980 तक सेवानिवृत्त हो गये सचिवालय सेवा के 63 अधिकारियों का सम्मान समारोह भी आयोजित किया था। इस प्रकार का आयोजन उत्तर प्रदेश सचिवालय के इतिहास में पहला था।

उत्तर प्रदेश सचिवालय पेन्शनर्स वेल्फेयर एसोसियेशन के 22 नवम्बर, 2018 ई. को सम्पन्न वार्षिक अधिवेशन में **'पेशनर्स शिरोमणि'** की उपाधि से डॉ. शशि कान्त जैन को विभूषित किया गया।

वे अपने सेवा काल के दौरान एक कर्मनिष्ठ, सत्यनिष्ठ, ईमानदार एवं कुशल सरकारी कर्मी रहे तथा सदा उनके वरिष्ठ कर्मियों द्वारा उनका मूल्यांकन उत्कृष्ट रहा। ईमानदारी के सन्दर्भ में मेरे बाल्यकाल के समय की एक घटना मुझे स्मरण आती है जब पिता जी की अनुपस्थिति में कोई सज्जन घर में कुछ फल–फूल रख गये थे। पिता जी बहुत नाराज हुए और तुरन्त मनीआर्डर द्वारा उसका मूल्य भिजवा दिया था। ये संतोष की बात है कि उनकी संतति में भी उनके गुण विद्यमान हैं।

सुखद दाम्पत्य जीवन : डॉ. शशि कान्त जैन का परिणय श्री रतन चन्द्र जैन एवं श्रीमती विद्यावती जैन, निवासी आरा (जिला भोजपुर, बिहार) की कनिष्ठ सुपुत्री मंजरी से 27 नवम्बर, 1953 ई. को सम्पन्न हुआ। श्वसुर श्री रतन चन्द जैन जमींदार घराने से थे, बी.ए. तक पढ़े थे और उनके आइसक्रीम फैक्टरी, आटाचक्की एवं रूई धुनाई के व्यवसाय थे। सास श्रीमती विद्यावती एक धर्मपरायण महिला थीं। उनकी दो संतानें थीं। ज्येष्ठ सुपुत्री शारदा का विवाह दरियाबाद, जिला बाराबंकी के व्यवसायी श्री माया प्रकाश जैन से हुआ था।

धर्मपत्नी मंजरी जैन का जन्म 11 जनवरी, 1938 ई. को हुआ था। आपने स्वतंत्र रूप से बिहार विद्यालय परीक्षा समिति द्वारा आयोजित फरवरी, 1953 की **'माध्यमिक'** परीक्षा उत्तीर्ण की तथा आपको हिन्दी–विश्वविद्यालय संवत 2010 विक्रमाब्द की हिन्दी **'मध्यमा'** परीक्षा उत्तीर्ण करने पर हिन्दी–साहित्य–सम्मेलन, प्रयाग द्वारा **'विशारद'** की उपाधि प्रदान की गयी।

श्रीमती मंजरी जैन का मानना था कि "यह आवश्यक है कि नारी को एक ऐसी मर्यादा प्रदान की जाये जिसमें उसे समानता का स्तर सहज ही मिल जाये और वह किसी हीन भावना से अपने को ग्रसित न होने दे। आवश्यकता यह है कि वह अबला और आश्रिता न रहे, यह आवश्यक नहीं है कि वह सबला और स्वामिनी हो जाये। "नारी की मर्यादा" के सम्बन्ध में ये विचार उन्होंने 29 अक्टूबर, 1975 ई. को भगवान महावीर के 2500वें निर्वाण महोत्सव के उपलक्ष में "भारतीय संस्कृति में जैन विचारधारा" विषयक संगोष्ठी में व्यक्त किये थे, इनको उन्होंने अपने जीवन में जिया भी। उन्होंने सन् 1970 से 1998 तक बच्चों के विद्यालय 'कान्त बाल केन्द्र' जो कक्षा 5 तक था, का

कुशलतापूर्वक संचालन किया और वो विद्यालय की प्रधानाध्यापिका रहीं। *("नारी की मर्यादा" लेख शोधादर्श के अंक 86 में प्रकाशित भी हुआ है।)*

मताजी व पिताजी हर सुख–दुख, धूप–छाँव में सदा एक दूसरे की छाया की तरह साथ रहे। माताजी सदा पिताजी का संबल रहीं। अपनी सास सौ. अनन्त माला और श्वसुर डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के प्रति आदर और समर्पित सेवाभाव उनकी सन्तान के लिए प्रेरणास्पद रहा। सभी पारिवारिक सम्बन्धों का स्नेह और सद्भावपूर्वक निर्वहन उन्होंने किया, अपने चचिया श्वसुर श्री अजित प्रसाद जैन और देवर रमा कान्त की वह विशेष आदर एवं स्नेह की पात्र रहीं।

हम बच्चे माता जी को 'मम्मी' और पिता जी को 'पापा जी' कहते थे। 70 के दशक में गृहस्थी एवं विद्यालय के कार्यों एवं समय के बीच मम्मी का सामंजस्य और दोनों दायित्वों का सफल निर्वहन अनुकरणीय है। वो तड़के भोर में उठतीं, स्नान–ध्यान करतीं, रसोई पकातीं, हम बच्चों को स्कूल के लिये तैयार करतीं और 8.00 बजे स्कूल चलीं जातीं। घर–गृहस्थी एवं विद्यालय के सारे कार्य व दायित्व भली–भाँति निभाती थीं और इसके लिये उनके मन में कभी कोई तनाव नहीं दिखा। उन्होंने बचपन में मुझे व मेरी दोनों बहनों की सब्जी आदि बनाना सिखाया ताकि आपात परिस्थिति में मदद हो सके। पाक कला का ये ज्ञान विवाह–पूर्व अन्य शहरों में मेरी नौकरी की समय उपयोगी हुआ। उनकी हस्तशिल्प कला का भी मुझे स्मरण आता है। मेरे जन्म के समय उन्होंने कपड़े और रूई से बहुत सुंदर हाथी बनाये थे जो बहुत समय तक उन्होंने संभाल कर रखे थे। शास्त्रीय संगीत का उन्हें ज्ञान था और वो हारमोनियम वादन में भी निपुण थीं।

आपके तीन पुत्र और दो पुत्रियाँ हुए। सभी को सुशिक्षित और सुसंस्कारित किया। सभी सन्तान सुशिक्षित होने के साथ ही अपने–अपने व्यवसाय में सुनियोजित हैं। ज्येष्ठ पुत्र चि. शिरीष कान्त ने दयालबाग इन्जीनियरिंग कॉलेज, आगरा से इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग में ग्रेजुएशन किया और वह नगलामल शुगर मिल, मेरठ में मैनेजर के पद से सेवानिवृत्त हुये। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रागिनी जैन एक सुघड़ गृहिणी हैं और आरा, बिहार से हैं। द्वितीय पुत्र चि. नलिन कान्त ने बी.एस–सी., एल–एल.बी. तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद मुद्रण का अपना स्वतंत्र व्यवसाय स्थापित किया। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मोहिनी जैन एक सुघड़ गृहिणी हैं, बुटीक चलाती हैं और लखनऊ से ही हैं।

तृतीय पुत्र मैं (राजीव कान्त) ने हरकोर्ट बटलर टेक्नॉलिजकल इंस्टिट्यूट, कानपुर से इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग में बी.टैक. किया और अखिल भारतीय इंजीनियरिंग सेवा की प्रतियोगी परीक्षा में सफल हो कर रेलवे की सिगनल इंजीनियरिंग सेवा से जुड़ा तथा वर्तमान में रेल मंत्रालय के अन्तर्गत अनुसंधान अभिकल्प एवं मानक संगठन, लखनऊ में प्रधान कार्यकारी निदेशक के पद पर कार्यरत हूँ। पिताजी का मानना था कि आजादी के बाद देश के विकास में तकनीकी और स्वास्थ्य के पेशे से जुड़े लोगों की अहम भूमिका है। उनका मानना था कि इन शिक्षाओं में सरकार विशेष आर्थिक अनुदान (Subsidy) भी देती है अतः इंजीनियर एवं डॉक्टरों को अपने पेशे में ही अपने देश में कार्य करना चाहिए। वो इनके प्रशासनिक सेवाओं के लिये रुझान अथवा विदेश में नौकरी करने को उचित नहीं मानते थे। इसलिये उन्होंने मुझे भी इंजीनियरिंग करने के बाद केवल इंजीनियरिंग सर्विस के लिये ही प्रेरित किया था। मेरी धर्मपत्नी श्रीमती मधु जैन सेंट ऐग्निस लॉरेटो डे स्कूल, लखनऊ में शिक्षिका हैं, एक सुघड़ गृहिणी हैं और लखनऊ से हैं। ज्येष्ठ पुत्री आयु. अलका ने एम.ए., बी.एड. करने के बाद पी–एच.डी. की उपाधि भी अर्जित की तथा वह अध्यापन कार्य में लगी हैं, और उनके पति चि. अवधेश कुमार अग्रवाल एम.ए., एम.फिल., पी–एच.डी. हैं तथा नेहरु पोस्ट–ग्रेजुएट कॉलेज, ललितपुर, में प्रिंसिपल हैं। कनिष्ठ पुत्री आयु. शेफाली ने एम.ए., बी.एड. करने के बाद कम्प्यूटर में पोस्ट–ग्रेजुएट डिप्लोमा किया और उनके पति चि. अखिलेश चन्द्र मित्तल, बी.टैक., हैवल्स (इण्डिया) लि. में वाइस प्रसिडेंट के पद पर कार्यरत हैं।

उसके बाद तीसरी पीढ़ी में शिरीष कान्त के दोनों सुपुत्र शिशिर एवं मलय बी.टैक. हैं, बहुराष्ट्रीय कंपनियों में कार्यरत हैं, विवाहित हैं और सुचारू रूप से व्यवस्थित हैं। शिशिर की धर्मपत्नी सौ. खुशबू इंजीनियर हैं, पटना से हैं और मलय की धर्मपत्नी सौ. संचिता (कली) चार्टेड अकाउंटेंट हैं तथा आरा, बिहार से हैं। नलिन कान्त के ज्येष्ठ सुपुत्र अशीत चार्टेड अकाउंटेंट हैं और इनकी धर्म पत्नी सौ. शेफाली (शालू) एम.सी.ए. हैं और लखनऊ से ही हैं। कनिष्ठ पुत्री मेहा एम.ए., एम.फिल. है और पटना में ऑल इण्डिया इंस्टिट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज में प्रथम श्रेणी के पद पर कार्यरत है और विवाहित है। इनके पति चि. केशव इंजीनियर हैं और एक बहुराष्ट्रीय कंपनी में कार्यरत हैं। राजीव कान्त की ज्येष्ठ सुपुत्री डॉ. कु. तन्वी ने जवाहर लाल इंस्टिट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एण्ड रिसर्च (JIPMER), पुडुचेरी से एम.बी.बी.एस. का

शिक्षण और पोस्ट–ग्रेजुएट इंस्टिट्यूट ऑफ मेडिकल एजुकेशन एण्ड रिसर्च (PGI), चंडीगढ़ से एम.एस. (जनरल सर्जरी) का शिक्षण प्राप्त किया और वर्तमान में वहीं कार्यरत है। राजीव कान्त के कनिष्ठ पुत्र विभव ने बिड़ला इंस्टिट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी एण्ड साइंस, हैदराबाद से बी. टैक. किया है और वर्तमान में एक बहुराष्ट्रीय कंपनी में कार्यरत है।

अलका की सुपुत्री अनुभूति एम.टैक. है एवं कनिष्ठ सुपुत्री आरुषा बी. टैक. है और दोनों विवाहित हैं। आयु. अनुभूति के पति चि. प्रतीक जैन एम.बी. ए. हैं और आयु. आरुषा के पति चि. अभिनव गोयल इंजीनियर हैं और दोनों ही बहुराष्ट्रीय कंपनियों में कार्यरत हैं। शेफाली की सुपुत्री आकांक्षा बी.टैक., एम.बी.ए. है और इनके पति चि. विपुल गुप्ता भी बी.टैक. एवं एम.बी. ए. हैं तथा एक बहुराष्ट्रीय कंपनी में कार्यरत हैं। शेफाली की कनिष्ठ सुपुत्री कु. संचिता (सबसे छोटी नातिन) भी बी.टैक. है।

चौथी पीढ़ी में पौत्र शिशिर ने एक प्रपौत्री एवं पौत्र मलय ने एक प्रपौत्री तथा एक प्रपौत्र का उपहार दिया है। प्रपौत्र ऋशान (मलय के सुपुत्र) हमारे परिवार के नवीनतम सदस्य हैं और गत 6 अप्रैल, 2020 को महावीर जयंती के पावन अवसर पर परिवार में सम्मिलित हुए हैं।

डॉ. जैन की शिक्षा में **उत्कृष्टता** एवं **स्वर्ण पदक** से सम्मानित होने की परंपरा को तीसरी पीढ़ी में उनके पौत्र, पौत्रियों और नातिनों ने आगे बढ़ा कर हमारे परिवार को गौरवान्वित किया है। शिशिर को CBSE की All India Secondary School Examination (AISSE) परीक्षा में 'राष्ट्रीय छात्रवृत्ति योजना' के अन्तर्गत छात्रवृत्ति पाने की पात्रता के लिये **योग्यता प्रमाणपत्र** मिला। मेहा ने किंग जॉर्ज'स मेडिकल यूनिवर्सिटी, उत्तर प्रदेश, लखनऊ से क्लिनिकल सायक्लॉजी में एम.फिल. का शिक्षण अपने बैच में **सर्वोच्च स्थान** प्राप्त कर पूरा किया। तन्वी कक्षा–10 में अपने विद्यालय सेंट ऐग्निस लॉरेटो डे स्कूल, लखनऊ की '**Head Girl**' रही, इन्होंनें JIPMER में एम.बी.बी.एस. शिक्षण के लिये अखिल भारतीय स्तर पर आयोजित प्रवेश परीक्षा में वरीयता क्रम में **सर्वप्रथम स्थान** प्राप्त किया, एम.बी.बी.एस. का शिक्षण जनरल सर्जरी विषय में **स्वर्ण पदक** प्राप्त कर पूरा किया और PGI चंडीगढ़ से एम.एस. (जनरल सर्जरी) का शिक्षण भी जनरल सर्जरी विभाग में **टॉप** कर एवं **रजत पदक** प्राप्त कर पूरा किया। नातिन आकांक्षा को केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, दिल्ली द्वारा All India Secondary School Examination 2008 में गणित में विशिष्ट शैक्षणिक योग्यता प्रदर्शित करने तथा उत्तीर्ण विद्यार्थियों में से

सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाले 0.1 प्रतिशत विद्यार्थियों में स्थान प्राप्त करने के लिए **उत्कृष्टता प्रमाण पत्र** प्रदान किया गया और एम.बी.ए. में इन्होंनें **Best Student** in Finance का स्थान भी प्राप्त किया। सबसे छोटी नातिन संचिता ने **TATA Building India** द्वारा आयोजित School Essay Competition–English: 2013–14 में School Level Winner Senior Category में पदक प्राप्त किया।

27 नवम्बर, 2003 ई. को परिणय की स्वर्ण जयन्ती तथा 27 नवम्बर 2013 को हीरक जयन्ती मनाने का सुयोग हमारे माता–पिता को प्राप्त हुआ। परिणय की स्वर्ण जयन्ती पर स्नेही मित्रों और स्वजनों को हमारे माता–पिता की उत्कीर्ण तस्वीर वाले चांदी के 'परिणय स्वर्ण जयन्ती स्मृति चिन्ह' भेंटस्वरुप मिले थे। यह एक अविस्मरणीय उपहार था और उनकी संतति के लिये सतत आशीष।

परिणय स्वर्ण जयन्ती स्मृति चिन्ह

अग्र भाग **पृष्ठ भाग**

परिणय की हीरक जयन्ती पर सहसा यह उद्‌गार माताजी के मुख से प्रकट हुए थे–

साठ पग चले तुम्हारे साथ,
आगे भी तुम्हारा साथ बना रहे,
यही है भगवान से प्रार्थना।
शशि बगिया में रंग–बिरंगे फूल खिले हैं,
दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करें यही है चाहना।
बच्चों का दाम्पत्य जीवन खुशियों से भरा रहे
यही माता–पिता की है अहर्निश भावना।

विगत जून 2016 से माता जी गम्भीर रूप से अस्वस्थ हो गयीं और शैयाग्रस्त रहीं। परन्तु चेतन अवस्था में ही उन्होंने अपनी सन्तान को जो कुछ देना था दे दिया। जीवन से धीरे–धीरे निर्मोह होता जा रहा था। इस स्थिति के आने से कुछ दिन पहले उन्होंने अपने मनोभाव निम्नवत् व्यक्त किये थे–

आओ, तुमसे प्यार करें, मेरे हमराही !
तन–मन की कुछ बात करें, मेरे हमराही !
संध्या लेकर आई सबेरा, भोर हुई गया अंधियारा।
रात्रि जगमग दिया जले, कब होगा अपना किनारा।
आओ तुमसे.................
तन–मन की कुछ ....
साथ नहीं आये कोई साथ नहीं जाये,
ऐसा कोई जतन करो, जो पहले हो मेरा किनारा।।
आओ तुमसे ....
तन–मन की कुछ................

यद्यपि 2017 के पूरे वर्ष वह मौन ही रहीं तथापि यह सुखद बात रही कि उन्हें पक्षाघात नहीं हुआ और न ही शरीर को किसी प्रकार क्षत–विक्षत करने की नौबत आई। माता–पिता की इच्छा के अनुरूप उनके समधी और हमारे श्वसुर सेवानिवृत्त मुख्य चिकित्सा अधीक्षक, उ.प्र. शासन, डॉ. ओम प्रकाश गुप्ता जी के चिकित्सीय परामर्श में यथोचित चिकित्सा आवास पर ही उपलब्ध करायी ग़यी। अपनी वृद्धावस्था व गिरते स्वास्थ्य के बावजूद वो निरन्तर माताजी को देखने घर आते रहे।

माताजी की सदा यह इच्छा थी कि वह सौभाग्यवती ही मुक्त हों। तदनुसार 64 वर्ष और प्रायः डेढ़ माह के सुखद दाम्पत्य जीवन के बाद 8 जनवरी, 2018 ई. को पूर्वान्ह 10:30 बजे पिताजी को जीवन संगिनी का वियोग सहना पड़ा। माताजी की इच्छानुसार 9 जनवरी को लखनऊ के बैकुण्ठ–धाम में विद्युत शवदाह गृह में प्रदूषण–मुक्त विधि से उनका अंतिम संस्कार किया गया। पिताजी ने शोधादर्श–86 में **'छूट गया साथी !'** उद्‌बोधन से अपने मनोभाव यों व्यक्त किये– *'संगिनी के जाने से जीवन में रिक्तता का बोध होना स्वाभाविक है, परन्तु जिस शांति के साथ और सब–कुछ व्यवस्थित रूप में छोड़ कर उसने प्रयाण किया उससे एक प्रकार का सान्त्वना–बोध भी होता है।'*

कृतित्व एवं व्यक्तित्व :

छात्र जीवन से ही सामाजिक और बौद्धिक कार्यकलापों में सक्रिय रहे। विश्वविद्यालयी छात्र जीवन में ''नेशनल कैडेट कोर'' में कैडेट रहे और ''श्रमण कल्चर स्टडी सर्किल" के संस्थापक मंत्री रहे। बाद को ''जैन मित्र मंडल'', लखनऊ के मंत्री, "सर्वधर्म मिलन", लखनऊ के संस्थापक–सदस्य और तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश के संस्थापक सदस्य व संयुक्त मंत्री एवं उत्तर प्रदेश सरकार के जैन विद्या शोध संस्थान के प्रवर्तक रहे। विविध शैक्षणिक एवं बौद्धिक कार्यक्रमों के सम्पादन के लिए सन् 1961 में "अनन्त–ज्योति विद्यापीठ" की स्थापना की और उसके पीठ–प्रमुख रहे। "ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट" के न्यासी–अध्यक्ष रहे। शोध पत्रिका 'शोधादर्श' के प्रधान सम्पादक व मार्गदर्शक तथा स्वतंत्र चिंतन एवं निर्भीक लेखन की प्रतीक विचार–प्रवण पत्रिका 'Frown / संतर्जन' के लेखक–सम्पादक रहे। Jaina Antiquary, H-L-Banthia Felicitation Volume, The Voice of Ahinsa एवं श्री जैन सिद्धान्त भवन, आरा द्वारा प्रकाशित 'श्री जैन सिद्धान्त भास्कर', के संपादक मंडल के सदस्य रहे।

स्पष्टता एवं निर्भीकता से सत्य कहना और लिखना उनके स्वभाव के मूल गुण थे तथा अन्याय के प्रतिकार के लिये संघर्ष उनकी मूल प्रकृति में था। बाल्यकाल से जीवनपर्यन्त हुयी घटनाओं / समस्याओं पर उनकी प्रतिक्रिया और प्रतिक्रिया व्यक्त करने की शैली उनके मूल गुण तथा मूल प्रकृति का प्रतिबिंब है। उनकी कथनी व करनी सदा समान रही, उनका कृतित्व ही उनके व्यक्तित्व का परिचायक है।

"श्रमण कल्चर स्टडी सर्किल" की स्थापना

डॉ. जैन का मानना था कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से श्रमण और वैदिक संस्कृति भारतीय सभ्यता की दो धारायें रही हैं। दोनों ही एक दूसरे की पूरक हैं और दोनों का ही संपूर्ण ज्ञान भारत की महान सांस्कृतिक विरासत को पूर्णतया समझने के लिये आवश्यक है। उनका यह भी मानना था कि जब हम अपनी सांस्कृतिक विरासत के प्रति सचेत होंगे तब ही सांस्कृतिक एवं मानसिक दासता से मुक्त हो सकेंगे और तब ही आजादी सही शब्दों में पूर्णतया सार्थक होगी। इसी विचार धारा के चलते उन्होंने छात्र जीवन में **"श्रमण कल्चर स्टडी सर्किल"** की स्थापना लखनऊ विश्वविद्यालय में 1952–53 में की। यद्यपि निजी तौर पर गतिविधियाँ मार्च 1952 में ही शुरू हो गयी थीं,

13 अक्टूबर, 1952 ई. को कुलपति द्वारा स्टडी सर्किल के संयोजन के लिये औपचारिक अनुमति मिली। आप इसके संस्थापक महामंत्री/प्रधान सचिव (General Secretary) थे। आचार्य जुगल किशोर, कुलपति लखनऊ विश्वविद्यालय इसके मुख्य संरक्षक थे। दिनांक 19.11.1952 को श्री सी. डी. चटर्जी, रीडर, लखनऊ विश्वविद्यालय जो कि पाली भाषा के विद्वान थे, ने उद्घाटन किया तथा डॉ. गुंथर इस प्रथम सभा के सभापति थे।

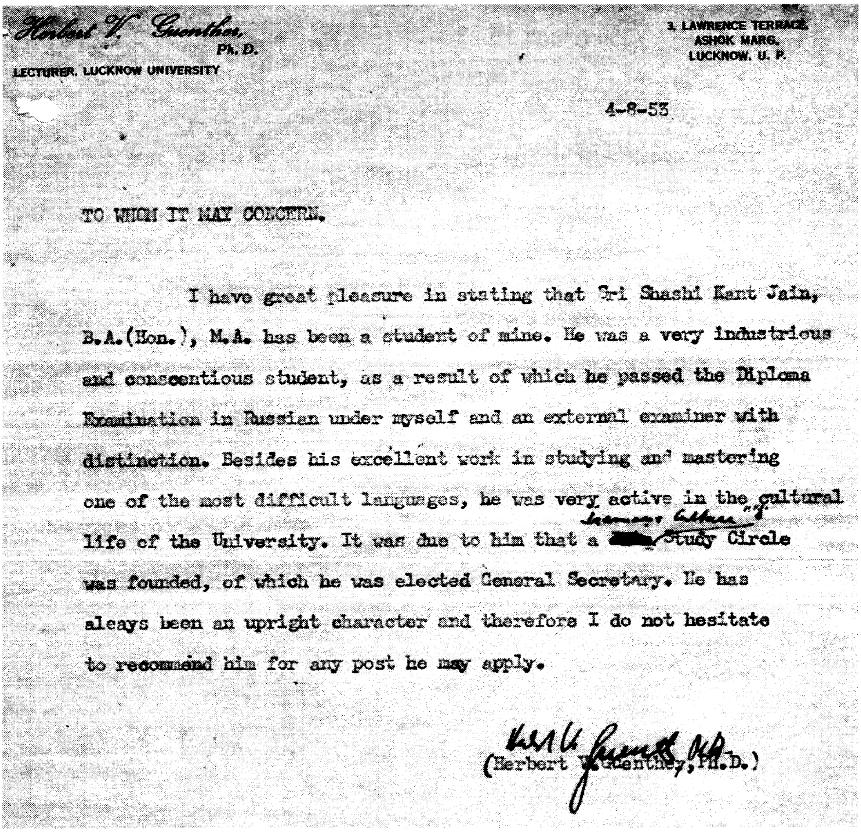

Herbert V. Guenther, Ph. D.
LECTURER, LUCKNOW UNIVERSITY

3, LAWRENCE TERRACE
ASHOK MARG,
LUCKNOW, U. P.

4-8-53

TO WHOM IT MAY CONCERN.

I have great pleasure in stating that Sri Shashi Kant Jain, B.A.(Hon.), M.A. has been a student of mine. He was a very industrious and consceintious student, as a result of which he passed the Diploma Examination in Russian under myself and an external examiner with distinction. Besides his excellent work in studying and mastering one of the most difficult languages, he was very active in the cultural life of the University. It was due to him that a [redacted] Study Circle was founded, of which he was elected General Secretary. He has aleays been an upright character and therefore I do not hesitate to recommend him for any post he may apply.

(Herbert V. Guenther, Ph.D.)

विश्व–जिज्ञासा क्लब का आरम्भ

लखनऊ नगर के कतिपय मनीषी चिन्तकों द्वारा वार्ता, चर्चा, एवं साहित्य के अनुशीलन के माध्यम से बौद्धिक जिज्ञासा की प्रवृत्ति को प्रेरित, व्यवस्थित और परिपुष्ट करने के उद्देश्य से 25 मार्च, 1961 ई., को विश्व–जिज्ञासा क्लब के नाम से एक गोष्ठी प्रारम्भ की गयी थी। इसमें किसी भी विषय पर चर्चा किये जाने पर प्रतिबन्ध नहीं था। इस गोष्ठी के अंतर्गत

विविध सामयिक और सांस्कृतिक विषयों जैसे एकता की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, भारतीय संस्कृति में जैनधर्म, वेश्यावृत्ति–कारण और निदान, पाकिस्तान की समस्या, साहित्य में चन्द्रमा के संबंध में परिकल्पनायें, मातृभाषा के अतिरिक्त अन्य भारतीय भाषाओं को सीखने की आवश्यकता, इत्यादि पर चर्चायें तथा साहित्यिक संगोष्ठियाँ आयोजित की गयीं।

क्लब की प्रथम बैठक 25 मार्च, 1961 ई., को हुई थी। इन गोष्ठियों में भाग लेने वालों में डॉ. श्यामलाल पाण्डेय, श्री अमृतलाल नागर, डॉ. हर्ष नारायन, डॉ. राम सुशील सिंह, डॉ. ज्योति प्रसाद जैन, श्री आनन्द झा, डॉ. (श्रीमती) सरला शुक्ला, कु. मालती चटपार, श्री ई. टी. पिन्च, श्री रामगोपाल, श्री श्रीराम श्रीवास्तव, फादर लियो डिसूजा और डा. शशि कान्त के नाम उल्लेखनीय हैं।

कुछ बैठकों में लघुकथाओं और हिन्दी एवं उर्दू में काव्य रचनाओं के रूप में रचनात्मक साहित्य भी प्रस्तुत किया गया। काव्य गोष्ठियों में भाग लेने वालों में सर्वश्री बलवीर सिंह "रंग", प्रसन्न कुमार दीक्षित "शेखर", दुलारेलाल भार्गव, जगदीश प्रसाद सक्सेना "पंकज", श्यामनारायन गुप्ता, अब्दुलसत्तार खाँ "बेदिल", इफ्तिखार आजमी, बशीर फारुकी, सुरेश कुमार, देवेन्द्र मूर्ति, उमर अन्सारी, रमा कान्त जैन, राजीव कान्त जैन, श्रीमती गिरजा देवी "निर्लिप्त", डॉ. केशरी किशोर, डॉ. शशि कान्त जैन, डॉ. मलिक ज़ादा मन्जूर और डॉ. बली–उल–हक़ अन्सारी के नाम उल्लेखनीय हैं।

'कान्त बाल केन्द्र' विद्यालय की स्थापना

23 जुलाई, 1970 ई., को 'कान्त बाल केन्द्र' के नाम से एक बाल विद्यालय की स्थापना भी की गयी और उसमें इस बात पर विशेष आग्रह रखा गया कि हमारे बच्चे जागरूक नागरिक और उपयोगी मानव बन सकें, उनमें अपनी भाषा और संस्कृति के लिए गर्व हो, और नैतिक मूल्यों के प्रति अपेक्षित निष्ठा उनके चरित्र का सहज अंग बन जाये। उपर्युक्त भावना के परिपेक्ष्य में शिक्षा का माध्यम हिन्दी रखा गया। अंग्रेजी भाषा अनिवार्य विषय था परन्तु "इंगलिश मीडियम" इस स्कूल में नहीं थोपा गया। उनके लिये यह संताप का विषय था कि जनता का वह वर्ग जो सम्पन्न है और स्वयं को प्रबुद्ध कहलाना चाहता है, शिक्षा के इस प्रकार के पक्ष में नहीं है वरन् वह अपने बच्चों को ऐसी संस्थाओं में भेजने के लिये आतुर रहता है जहाँ शुद्ध व्यवसायिकता के आधार पर और ऐसे वातावरण में शिक्षा दी जाती है जहाँ राष्ट्रीय चेतना तथा

सांस्कृतिक मूल्यों का स्खलन होता है और अभिभावकों को अवहेलना एवं अवमानना भी सहनी होती है।

श्रीमती मंजरी जैन, धर्मपत्नी डॉ. शशि कान्त जैन, विद्यालय की प्रधानाध्यापिका थीं। मेरी, दोनों छोटी बहनों और चाचाजी के तीनों बच्चों की कक्षा 5 तक की प्राथमिक शिक्षा यहीं हुई। विद्यालय सत्र 1999–2000 तक रहा।

'अनन्त–ज्योति विद्यापीठ' का गठन

जो भावना विश्व–जिज्ञासा क्लब और कान्त बाल केन्द्र विद्यालय को प्रारम्भ करने के पीछे थी, उसको एक सोद्देश्य संस्थागत रूप देने की दृष्टि से दिनांक 6 अक्टूबर, 1971 ई., को 'अनन्त–ज्योति विद्यापीठ' के विधिवत गठन हेतु एक ज्ञापन तैयार कर सोसाइटीज रजिस्ट्रेशन ऐक्ट के अधीन पंजीकरण हेतु समितियों के निबंधक, उत्तर प्रदेश, को प्रस्तुत किया गया और दिनांक 29 अक्टूबर, 1971 ई., को निबंधन सम्पन्न हुआ।

विद्यापीठ के विधिवत गठन के पश्चात शिशु स्तर से शोध स्तर तक के शैक्षणिक एवं बौद्धिक क्रियाकलाप अनन्त–ज्योति विद्यापीठ के तत्वावधान में आयोजित किये जाते रहे। मूल आग्रह यही रहा कि विद्यापीठ के क्रियाकलाप धन अथवा सत्ता से प्रभावित न हों, और शिक्षा, शोध, चिन्तन, साहित्य एवं कला के क्षेत्र में राष्ट्रीय अपेक्षाओं एवं अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना तथा विशुद्ध मानवीय मूल्यों के आधार से नये प्रतिमान प्रस्तुत हों।

विद्यापीठ के तत्वावधान में एक बाल विद्यालय "कान्त बाल केन्द्र" और सांध्यकालीन संगीत विद्यालय संचालित हुए। "विश्व–जिज्ञासा क्लब" तथा "शब्द–चक्र" के माध्यम से क्रमशः चिन्तन और साहित्य सृजन को अनुप्रेरित और परिपुष्ट करने का प्रयास रहा।

'शब्द–चक्र' प्रतियोगिता का प्रारम्भ

शब्द–चक्र एक विशुद्ध साहित्यिक प्रतियोगिता थी जिसमें हिन्दी साहित्य के अध्ययन और ज्ञान एवं विशुद्ध कौशल की अपेक्षा थी । इसका उद्देश्य हिन्दी साहित्य के प्रति जन–अभिरुचि जागृत करना था। इसका लाभांश 1860 ई. के अधिनियम 21 के अधीन पंजीकृत अनन्त–ज्योति विद्यापीठ के शैक्षणिक, साहित्यिक एवं अन्य लोकोपकारी कार्यक्रमों पर व्यय किया जाना था।

इसमें हिन्दी में प्रकाशित पुस्तकों से उक्तियाँ उद्धृत की जाती थीं। इन उक्तियों में किसी एक शब्द के दो विकल्प रहते थे। सही हल वह शब्द होता था, जिसका लेखक ने स्वयं प्रयोग किया हो। सही हल बताने वालों को पुरस्कार राशि दी जाती थी। उदाहरण के तौर पर–

जीवन दायित्व/नियति का खेल है, पग–पग पर समझौता है।

ममता में तृप्ति है, प्रेम में कचोट/दीप्ति है।

इन उक्तियों में दिये गये दो विकल्प शब्दों में से सही शब्द बताना होता था। सारे सही हल बताने वाले को पुरस्कार राशि प्रदान की जाती थी। ये प्रतियोगिता फरवरी, 1972 में प्रारंभ की गयी थी और संभवतः 1–2 वर्ष ही जारी रही।

विद्वान–मनीषियों एवं गुरुओं का अभिनन्दन

अनन्त–ज्योति विद्यापीठ द्वारा विद्वान–मनीषियों के अभिनन्दन का एक विशिष्ट कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इसके अन्तर्गत इतिहास की शोध के साधक विद्वानों को **'इतिहास–मनीषी'** के सार्थक विशेषण से सम्मानित किया जाता था और पारम्परिक भारतीय शैली में प्रशस्ति–पट्ट, 'इतिहास–मंजूषा' (shield) एवं शाल तथा श्रीफल भेंट करके उनका अभिनन्दन किया जाता था। 'इतिहास–मंजूषा' की अवधारणा एवं अभिकल्पना स्वयं डॉ. शशि कान्त की थी और यह मानव की स्थूल से सूक्ष्म की ओर, सांसारिक से दिव्य की ओर, और क्षणिक से चिरन्तन की ओर, यात्रा की परिकल्पना को चित्रित करती है।

इस अभिनन्दन के लिये अर्हता के निम्नलिखित मापदण्ड निर्धारित किये गये :

अभिनन्दनीय विद्वान भारतीय मनीषा के ऐसे विशिष्ट प्रतिनिधि हों जिनका समस्त जीवन इतिहास शोधन में लगा हो, जो वयोवृद्ध हों, जिनका कृतित्व विशद भी हो और सारभूत भी हो, जिनका व्यक्तित्व प्रेरणादायक हो, और जो वृद्ध–वय में भी शोध कार्य एवं साहित्य साधना में स्वान्तः सुखाय लगे हों। इस योजना की विशिष्टता यह निर्धारित की गयी कि यह विद्वानों का विद्या–प्रेमियों द्वारा सम्मान किये जाने का आयोजन हो जिसमें धन और सत्ता के व्यामोह से परे विशुद्ध स्नेह और गुणानुराग का आधार हो।

तृतीय अभिनन्दन समारोह से विद्यापीठ की प्रवर समिति द्वारा यह निश्चय किया गया कि इतिहास के अतिरिक्त अन्य विषयों के विद्वानों एवं

अन्य मनीषियों को भी विद्यापीठ द्वारा सम्मानित किया जाना चाहिए तथा उदीयमान प्रतिभाओं को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। यह भी निश्चय किया गया कि भारतीय इतिहास और संस्कृति के प्रति समर्पित विदेशी विद्वानों का भी सम्मान किया जाये।

अनन्त–ज्योति विद्यापीठ के तत्वावधान में आयोजित विभिन्न अभिनन्दन समारोहों में इतिहास एवं संस्कृति के वयोवृद्ध 10 अधिकारी–विद्वानों को **'इतिहास–मनीषी'** की उपाधि से अलंकृत तथा 35 अन्य विषयों के विशिष्ट विद्वानों एवं अन्य मनीषियों को सम्मानित किया गया। डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म जयन्ती, पुण्यतिथि एवं जन्म–शती के उपलक्ष में आयोजित विभिन्न समारोहों में भी विद्वान मनीषियों का अभिनन्दन किया गया जिनका जिक्र आगे है। इन समारोहों का संक्षिप्त विवरण परिशिष्ट "अ" में संलन है।

इन अभिनन्दन समारोहों में एक विशेष बात ये भी रही कि पिताजी ने अपने पिता जी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन तथा अनेक गुरुओं का सार्वजनिक तौर पर सम्मान कर कृतज्ञता ज्ञापित की। प्रोफ़ेसर सी.डी. चटर्जी, डॉ. आर.के. दीक्षित, डॉ. बी.एन.पुरी, डॉ. पी.एस.मिश्रा, डॉ. गिरिजा शंकर मिश्रा और श्री विशम्भर नाथ लखनऊ विश्वविद्यालय में उनके गुरु रहे थे और इतिहास की शिक्षा दी थी। डॉ. हर्बर्ट गुंथर (जो कि एक जर्मन थे) ने उन्हें रूसी भाषा पढ़ाई थी। डॉ. भगीरथ मिश्र ने उन्हें विश्वविद्यालय में हिन्दी पढ़ाई थी। श्री महेश्वर पाण्डेय डी.ए.वी. इंटर कॉलेज में उनके गणित के शिक्षक तथा श्री राम निहोर चतुर्वेदी डी.ए.वी. इंटर कॉलेज में उनके इतिहास के शिक्षक रहे थे। श्री रामेश्वर प्रसार दूबे भी उनके डी.ए.वी. इंटर कॉलेज में प्राध्यापक रहे थे और पंडित राम रतन जी तो उनके मेरठ की पाठशाला के समय के गुरु थे। इनमें से कुछ गुरुओं का मृत्यूपरांत सत्कार किया गया था। सभी गुरु अपने शिष्य द्वारा दिये जा रहे सम्मान से अभिभूत थे तथा श्री राम निहोर चतुर्वेदी ने जौनपुर के अपने वर्तमान पता ढूंढे जाने पर सुखद आश्चर्य व्यक्त किया था।

परिचर्चाओं का आयोजन

अनन्त–ज्योति विद्यापीठ के तत्वावधान में इतिहास के क्षेत्र में शोध से संबंधित समस्याओं पर पाँच परिचर्चाओं का आयोजन क्रमशः 7 नवम्बर 1977, 7 नवम्बर 1978, 7 नवम्बर 1979, 6 फरवरी 1982 और 7 नवम्बर 1982 को किया गया।

तीर्थंकर महावीर के 2500वें निर्वाण महोत्सव पर 'भारतीय संस्कृति में जैन विचारधारा' विषय पर **26–29** अक्टूबर, 1975 ई. को चार दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन एवं संचालन किया।

ऋषभदेव प्रतिष्ठान, दिल्ली द्वारा आयोजित भगवान ऋषभदेव परिनिर्वाण महोत्सव–सांस्कृतिक सद्‌भावना संगोष्ठी में "विशिष्ठ विद्वान" के रूप में आमंत्रित किये गये और संगोष्ठी में 3 फरवरी, 1992 ई. को शोध निबन्ध "मानव सभ्यता के आदि प्रस्तोता– ऋषभदेव" प्रस्तुत किया। *(यह शोध निबन्ध शोधादर्श के अंक 16 मे प्रकाशित भी हुआ है।)*

'Redaction of Scriptures of Principal Religious Systems' पर जून 1995 में संगोष्ठी का आयोजन एवं संचालन किया।

राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान (मानित विश्वविद्यालय), नई दिल्ली एवं श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ (मानित विश्वविद्यालय), नई दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में 10–12 मई, 2012 ई. को 'भारतीय परम्परा में प्राकृत भाषा और साहित्य का अवदान' विषय पर आयोजित त्रिदिवसीय संगोष्ठी में उनके आलेख 'प्राकृत का अभिलेखीय साहित्य' का वाचन किया गया क्योंकि वय और स्वास्थ्य की अनुकूलता न होने के कारण सशरीर उपस्थित होने में उनकी असमर्थता थी।

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म जयन्ती एवं पुण्यतिथि पर विचार/काव्य गोष्ठी एवं विद्वान मनीषियों के अभिनन्दन समारोह

डॉ. जैन हर वर्ष अपने पिताजी कीर्तिशेष 'इतिहास–मनीषी' डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म जयन्ती एवं पुण्यतिथि पर विचार/काव्य गोष्ठी का आयोजन कर उनका स्मरण एवं नमन करते थे। ऐसे कई आयोजनों में विद्वान–मनीषियों का सार्वजनिक सम्मान और नवोदित प्रतिभाओं का प्रोत्साहन भी किया गया। इसी क्रम में **10वीं पुण्यतिथि** पर 11 जून, 1998 ई. को अनन्त–ज्योति विद्यापीठ एवं ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट द्वारा आयोजित **सारस्वत सम्मान समारोह** में सेवानिवृत्त पुलिस महानिरीक्षक श्री जौहरीमल जैन, वयोवृद्ध पत्रकार श्री ज्ञान चन्द जैन और तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश के संस्थापक महामंत्री तथा 'शोधादर्श' के प्रधान सम्पादक एवं सेवानिवृत्त उपसचिव, उत्तर प्रदेश शासन श्री अजित प्रसाद जैन सहित 31 विद्वान–मनीषियों का सार्वजनिक सम्मान एवं अभिनन्दन किया गया और काव्य संध्या का आयोजन किया गया। **25वीं पुण्य तिथि** पर 11 जून, 2013 ई. को ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट द्वारा जयशंकर प्रसाद सभागार, लखनऊ में

आयोजित कार्यक्रम में सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति डॉ. अशोक कुमार कालिया को शोध के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान के लिए, कविवर श्री विनोद चन्द्र पाण्डेय 'विनोद' को साहित्य के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान के लिए तथा 14 शोधार्थियों को स्मृति–चिन्ह प्रदान कर सम्मानित किया गया। इन समारोहों का विशद वर्णन क्रमशः 'शोधादर्श' के अंक–35 व 77 में उपलब्ध है।

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म–शती समारोह में विद्वान मनीषियों का अभिनन्दन एवं विचार–गोष्ठी

डॉ. शशि कान्त जैन के मार्गदर्शन में लखनऊ में दिनांक 21 जुलाई, 2012 ई. को इतिहास–मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की **जन्म–शती** के उपलक्ष में जयशंकर प्रसाद सभागार में "ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट", "अनन्त–ज्योति विद्यापीठ" और "तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश", के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित समारोह में विद्वान मनीषियों के अभिनन्दन एवं "इतिहास की उपयोगिता" विषय पर विचार–गोष्ठी का आयोजन किया गया। जन्म–शती समारोह में विद्वान मनीषियों के अभिनन्दन एवं विचार–गोष्ठी का विशद वर्णन 'शोधादर्श' के अंक–76 में उपलब्ध है।

पितामह की 26वीं पुण्य तिथि पर उनके सुपौत्र की काव्य कृति का लोकार्पण

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की **26वीं पुण्य तिथि** पर 11 जून, 2014 ई. को अनन्त–ज्योति विद्यापीठ एवं ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट द्वारा उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के प्रेमचंद सभागार में आयोजित समारोह में श्री राजीव कान्त जैन की (मेरी) काव्य कृति '**सोनचिरैया फिर चहकेगी**' का लोकार्पण सुविख्यात साहित्यकार एवं कवि श्री सूर्य कुमार पाण्डेय के कर कमलों एवं पिताजी डॉ. शशि कान्त जैन के आशीर्वचनों द्वारा सम्पन्न हुआ। काव्य संकलन "सोनचिरैया फिर चहकेगी" में पचपन कविताएं हैं जो भाव–क्रम से पांच भागों में विभक्त हैं – देश की लगन, प्रेम की अगन, परिवेश की चुभन, मन की उलझन और कुछ यूंहि भटकन। 'देश की लगन' के अन्तर्गत रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना के स्वर मुखर हैं। मूर्द्धन्य

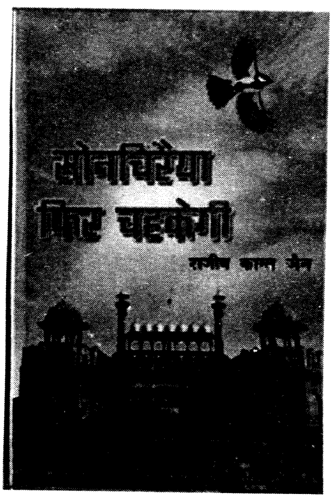

साहित्यकार बालकवि बैरागी जी ने काव्य संकलन की अनुशंसा एवं साहित्य–भूषण डॉ. गणेशदत्त सारस्वत जी ने प्रस्तावना लिखने की कृपा की है। कोटा निवासी एवं पूर्व रेलकर्मी श्री जे. एल. बाजपेयी जी जो मेरे परम शुभेच्छु मित्र हैं, के सत्प्रयास एवं प्रेरणा से यह काव्य–संग्रह मूर्त्त रूप ले सका। इन सभी का मैं हृदय से आभारी हूँ। समारोह का विशद वर्णन 'शोधादर्श' के अंक–79 में उपलब्ध है।

उपरोक्त परिचर्चाओं के विषय तथा चर्चा–सार एवं बौद्धिक कार्यक्रमों/समारोहों के संक्षिप्त विवरण **परिशिष्ट "अ"** में संकलित हैं।

लेखन :

लेखन–प्रकाशन का सिलसिला सन् 1952 से ही प्रारंभ हो गया। सर्वप्रथम लेख "महावीर और उनका संदेश" दिनांक 6 अप्रैल, 1952 ई. को लखनऊ के दैनिक पत्र 'नवजीवन' में प्रकाशित हुआ। अंग्रजी में प्रथम लेख "The Teachings of Mahavir" दिनांक 8 अप्रैल, 1952 ई. को लखनऊ के अंग्रेजी दैनिक पत्र 'The Pioneer' में प्रकाशित हुआ (यह लेख बाद में 'The Voice of Ahinsa' पत्रिका के 'Nov, Dec 1952' अंक में तथा 'The English Jaina Gazette" के अप्रैल 1955 के अंक में पुनः प्रकाशित हुआ)। दोनों ही लेख तीर्थंकर महावीर की 2551वीं जयन्ती के उपलक्ष में लिखे गये थे। तब से लगातार सार्वजनिक पत्र–पत्रिकाओं और शोध पत्रिकाओं में हिन्दी व अंग्रेजी में ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धर्म–दर्शन, भाषा–साहित्य, कला और सामाजिक–राजनैतिक परिदृश्य जैसे विविध विषयों पर स्वतन्त्र चिन्तन एवं शोध–समीक्षा युक्त और विचारप्रेरक लेख व समीक्षायें लिखते रहे। उन्होंने लब्ध–प्रतिष्ठ भारतीय एवं विदेशी पत्र–पत्रिकाओं एवं समाचार पत्रों में अंग्रेजी और हिन्दी में परिचर्चाओं का सूत्रपात भी किया। लेख अंग्रेजी में The Pioneer, National Herald, Hindustan Times, Caravan, Mirror, Quest, East and West आदि पत्र–पत्रिकाओं में और हिन्दी में नवजीवन, सरस्वती, जैन सन्देश शोधांक, शोधादर्श आदि पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। विचार गोष्ठियों में भाग लेते थे, स्वयं संगोष्ठियों एवं विचार गोष्ठियों का आयोजन और विद्वत अभिनन्दन समारोह का संयोजन भी करते थे। आकाशवाणी व दूरदर्शन पर उनकी वार्तायें व चर्चायें प्रायः प्रसारित होते रहते थे।

तात्कालिक सामाजिक, सांस्कृतिक व राष्ट्रीय विषयों पर वो सदा मुखर होते थे और उनके विचार/प्रतिक्रियायें The Pioneer, National Herald,

Hindustan Times एवं नवजीवन आदि दैनिक समाचार पत्रों के Reader's Forum में छपते रहते थे। ये सभी विचार/प्रतिक्रियायें सारगर्भित, तर्क एवं तथ्यपूर्ण हैं तथा विषय पर उनके मौलिक चिन्तन तथा बेबाक एवं स्पष्ट विचारों की प्रतीक हैं और संग्रहणीय हैं। मुझे स्मरण आता है कि 1980 के दशक तक सर्वश्री वी एन जिन्दल, सी एम अडवाड़ी तथा पिताजी के विचार/प्रतिक्रियायें प्रायः प्रकाशित होते रहते थे। बाद के दौर में समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में स्पष्ट एवं बेबाक विचारों को छापने के साहस में कमी आ गयी थी जिसका उन्हें क्षोभ था।

डॉ. जैन का शोधपरक लेखनकार्य जो सन् 1952 में प्रारम्भ हुआ था शासकीय सेवा की प्रवृत्तियों के साथ और शासकीय सेवा से अवकाश के बाद भी अंत समय तक प्रवाहमान रहा। महाप्रयाण से कुछ समय पूर्व ही आपने शोधादर्श के गत अंक का कार्य पूर्ण किया था। स्वतंत्र चिन्तन युक्त और शोधपरक लेखनी कदाग्रह निरपेक्ष और तथ्य सापेक्ष रूप में विविध विषयों पर सतत चलती रही। उन्होंने लगभग 500 से अधिक शिक्षाप्रद एवं शोधपरक लेख, कथानक, कविता, कहानी लिखे जो भारतीय एवं विदेशी जर्नल, पत्रिकाओं व अंग्रेजी तथा हिंदी समाचार पत्रों में प्रकाशित होते रहे। उनके प्रिय विषय इतिहास, संस्कृति, तुलनात्मक धर्म, कला और सामाजिक–राजनीतिक परिदृश्य इत्यादि थे। उन्होंने कई बार नामचीन हस्तियों के साथ ज्वलन्त मुद्दे उठाये। सही सामग्री की छानबीन करने की दृष्टि से युक्त डॉ. शशि कान्त एक तीक्ष्ण विद्वान थे जो शोधकर्ता की क्रिया के साथ शैली की सहजता को संयुक्त करते थे ताकि विषय अधिकाधिक सुबोध बन सके। वह किसी विषय पर तभी लिखते थे जब कुछ मौलिक योगदान अपेक्षित होता था। वो लेखनी के आज होते जा रहे व्यवसायीकरण से दुखी थे। उनके मन की पीड़ा उनकी कृति *'नारद के संवाद'* में कुछ यों मुखरित हुई–

मैं कगार पर खड़ा,
हाथ में चिराग लिये
पुकारता–
कोई तो थाम ले दीया !

डॉ. जैन के 1950 और 1960 के दशकों में विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित कतिपय लेखों और पत्रों को **परिशिष्ट "ब"** में सूचीबद्ध करने का प्रयास किया है, जो संलग्न है।

प्रमुख कृतियां :

'कौशाम्बी' सन् 1965 में हिन्दी में प्रकाशित उनकी प्रथम पुस्तक थी। इसमें प्राचीनतम काल से लेकर उदयन के पूर्व का छठी शती ई. पूर्व तक का काल, उदयन का वृतान्त और उसके बाद से आज तक का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास वर्णित है। चेष्टा यह भी रही है कि सम्बन्धित सब महत्वपूर्ण साहित्यिक तथा पुरातत्वीय सामग्री एक स्थान पर संकलित हो जाये और इस विषय पर आगे कार्य करने वाले जिज्ञासुओं को इससे पर्याप्त सहायता मिल सके। इस पुस्तक की मसौदा प्रति हमारे पास है किन्तु इसकी मुद्रित प्रति अब अनुपलब्ध है। (प्रकाशक : Indological Book House, Varanasi (India))

'The Hathigumpha Inscription of Kharavela and the Bhabru Edict of Asoka –A Critical Study' सन् 1971 में प्रकाशित अपने विषय पर एक प्रामाणिक शोधग्रन्थ है जिसका विश्वस्तर पर विद्वत समाज में प्रभूत समादर किया गया और जिसकी समीक्षायें भारत एवं अन्य देशों की पत्र–पत्रिकाओं में विशद रूप से प्रकाशित हुयीं। सन् 1974 में इसकी समीक्षा Denmark के Acta Orientalia - Vol. XXXVI और PRAHA के ARCHÍV ORIENTÁLNÍ - Vol. 42 (Quarterly Journal of African and Asian Studies) में प्रकाशित हुयी। इस पुस्तक का दूसरा परिवर्धित संस्करण भी सन् 2000 में प्रकाशित हुआ। परिवर्धित संस्करण में प्राकृत भाषाओं और प्राचीन भारतीय लिपियों की उत्पत्ति विषयक अध्याय भी जोड़े गये हैं।

यह पुस्तक आस्ट्रेलिया की कैनबरा यूनिवर्सिटी में और भारत में मगध विश्वविद्यालय के पाठ्य क्रम में सम्मिलित की गई। (प्रकाशक : D.K. Printworld (P) Ltd., 'Sri Kunj', F-52, Bali Nagar, New Delhi.110015 (India))

डॉ. आर्थर लेवेनिन बाशम, पी–एच.डी., डी.लिट., Professor of Oriental Civilisation, The Australian National University, Canberra (Australia) ने पुस्तक की प्रस्तावना लिखी है। पुस्तक की उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने लिखा –

'....translation of this inscription (Hathigumpha Inscription of Kharavela) by Dr. Shashi Kant marks a great step in our understanding of this very difficult historical document. In many particulars the fresh interpretation presented here is an obvious improvement over those of previous students of the subject. ....and

in general I would heartily recommend this interpretation to all students of Indian history.

....With this is included a further study of one of Asoka's most obscure inscriptions, the Bhabru Edict. This little document is as important for the history of Buddhism as the Kharavela's Hathigumpha Inscription is for that of Jainism, ... Here, too, Dr. Shashi Kant has produced new theories of great importance and I recommend them to all students of Indian history and religions.'

'Political and Cultural History of Mid-North India' डॉ. जैन का शोध–प्रबन्ध है जिसे लखनऊ विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग में 'डाक्टर ऑफ फिलासफी' की उपाधि के लिये प्रस्तुत किया गया था। इसके प्रकाशन की अनुशंसा एवं प्रकाशन के लिये वित्तीय मदद 'भारतीय इतिहास अनुसन्धान परिषद' (Indian Council of Historical Research) द्वारा की गयी और यह सन् 1987 में प्रकाशित हुआ।

प्रस्तुत ग्रन्थ में मध्य–उत्तर भारत के राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास का पाषाण युग से 13वीं शती ई. तक विवेचन किया गया है। यह गंगा–यमुना के संगम के आस–पास का प्रान्तर है जो पारंपरिक रूप से वत्स जनपद जिसका केन्द्रबिन्दु कौशाम्बी नगरी थी, के नाम से अभिज्ञात है। प्राचीन मध्य–उत्तर भारत (वत्स जनपद) और प्राचीन भारत (भारतवर्ष) को क्रमशः चित्रित करने के लिये मानचित्र दिये गये हैं जो स्थानों को चीन्हने में और ऐतिहासिक क्रम का दृश्यांकन करने में सहायक हैं। कुछ ऐसे महत्वपूर्ण बिन्दु भी हैं जो क्षेत्रीय सीमाओं से बाधित नहीं हैं और समग्र भारत के इतिहास के लिए महत्व रखते हैं। कला शैलियों, सिक्कों के विभिन्न प्रकार, मुद्राओं एवं मुद्रिकाओं, और अभिलेखों, जो कि इस क्षेत्र में पाये गये हैं, का विशद विवेचन भी भारतीय ऐतिहासिक दृश्य को सुबोध बनाने में सहायक है।(प्रकाशक : नेहा प्रकाशन, 1415, डॉ. मुकर्जी नगर, दिल्ली–110009 (भारत))

उपरोक्त शोध–प्रबन्ध पर इतिहास एवं पुरातत्व के मर्मज्ञ विद्वान **डॉ. बहादुर चन्द छाबड़ा,** भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण के भूतपूर्व संयुक्त महानिदेशक, एवं पंजाब विशवविद्यालय, चंडीगढ़, के प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग के भूतपूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष ने निम्नलिखित अनुशंसा दी थी–

"The thesis is excellent. It is very well planned and admirably executed. It takes into account all the archeological discoveries recently made as well as the researches made till now.

The material at the author's disposal and examined by him has enabled him to solve many a knotty problem as well as to modify some of the current views, adding at the same time much useful new information. He has presented the whole in a chronological sequence in an eminently readable manner.

The division into chapters, sub-headings and marginal titles is logical. It is at the same time helpful to the reader in following and remembering the facts presented.

It is a worthy piece of scholarship, a valuable addition to the existing literature on the subject and a distinct contribution to the history of Ancient India."

'नारद के संवाद' 26 जनवरी, 2019 ई. को प्रकाशित हुयी। 26 जनवरी, 1950 ई. को भारत का संविधान लागू हुआ था और तब से विगत 70 वर्षों में राजनीतिक परिदृश्य का जो प्रकटन हुआ उस पर एक चिन्तनशील प्रबुद्ध पर्यवेक्षक की दृष्टि से उन्हें जो कुछ दृश्यमान हुआ उस पर सहज व्यंग्य शैली में उनकी यह प्रस्तुति सुधी पाठक वर्ग में पर्याप्त चर्चित रही। (प्रकाशक : अनन्त–ज्योति विद्यापीठ, ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ–226004 (भारत))

The Hathigumpha Inscription of Kharavela and the Bhabru Edict of Asoka –A Critical Study, एवं Political and Cultural History of Mid-North India आदि पुस्तकें आनलाइन विभिन्न वेबसाइट जैसे www.amazon.in, www.goodreads.com, https://books.google.co.in इत्यादि पर भी क्रय एवं संदर्भ हेतु उपलब्ध हैं।

निर्भीक एवं विचार परक लेख और वार्ताओं की बानगी :

जनवरी 1958 में दिल्ली से प्रकाशित लोकप्रिय मासिक पत्रिका **CARAVAN** में सुप्रलेखित (well documented) एवं विचारोत्तेजक लेख **"Let us change Our National Anthem"** द्वारा 'जन–गण–मन' के राष्ट्र गान के रूप में चयन को चुनौती दी। "भारत नाम सुभागा" आजाद हिन्द सरकार और आई एन ए का गान रहा था और दक्षिण पूर्व एशिया व भारत में लोकप्रिय भी

रहा था। "भारत भाग्य विधाता" (जन–गण–मन) किंग जॉर्ज–V की प्रशस्ति में गाया गया था। अतः "भारत नाम सुभागा" राष्ट्र गान के लिए बेहतर अर्हता रखता था। पाठक वर्ग में इसकी बहुत सकारात्मक प्रतिक्रिया हुई थी।

the theme and contents of both the songs differ altogether. While *Jan Gan Man* sounds like a bard's eulogy to his master, *Bharat Nam Subhaga* sounds like a patriot's prayer for the prosperity, unity and freedom of his country. The latter may also be a "devotional hymn" but it is in devotion to the beloved country and not to any individual posing as the dispenser of its destiny.

A Mystery. What stood in the way of the adoption of *Bharat Nam Subhaga* as the National Anthem of the Sovereign Democratic Republic of India is still a mystery. Various speculations have been made. Perhaps the British, who granted India freedom, could not have tolerated the battle song of an army which fought against them to liberate the country, as the National Anthem of *free* India. Or the old antagonism to Subhas in certain Congress circles may have been responsible. Maybe it could not satiate the ego of someone who could think of himself as the "Dispenser of Bharat's destiny." Or was it considered more national and more patriotic in sentiment than could fit in with the notions of the Sovereign Democratic Republic of India?

The song *Bharat Nam Subhaga*, of course, would profit by some improvement here and there. But the fact remains that *Bharat Nam Subhaga*, and not "Bharat Bhagya Vidhata" (*Jan Gan Man*), compares well with the Syrian Anthem and the Anthems of other self-respecting, freedom-loving and dignified nations; nor can any one deny that it better deserved the place of honour which was given to *Jan Gan Man*. What is most surprising is that it was not even a contestant. ✦✦

CARAVAN

Let us change Our National Anthem (समापन अंश)

पुनः अक्टूबर 1958 के **CARAVAN** अंक में सुप्रलेखित एवं विचारोत्तेजक लेख **Our National Calendar** द्वारा 'शक संवत्' के राष्ट्रीय संवत् के रूप में चयन पर प्रश्न खड़े किये। उनका कहना था कि ऐसे कैलेंडर को अपनाने की क्या विवशता थी जो सदियों पूर्व हमारी राजनैतिक अवमानना का प्रतीक रहा था और जबकि 'विक्रम संवत्' का हमारा अपना गौरवमयी इतिहास था। समापन पैरा में उन्होंने लिखा–

"We could have started a new era from August 15, 1947 A.D. or from January 26, 1950 A.D., but since India has a long continuous history of civilization, it was only proper to find out some ancient

date which could reflect the glory of our history, culture and civilization. And when we have a reckoning dating 57 years earlier to the Christian era, there is no need to push it behind by 135 years by adopting the Saka era which has also no proud, glorifying or exhilarating memories for us."

अक्टूबर 1975 में आपातकाल के दौरान **"Non-violence in Action"** वार्ता का ऑल इंडिया रेडियो पर प्रसारण–

अपनी सत्ता को बचाये रखने के लिये तत्कालीन प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने देश में आपातकाल (Emergency) घोषित कर रखा था और अन्याय के विरोध में उठने वाली आवाजों को बेरहमी से जेलों में ठूंसा जा रहा था। ऐसे समय में दिनांक 5.10.1975 को ऑल इंडिया रेडियो पर आपने **"Non-violence in Action"** वार्ता प्रसारित करने का साहस किया और अहिंसा द्वारा अन्याय के के प्रतिकार का मार्ग सुझाया–

"Violence is a temper or mood in which an individual or a group of individuals, oftentimes vast multitudes forming a community or a nation, indulge in abuse of power or faculties to the disadvantage or detriment of others.....

....Fear makes man weak, but once he has shed fear no amount of force can make him submit to injustice – this was the basis of Mahatma Gandhi's Satyagraha and its culmination in the peaceful transfer of power in the Indian subcontinent in 1947 demonstrated that big political issues can also be solved without resorting to armed conflict but by awakening the conscience of both the enslaved and the enslaver through a power of will generated by practising non-violence..."

(उपरोक्त लेख शोधादर्श के गत अंक 88–89 में प्रकाशित भी हुआ है।)

Frown/संतर्जन का प्रकाशन :

राष्ट्रीय परिपेक्ष्य को विस्तृत करने और युक्ति संगत सोच को प्रेरित करने के लिये राष्ट्रीय महत्व के मुद्दों पर चर्चा ताकि आत्म सम्मान जागृत हो और अखिल भारतीय सोच और दृष्टि पुष्ट हो, इस दृष्टिकोण से त्रैमासिक पत्रिका 'Frown/संतर्जन' का मार्च, 2004 से एक हॉबी के रूप में प्रकाशन प्रारंभ किया। यह प्रबुद्ध वर्ग के लिये Journal था तथा यह मूल स्वभाव से

बाजारू पत्रिका नहीं थी। इसका सम्पूर्ण व्यय पिताजी द्वारा स्वयं उनके अल्प संसाधनों से वहन किया जाता था।

वे उसे देश भर के पुस्तकालयों को इस आशय से भेजते थे कि लोगों की राष्ट्रीय मुद्दों के प्रति चेतना जागृत हो। सभी राजनेताओं को, और उन्हें विशेषकर जिन्हें अपने लेखों में संदर्भित करते थे, इसकी प्रति भेजते थे। अपने सम्पर्क में रहे प्रबुद्ध पाठकों और पत्रकारों को भी इसकी प्रति भेजते थे।

नवम्बर 2008 के बाद इसका प्रकाशन नहीं किया जा सका। इसका मुख्य कारण था कि यद्यपि पाठकों के अभिमत काफी संख्या में आते थे परन्तु जिन व्यक्तियों को इन मुद्दों के प्रति ध्यान देना अपेक्षित था, वे सब बौद्धिक चेतना के प्रति उदासीन थे। अपने को नेता और समाजसेवी घोषित और प्रचारित करने वाले सभी व्यक्ति न तो तथ्यों की जानकारी करना चाहते हैं और न ही इसके लिये उनके पास समय है। पत्रिका का अन्तिम प्रकाशन नवम्बर, 2008 में हुआ।

(उपरोक्त तथ्य पिताजी द्वारा श्री हरि कृष्ण निगम, महावीर नगर, कांडीवली (पं.), मुंबई को दिनांक 19.9.2012 को पत्रोत्तर के आधार पर)

स्व. श्री मधुश्री काबरा जो मुंबई में पिछले 25 वर्षों से मासिक पत्रिका 'समाज प्रवाह' द्वारा जनसाधारण से संबंधित मुद्दों पर जनता को जागरूक करने के लिये प्रयासरत थे और लगभग 75 वर्ष के थे तथा पिताजी के हमउम्र थे, अपने व पिताजी के प्रयासों के प्रति लोगों की उदासीनता से खिन्न थे। तब इसके जबाब में नवंबर 2008 के सम्पादकीय में पिताजी ने लिखा था जो Frown/संतर्जन के प्रति उनकी मनःस्थिति का बिंब है–

"आपकी यह आशंका सही है कि आप और हम जैसे विचारकों के प्रयास इस करोड़ों के देश की जनता में जागृति लाने की दिशा में नगण्य ही हैं, परन्तु हम लोग अपना यत्किंचित प्रयास करने के लिए अन्तः प्रेरणा से प्रेरित होते हैं। जो कुछ भी हम कर रहे हैं उसमें प्रेरक तत्व क्या है, कहना कठिन है। संभवतः यह विचार प्रवण होने की विवशता है।

विद्यार्थी जीवन से ही मुझे सोचने और लिखने का रोग लग गया था। 1952 से हिन्दी और अंग्रेजी में मैं अपने विचारों का प्रकाशन करता रहा। इधर कुछ वर्षों से राष्ट्रीय प्रेस कुछ अधिक संकोची हो गया है। अतः स्वतंत्र विचारों को प्रकाशित करने में उसे कष्ट होता है। इसलिए मुझे Frown/संतर्जन

के माध्यम से अपने विचारों का संप्रेषण करने का प्रयास करना पड़ा। अनुभव सुखद नही है क्योंकि प्रबुद्ध वर्ग अपने विचरों को अभिव्यक्त करने में संकोच करता है। मैं प्रशासन में रहा और उत्तर प्रदेश शासन में विशेष सचिव के पद से सेवा निवृत्त हुआ। प्रशासनिक, न्यायिक और शिक्षण क्षेत्र के विभिन्न वर्गों से मेरा काफी सम्पर्क रहा, बहुतों से आज भी है। परन्तु यह थोड़ा सा कष्टकर है कि प्रबुद्ध वर्ग में जन चेतना और सुधार के प्रति विशेष आकर्षण नहीं है। जिन लोगों के हाथ में शासन चलाने का दायित्व है वे किसी आदर्श या सिद्धान्त से प्रेरित नहीं हैं वरन् किसी–न–किसी प्रकार सत्ता और धन का अर्जन ही अपना मुख्य उद्देश्य मानते हैं। यह सब तो चलता ही रहेगा फिर भी कुछ प्रबुद्ध जन देश और समाज को सुधारने की दिशा में भी विचार करते रहेंगे। अतः आप प्रयत्न से निराश न होवें।

जहां तक इतिहास का प्रश्न है, मैं इतिहास का विद्यार्थी रहा हूं और ऐतिहासिक दृष्टिकोण से समसामयिक परिदृश्य को समझने का प्रयास भी करता रहा हूं। मेरा विचार है कि अपने लेखों का विषयवार संकलन पुस्तकों के रूप में प्रकाशित करा सकूं ताकि आगे आने वाली पीढ़ियों को भी उस चिन्तन और विचारणा का लाभ मिल सके जिसको मैंने अपने अध्ययन और मन्थन से अर्जित किया।''

उनके कितने ही मित्रों की भी इच्छा थी कि जो विचार वे स्वान्तः सुखाय Frown/संतर्जन में और 'शोधादर्श' में लेखबद्ध करते रहे उन्हें पुस्तक रूप में प्रकाशित किया जाना उपयोगी होगा। तथापि उनके जीवनकाल में ये सत्कार्य संभव न हो सका। ।

शोधादर्श का सम्पादन एवं मार्ग दर्शन :

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के तत्वावधान में जैन विद्या की शोध को समर्पित चातुर्मासिक शोध–पत्रिका "शोधादर्श" के प्रथम अंक का प्रकाशन फरवरी 1986 में किया गया था। इसके आद्य–सम्पादक 'इतिहास–मनीषी' 'विद्यावारिधि' डॉ. ज्योति प्रसाद जैन थे। जून 1988 में उनके स्वर्गवास के उपरान्त अंक 7 से अंक 29 तक प्रधान सम्पादक के दायित्व का निर्वहन डॉ. शशि कान्त जैन ने किया। अंक 30 (नवम्बर 1996) से अंक 56 तक प्रधान सम्पादक के कार्यभार का सम्पादन श्री अजित प्रसाद जैन ने किया। उनके निधन के उपरान्त अंक 57 (नवम्बर 2005) से अंक 67

(मार्च 2009) तक श्री रमा कान्त जैन ने इसके सम्पादन के दायित्व का निर्वहन किया। उनके निधन के उपरान्त अंक 68 से डॉ. शशि कान्त जैन के सुपुत्र श्री नलिन कान्त जैन इसके सम्पादन के दायित्व का निर्वहन कर रहे हैं। तथापि पिताजी का सदा इस शोध–पत्रिका में सक्रिय योगदान रहा और 2009 से संपादक मंडल के मार्गदर्शक रहे।

बौद्धिक, धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं में सक्रियता :

डॉ. शशि कान्त जैन बौद्धिक, धार्मिक, एवं सामाजिक क्षेत्र में सदा सक्रिय रहे तथा वो अनेकों अखिल भारतीय एवं अन्य संस्थाओं से जुड़े रहे, यथा–

National Cadet Corps, VIth Bn, लखनऊ : सन् 1950–52

संस्थापक मंत्री (Founder Secratary) - Sarmana Culture Study Circle,
लखनऊ विश्वविद्यालय : सन् 1952–53

मंत्री–जैन मित्र मंडल, लखनऊ : सन् 1957–59

संस्थापक सदस्य : सर्व धर्म मिलन, लखनऊ (सन् 1976),
तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश (सन् 1976)

आजीवन सदस्य : ऑल इंडिया दिगम्बर जैन महासमिति,
उत्तर प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन,
उत्तर प्रदेश सचिवालय कल्याण परिषद

संस्थापक अध्यक्ष : अनन्त–ज्योति विद्यापीठ (सन् 1971 से जीवनपर्यन्त)

न्यासी अध्यक्ष : ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट (सन् 1988 से जीवनपर्यन्त)
(Trustee President)

अध्यक्ष – उत्तर प्रदेश सचिवालय अधिकारी संघ : सन् 1990

संयुक्त मंत्री – तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति : सन् 1988–2000

श्री स्याद्वाद महाविद्यालय, वाराणसी की प्रबन्धकारिणी समिति के माननीय सदस्य : दिनांक 15.10.1988 को सर्वसम्मति से चुने गये।

मोतीलाल मेमोरियल सोसायटी द्वारा संचालित "नेशनल डिग्री कॉलेज" की प्रबंध समिति के सदस्य : (दिनांक 10.9.1996 से 30.6.1999)

अ.भा. दिगम्बर जैन परिषद के अध्यक्ष साहू रमेश चन्द्र जैन द्वारा परिषद की

राष्ट्रीय प्रबंधकारिणी समिति में सदस्य मनोनीत : 12 जनवरी, 1994 ई. को भारतीय जैन मिलन हॉस्पिटल की कार्यकारिणी में सम्मानित सदस्य मनोनीत : दिनांक 8.2.1989 को

श्री अग्रवाल सभा, लखनऊ की कार्यकारिणी समिति में सर्वसम्मति से "विशेष आमंत्रित" मनोनीत : दिनांक 23.7.1990 से।

सम्मान :

डॉ. जैन उस विलुप्तप्राय पीढ़ी से थे जो देश प्रेम, सामाजिक सरोकार, धर्मानुराग व बौद्धिक विलास के लिये तन–मन–धन से समर्पित थी। न कोई अपेक्षा, न कोई आकांक्षा, जो करते थे स्वान्तः सुखाय करते थे और अपनी मूल आकृति के अनुसार करते थे। न किसी दल में, न किसी दलदल में, कोई साथ आये तो ठीक नहीं आये तो ठीक, एकला चलो पर निर्भीकता, स्पष्टवादिता और सत्य से कोई समझौता नहीं। ऐसे व्यक्ति का जीते जी कलियुग में समाज एवं सरकार द्वारा यथोचित सम्मान होने की संभावना कम ही होती है सो वो भी अपवाद न थे। पर यदा–कदा उनकी बहुमुखी प्रतिभा एवं निस्वार्थ कर्म का संज्ञान लिया गया जिनका उल्लेख निम्नांकित है–

जैसा कि ऊपर 'उत्कृष्ट सेवा वृत्त' में उल्लेखित है, उ.प्र. शासन द्वारा सरकारी कार्य के अतिरिक्त उत्कृष्ट बौद्धिक कार्य के लिए 2 अक्टूबर, 1972 ई. को **मुख्य मंत्री पं. कमलापति त्रिपाठी द्वारा सम्मानित** किये गये। उत्तर प्रदेश सचिवालय पेन्शनर्स वेल्फेयर एसोसियेशन के 22 नवम्बर, 2018 ई. को सम्पन्न वार्षिक अधिवेशन में **'पेशनर्स शिरोमणि'** की उपाधि से डॉ. शशि कान्त जैन को विभूषित किया गया।

13 सितम्बर, 2000 ई. को पानीपत में 'पद्मश्री' डॉ. लक्ष्मी नारायण दुबे की अध्यक्षता में आयोजित भव्य समारोह में हिन्दी भाषा/समाज की अमूल्य सेवा के लिये जैमिनी अकादमी द्वारा डॉ. जैन को **'बीसवीं शताब्दी रत्न'** सम्मान प्रदान किया गया।

एस्ट्रॉलाजिकल रिसर्च प्रोजेक्ट, कोलकाता, द्वारा सन् 2006 में आयोजित 29वीं इंटरनेशनल एस्ट्रॉलाजी एण्ड ओरियन्टल हेरिटेज कान्फ्रेंस में उन्हें **'महर्षि वेदव्यास सम्मान'** द्वारा सम्मानित किया गया।

अमेरिकन बायोग्रेफिकल इन्स्टीट्यूट द्वारा सन् 2003 में और पुनः सन्

2004 में **'Man of the Year'** की प्रतिष्ठा सूचक उपाधि के लिए डॉ. जैन को उनकी विशिष्ट उपलब्धियों के लिए नामित किया गया। यह उपाधि विश्व भर से उन व्यक्तियों की पहचान कर जिनका कृतित्व, उपलब्धियां और विशिष्ट लक्ष्य प्राप्ति के लिए प्रतिबद्धता उत्कृष्ट समझे जाते हैं, सम्मानसूचनार्थ प्रतिवर्ष प्रदान की जाती है।

परिचय संदर्भ : डॉ. जैन का परिचय संदर्भ निम्नलिखित संदर्भ पुस्तकाओं में उपलब्ध है–

Progressive Jains of India, 1975

Reference Asia, 1987 & 1992

उत्तर प्रदेश साहित्यकार निर्देशिका, 1995

हिन्दी साहित्यकार संदर्भ कोष, 1997

अंत समय :

आजीवन निस्वार्थ भाव से, स्वान्तः सुखाय, बिना किसी पद, मान अथवा लाभ की आकांक्षा के, अपनी ही जमापूंजी खर्चकर शोध एवं तथ्य परक लेखन द्वारा ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय मुद्दों पर अलख जगाते रहे।

वैश्विक महामारी कोरोना के चलते गत 22 अगस्त, 2020 ई. को आप संक्रमित हो गये। पिताजी की सदैव इच्छा रहती थी कि उनको अस्पताल में भर्ती न कराया जाय। उनकी इच्छा के अनुरूप हमारी पुत्री डॉ. तन्वी ने घर पर ही अपने बाबाजी की चिकित्सा की। हमारी भतीजी मेहा जोकि एम्स, पटना में कार्यरत है, ने जो दवायें खुले बाजार में उपलब्ध नहीं थीं उनका प्रबंध किया। पुत्र विभव ने भी बहुत सेवा की। हमारे अग्रज श्री नलिन कान्त जो कि स्वयं भी संक्रमित थे, पर पिताजी की सीधी देख–भाल कर रहे थे। पिताजी की ऑक्सीजन अपने मानक स्तर से कम हो रही थी, घर में ही ऑक्सीजन सिलेण्डर एवं कोविड नर्स का भी प्रबंध किया गया। वो ठीक हो रहे थे, दशलाक्षणी पर्व के दौरान दसों दिन 'गूगल मीट' पर समस्त परिवार के साथ ही आरती पर सम्मलित होते रहे। प्रत्येक परिवारजन के लिए उसको देखते ही आपका हाथ स्वतः आशीष के लिए उठ जाता था और 'सदा सुखी रहो' आशीर्वाद देते थे। पुत्री डॉ. तन्वी, अग्रज श्री नलिन कान्त, भतीजी मेहा और पुत्र विभव के अथक प्रयासों का सकारात्मक परिणाम हुआ, 14 सितंबर,

2020 ई0 को कराये गये परीक्षण में कोरोना मुक्त निकले और ऑक्सीजन स्तर भी ठीक हुआ। किन्तु कोरोना के उत्तर प्रभाव के क़ारण फेफड़े में संक्रमण रहा और मंद ज्वर आता रहा। स्वस्थ होने की दृढ़ इच्छाशक्ति होने पर भी अंत के 2–3 दिनों में उनको यह अहसास होने लगा था कि सम्भवतः बीमारी से उबरना संभव नहीं है। अन्तिम दिनों में उन्होंने खाना–पीना लगभग बन्द कर दिया था।

मेरठ से 3 अक्टूबर, 2020 ई. को हमारे सबसे बड़े भाई श्री शिरीष कान्त सपरिवार हमारे परिवार के नवीनतम सदस्य और पिताजी के प्रपौत्र ऋशान जो कि गत 6 अप्रैल, 2020 ई. को ही जन्मे थे, के साथ मिलने आये थे। इनके अलावा दो प्रपौत्रियाँ भी हैं–भतीजे शिशिर की बेटी नाइशा और मलय की बेटी ऋत्वी। ऋत्वी भी आयी थी।

पिताजी की काया जर्जर हो चुकी थी पर उनका मन–मस्तिष्क अंत समय तक सजग रहा, स्मरण शक्ति ठीक और भाव निर्मल। फिर वो दु:ख भरी घड़ी आ ही पंहुची जो असह्य पर शाश्वत सत्य है। प्रख्यात इतिहासविद्, प्रखर समालोचक, प्रगतिशील लेखक, स्वतंत्र चिंतक, निष्पक्ष एवं निर्भीक संपादक और ओजस्वी वक्ता डॉ. शशि कान्त जैन गत् 30 अक्टूबर 2020 ई., शरद पूर्णिमा के दिन अपरान्ह 3.30 बजे विगत लगभग दो माह से अस्वस्थ चल रही नश्वर काया का परित्याग कर इस असार संसार से विदा ले देवलोक वासी हो गये।

❑

महावीर और उनका संदेश

(डॉ. शशि कान्त जैन का दिनांक 6 अप्रैल, 1952 ई. को लखनऊ के दैनिक पत्र 'नवजीवन' में प्रकाशित सर्वप्रथम लेख)

महावीर और उनका संदेश

श्री शशिकांत जैन

बुद्ध और महावीर—हमारे देश में अहिंसा के दो सबसे महान प्रचारक हुए हैं। महावीर की २५५१ वीं जयन्ती आगामी मंगलवार को सारे भारत में मनाई जायगी। इस लेख में महावीर का जीवन-परिचय तथा उनके संदेश की मुख्य-मुख्य बातें बताई गई हैं।

इतिहास के पन्ने पलटने पर हम देखते हैं कि ईसा पूर्व छठी शताब्दी में सारे सभ्य जगत में जागृति की एक लहर–सी आ गई थी। हम देखते हैं कि सांसारिक दुखों से सन्तप्त मानव को उबारने के लिये कितने ही महात्माओं ने जन्म लिया। उस समय धर्म के क्षेत्र में क्रिया–काण्ड बहुत अधिक बढ़ गया था और सामाजिक क्षेत्र में मनुष्यों में वर्ण–भेद की रेखा खिंच चुकी थी। ऐसे समय पूर्वी तथा उत्तर–पूर्वी भारत में कई विचारशील महापुरुष प्रकट हुए। इनमें प्रमुख जैनों के 24वें तीर्थंकर वर्द्धमान महावीर और बौद्धधर्म के प्रवर्तक महात्मा बुद्ध थे। बौद्ध ग्रंथों में पांच अन्य तीर्थकों के नाम भी दिये हैं–यथा पूरण कस्सप, अजित केसकम्बलिन, मक्खलि गोशाल, पकुद्ध कच्चायन और संजय वेलट्ठिपुत्त। इन सभी की शिक्षाओं में तत्कालीन व्यवस्था के प्रति क्षोभ था और प्राणियों के प्रति दया भाव पर आधारित एक दिव्य संदेश था।

मगधराज के कल्याण के लिए किये जाने वाले एक महायज्ञ का वर्णन हमें बौद्ध ग्रंथों में मिलता है, जो उस समय के क्रिया–कांड एवं याज्ञिक हिंसा पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालता है। यज्ञ मंडप में एक ओर कई सहस्त्र पशु होम किये जाने के लिए बंधे थे और दूसरी ओर सहस्त्रों की संख्या में दास–दासियां कार्य में संलग्न थीं, जिनकी

दशा भी उन पशुओं के समान थी। जरा–सी त्रुटि पर कोड़ों की वर्षा होने लगती थी। इन दास–दासियों का भाग्य उन बलि–पशुओं से भी पोच था, क्योंकि ये तो एक बार ही इन हिंस्त्र मानवों के हाथ से इस जन्म के दुख से छुटकारा पा लेते थे, परन्तु इन बेचारों को पता नहीं कब तक कष्ट सहन करना पड़ता था। यह थी उस समय की धार्मिक दशा।

इतना ही नहीं, बाह्मणों ने राज्य–कार्य में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया था, जिसे क्षत्रिय आसानी से सहन नहीं कर सकते थे। इसकी प्रतिक्रिया के केन्द्र मुख्यतः तत्कालीन गणतंत्र थे और यही कारण है कि उस समय के दोनों प्रमुख समाज–सुधारक गणतंत्रीय राज्यों से ही आये।

महावीर सच्चे अर्थों में क्रांतिकारी थे। उन्होंने उस समय के वातावरण में व्याप्त हिंसा के विरुद्ध आवाज उठाई और लोगों को अहिंसा का उपदेश दिया। अहिंसा वास्तव में प्रेम का सिद्धान्त है। यह सब मनुष्यों से प्रेम पूर्ण व्यवहार किये जाने की अपेक्षा रखता है। मनुष्य की कृत्रिम असमानताओं के लिए इसमें कोई स्थान नहीं है। उन्होंने प्रेम के क्षेत्र को मनुष्यों तक ही सीमित नहीं रखा, वरन् मूक पशुओं तक विकीर्ण कर दिया।

बौद्धग्रंथों में 'निगण्ठ नातपुत्र' महावीर के व्यक्तित्व पर कुछ प्रकाश डाला गया है। 'निगण्ठ' अर्थात् 'निर्ग्रन्थ' शब्द यह सूचित करता है कि महावीर सर्व वाह्य एवं आन्तरिक बंधनों से मुक्त थे। इसी प्रकार 'नातपुत्र' अर्थात ज्ञातृपुत्र उपाधि से सूचित होता है कि वे ज्ञातृकुल के थे। ज्ञातृकुल अष्टकुलिक वज्जिसंघ का एक सदस्य था। इस संघ के अन्य दो ज्ञात सदस्य मिथिला के वैदेह और वैशाली के लिच्छवि थे। ज्ञातृकुल का केन्द्रस्थल वज्जिसंघ की राजधानी वैशाली के निकट अवस्थित कुण्डग्राम था। वैशाली को बिहार के मुजफ्फरपुर जिले के बसाढ नामक ग्राम से चीन्हा गया है और कुण्डग्राम अथवा कुण्डलपुर को कोल्लग नामक ग्राम से। वज्जिसंघ के नागरिक अपने को 'राजा' कहते थे और इसीलिये कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में इस संघ को 'राजशब्दोपजीविनः'' कहा है।

चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को, आज से 2551 वर्ष पूर्व ज्ञातृकुल के एक सम्मान्य घराने में महावीर का जन्म हुआ था। उनके पिता राजा सिद्धार्थ उस समय ज्ञातृकुल के अध्यक्ष थे। इनकी माता त्रिशला वज्जिसंघ के अधिनायक राजा चेटक की बहिन थी। इनके जन्मते ही कुटुम्ब की प्रतिष्ठा में अभिवृद्धि हुई, इसलिये इनका नाम 'वर्द्धमान' रखा गया।

प्राचीन साहित्य में इनके गर्भ में आने के समय से ही बहुत से अतिशयों का वर्णन मिलता है, जिससे इतना निष्कर्ष अवश्य निकाला जा सकता है कि इनका लालन–पालन बहुत ही समृद्ध एवं वैभवपूर्ण वातावरण में हुआ था। तथापि संसार के धन वैभव से उन्हें शांति नहीं मिली। बाल्यकाल से ही काफी विचाराशील थे और जैसे–जैसे वयस्क होते गये संसार के क्षणिक सुखों से उन्हें अरुचि होती गई। तीस वर्ष की अवस्था में उन्होंने घर छोड़ वन की राह ली और प्राणीमात्र को संसार के दुखों से मुक्त करने के लिये कठोर तपश्चरण किया। 12 वर्ष 6 माह 15 दिन के कठोर तपश्चरण के पश्चात् वैशाख शुक्ल 10 को उज्जवलिया नदी के उत्तरी तट पर जम्भिय ग्राम के समीप एक शाल वृक्ष के नीचे उन्हें केवल ज्ञान की प्राप्ति हुई। तभी से वे 'जिन' एवं 'महावीर' कहलाये। तीस वर्ष उपदेश देने के बाद महावीर ने 72 वर्ष की अवस्था में 527 वर्ष ईसा पूर्व में पावा नामक स्थान पर निर्वाण लाभ किया।

महावीर के लिए 'संघी चैव गणी च गणचरियो च ञातो यसस्सी तित्थकरो साधुसम्मतो बहुजनस्स रत्तञ्ञू निरपब्बजितो, (एक संघ एवं अनुयायि समुदाय का अध्यक्ष, एक सिद्धान्त का आचार्य, एक तीर्थक के रूप में सर्व–विदित एवं यश को प्राप्त, जनता द्वारा समादृत अनुभवशील व्यक्ति जो कि दीर्घकाल से प्रव्रजित रहा है) और इसी के साथ महात्मा बुद्ध को नवपब्बजित (नया प्रव्रजित) कहा जाना यह दिखलाता है कि महावीर बुद्ध के समकालीन ही नहीं वरन् उनसे जेठे भी थे। इससे यह भी स्पष्ट है कि गौतम बुद्ध महावीर का कितना सम्मान करते थे। जहाँ तक हमारे ऐतिहासिक साधनों का प्रश्न है वे इस विषय में मौन हैं कि कभी मानव जाति की इन दो महान विभूतियों की परस्पर भेंट भी हुई या नहीं, परन्तु इनके विचारों में परस्पर भेंट अवश्य हुई। दोनों का लक्ष्य एक ही था। अन्तर इतना था कि महावीर को एक परम्परा मिली और बुद्ध ने अपना मार्ग स्वयं खोजा। तथापि बुद्ध 'मध्यमार्ग' में रुक गये, परन्तु महावीर आगे ही बढ़ते गये और अंतिम छोर तक जाकर ही उन्होंने विश्राम लिया।

महावीर ने हमें तीन शिक्षाएं दी हैं। अहिंसा इनमें प्रमुख है जिसका ऊपर निर्देश किया जा चुका है। दूसरी है साम्यवाद। उनका कहना था कि सभी प्राणियों में – लघुतम एक–कोष्ठीय जीवों से लेकर भव्यतम मानव–प्राणी तक – एक स्वतंत्र आत्मा है जो अपने में स्वयंपूर्ण सत्ता है। उन्होंने यह भी

बताया कि इन सभी आत्माओं में एक आन्तरिक समानता है कि यद्यपि ये विभिन्न आत्मायें शारीरिक एवं आध्यात्मिक विकास की विविध अवस्थाओं में हो सकती हैं, तथापि ये सब ही सुख और दुख का अनुभव करती हैं, सब अपने दुखपूर्ण वातावरण को दूर करना चाहती हैं तथा सुख की इच्छा रखती हैं, सभी अपने कल्याण के लिए इच्छा एवं कार्य करने के लिए स्वतंत्र हैं और सब ही में मोक्ष प्राप्त कर लेने की क्षमता है। यह विश्वास आधुनिक युग में फैली हुई जातीय, वर्गीय एवं आर्थिक असमानताओं का बड़ा ही सुन्दर उपचार है।

इस संबंध में गृहस्थों के लिए निर्धारित–परिग्रह परिमाण व्रत का भी उल्लेख किया जा सकता है जो आज के युग की सब कुरीतियों की जड़–तृष्णा को बिना किसी बाहरी उपाय के विजित करने का रास्ता बताता है। परिग्रह अर्थात् सर्ववाह्य सम्पत्ति पर स्वयं ही एक सीमा निर्धारित कर लेने से आज का विश्व वर्ग–संघर्ष की भीषणता से आसानी से बच सकता है।

कर्म सिद्धान्त महावीर की तीसरी प्रमुख शिक्षा है। महावीर ने बताया कि व्यक्ति जो कुछ भी अनुभव करता है, चाहे वह सुखद हो अथवा दुखद, अथवा चाहे वह ना तो सुखद ही हो और ना दुखद ही, यह सब पहले किये गये उसके कर्मों का ही फल है। इसका अर्थ हुआ कि व्यक्ति स्वयं ही अपना विधाता है। अपने सुख–दुख के लिए वह स्वयं ही उत्तरदायी है। एक प्रकार की आत्मनिर्भरता की भावना हमें महावीर के उपदेश में मिलती है जो आज हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है।

'पुरिसा तुममेव तुमं मित्तं, किं बहिया मित्तमिच्छसि'

(पुरुषों! तुम ही अपने मित्र हो, क्यों बाहर मित्र ढूंढ़ रहे हो?)

'सव्वतो पमत्तस्य भयं सव्वतो अप्पमत्तस्य णात्थि भयं।'

(प्रमादी को चारों ओर भय ही भय है, अप्रमादी को कहीं भय नहीं।)

आज स्वतंत्र भारत को आत्मबल एवं परिश्रम की आवश्यकता है। यदि हम महावीर की उक्त दो शिक्षाओं को ही स्मरण कर अपने कार्य में संलग्न हो जायें, तब हम न केवल अपना, बल्कि लोक का भी कल्याण कर सकेंगे।

❑

The Teachings of Mahavira

(First article published in 'The Pioneer' dtd. 8th April, 1952)

- Shashi Kant Jain

The four basic elements present in human society which have constantly been agitating the minds of thinkers and social reformers are racial superiority, economical inequality, tendency to set matters right by means of war and other violent means and an ever-growing selfishness. Ancient Indian thinkers attributed only the noble qualities to man and diagnosed these elements as due to his perverted nature. Thinkers and social reformers throughout the ages and in all parts of the world are agreed on the point that elimination of these vices in human society is the prerequisite to the rebuilding of a social structure which would ensure peace and happiness to all human beings. Many modern thinkers tried to solve the problem in a number of ways but the object is still far from being attained. They failed in their endeavour due to the fact that their approach to the problem was external and the remedies prescribed by them were eoercive and arbitrary.

Mahatma Gandhi, the Father of the Indian Nation, was the only person who succeeded to a certain extent in approaching the problem in the right perspective. He realised the futility of modern theories very early in his life and went to the sages and seers of old to guide him in the noble work of liberating his own country from foreign bondage as well as of showing to the mankind the right way of emancipation from the trials and tribulations which are due to the perverted nature of Man. He drew his inspiration mainly from two great men- Lord Mahavira, the last of the 24 Tirthankaras of the Jainas, and Lord Buddha, the founder of Buddhism. Both of them lived in the 6th century B.C. when a wave of reaction and revolution against the set orthodoxies in the fields of philosophical concepts and religious rituals swept over the whole civilised world. While Buddha halted in the 'middle path' Mahavira explored the whole region up to the farthest end. Their sincerity for the good and welfare of mankind and the high esteem in which they were held in their life time are well borne out by the very peaceful manner in which they attained Nirvana which vividly contrasts with the martyr's deaths of the two other great benefactors of humanity' namely, Socrates and Jesus Christ.

Mahavira taught a mysticism of a very rationalistic and realistic type. His philosophy is based on a healthy spirit of critical appreciation and he is nowhere dogmatic. He asked his audience to scrutinise throughly everything that might come in their way and not to accept anything as dogmatic He emphasised on the realisation of self. The watchword of his teachings was " know thy self" and he wisely advised people to exercise self-restraint in every sphere. This doctrine of restraint solves many of our problems. All the troubles we are under going are due to greed-craving for more and more. If we be restrained, if we put a limit to our possessions the economic inequality will be no more. The action would be a voluntary one and no external agency would be required to snatch from us our personal belongings and wealth. No factious class-wars will ensue, but a mutual understanding will pave the way for social and economic equality.

Independent Soul

Moreover, he scientifically worked out the theory that all living beings, from the smallest organism to the noblest human beings, are endowed with an independent soul, which is an eternal and complete entity in itself, that all these souls have inherent equality, that though these different soul may be in different stages of physical and spiritual development, they are all alike susceptible to pain and pleasure, all of them want to be relived of their painful conditions and long for happiness and that they are all free to will and act for their own good and are equally capable of attaining salvation, which means attainment of all the nobel qualities of a being to the maximum. This belief nips in the bud all theories which endeavour to raise a wall between individual and individual and bring out the feelings of racial, communal and sexual superiority.

The main pivot of Mahavira's teachings was "ahimsa." Its great utility even in the political field is apparent from the history of our own struggle for independence. Mahavira perfected it in one sphere- in the sphere of individual and social uplift. Gandhi applied and elucidated it in another direction and proved it to be an effective weapon in the political field as well.The mission of Acharya Vinoba Bhave, the great sage of modern India, in securing land for the landless by purely voluntary gifts is yet another instance of how the teachings of this Great Benefactor of Mankind can be applied successfully to

solve our present day problems and to alleviate human sufferings.

Doctrine of Love

The learned historian Sri Charan Das Chaterji, who is a great scholar of ancient Indian languages and has done remarkable researches in Jain history and philosophy, gives the Ahimsavada of Mahavira a modern name- the "Doctrine of Love." As a matter of fact, Ahimsa–non–injury to all animate beings, even to one's own–self–cannot be better understood by any other modern term than by "love." "Love all " is the keynote of all His teachings. If men learn to love each other, they will try to understand each other. There will be no more any misunderstanding and no more any fear of war, war can only be eliminated if there is a complete understanding among ourselves, a sympathetic attitude has developed in us, we cease to be jealous and callous but pay due regards to the feelings of other. This is what the Lord taught !

The greatest necessity of the world today is peace. Everybody is anxious for peace. But peace cannot be established by a show of arms and by inventing daily more and more destructive weapons. Science today is not being used for the conservation of mankind but for its destruction. Scientific knowledge should be so applied that greater benefit may accrue to us. Everything in us should be pervaded with a feeling of love–based on a sympathetic understanding of each other. We should not be fooled but we should also not be aggressive. As Mahavira taught, we should think not only think, but scrutinise from every point of view–before we act, giving ourselves to perfect extrospection and introspection.

We can best prepetuate the memory of our great sages and seers, not by merely following blindly their commands or by totally rejecting their counsels, but by thoughtfully putting their sayings to test and solving our problems by their aid. So much has been left behind by our fore fathers that we are unable even to take their stock. We must utilise that material, show to the world a new way of life, a new method of solving its problems instead of looking helplessly towards others. Modifications according to the changed circumstances should be made, but the truth must not be ignored, rather, it should be elucidated and elaborated. This is the only way in which we can pay our tribute to Lord Mahavira as well as to all other great thinkers of the past and the present. ❑

डॉ. शशि कान्त जैन के कुछ छपे–अनछपे भाव (पद्य)

तिमिर–हर

– शशि कान्त

(1)

जगतीतल पर तम छाया,
आपा भी सूझ न पाया
राका दिवा उषा संध्या,
मानव कुछ देख न पाया।

(2)

स्थिति असह्य होने लगी,
बुद्धि विवेक खोने लगी,
प्रकृति पछताने लगी,
करनी पर बिलाने लगी।

(3)

देख यह घोर दुरावस्था,
रवि शशि स्व प्रकाशपुंज
संग, आये करने व्यवस्था,
साथ लाये तारक पुंज।

(4)

रवि प्रकाश खूब देता,
तम पूरा ही हर लेता,
परन्तु उसके प्रखर कर,
सुखाते जीवन तरूवर।

(5)

शशि राकापति बन आता,
तारों की पाँति सजाता,
शुभ ज्योत्सना छिटकाता,
शान्ति सन्देश सुनाता।

(6)

रवि कर प्रखर ताप भरे,
शशि कर स्निग्ध शीत धरे,
एक करता जीवन निष्प्राण,
एक सींचता जीवन–प्राण।

(7)

रवि शशि में इतना अंतर,
एक सुधाबिन एंक सुधाकर,
सुधा करती शीत शशि को।
शान्ति देती औरों को।

(8)

ताप तपाता ही रवि को,
स्वयं विदग्ध, औरों को
कैसे फिर वह मुदित करे,
अन्तर्ज्वाला शान्त करे।

(9)

आकर वस्तु का जो संग,
हो सकता न ऐसे भंग,
शशि सुधा मंजुलतामय,
मुसकाता सानन्द अभय।

(10)

शशि रवि पूरक एक दूजे के
प्रतीक बने सुख दुःख के,
जीवन में ज्योति जगाते,
संघर्षोचित उसे बनाते।

(11)

आशा निराशा के रूप,
शान्ति तृष्णा के तद्रूप,
अन्धकार के शत्रु अनूप,
प्रकाश तेज के सरूप।

(12)

जीवन में थिरता लाते,
जीवन सुपूर्ण बनाते,
मानव भी क्या कर सकता
क्या ना उनसा बन सकता?

('वीर' पत्रिका में दि. 29—11—1957 को प्रकाशित)

इन अलसाई–सी पलकों में ....

— शशि कान्त

इन अलसाई–सी पलकों में जीवन अंगड़ाई लेता है।
उन्मद यौवन की बेला में इक मधुरस घोले देता है।

उन उलझी–उलझी अलकों में ताना–बाना बुन लेता है
बीती यादों का, आती बातों का, बिनदेखी घातों का।
कालापन दिखता केशों में ? देखो, सचमूच यह प्रहरी है
उसकी मादक चन्चलता का, उसकी निश्छल सुन्दरता का।

कर वंदन के मृदु स्पन्दन में कुछ रुकता–रिसता जाता है,
अपनी उत्कट विह्वलता का आभास कराता जाता है।
स्मित की झीनी–सी रेखा पर भाव सलोने छा जाते हैं
मुक्त हास की किल–किल में कुछ बात अनोखी कह जाते हैं।

मधुर मिलन का क्षण–क्षण अनुपम, आह्लाद समन्वित स्वप्निल–सा,
वह खोया–सा अंतर में ही चित्र बहुत संजोया करता है।
कृष्ण व्योम में जैसे तारागण झिलमिल–झिलमिल करते हैं,
उसके सूनेपन को भावुक छायायें पूरा करती हैं।

इन अलसाई–सी पलकों में जीवन अंगड़ाई लेता है।
काजल की मोहक डोरी में प्राणों को बांधे लेता है ।।

❑

भारतीय युवक से

— **शशि कान्त**

ओ शान्ति के प्रहरी,
बोल अब क्रान्ति की स्वर–लहरी !

भारत आक्रान्त पर पस्त नहीं,
विनयवान पर त्रस्त नहीं,
विश्वास अडिग औ ध्वस्त नहीं।

कोटि–कोटि कण्ठ बोल रहे जय–भेरी,
बोल अब क्रान्ति की स्वर–लहरी !

भारत है साहस की खान,
यह तो उद्यम से धनवान,
यहां सीमंतिनी भी अतुल धैर्यवान।

बाल–वृद्ध सब ही में लड़ने की ठहरी,
बोल अब क्रान्ति की स्वर–लहरी !

भारत की जनता का प्रतिकार
करेगा चीन (शत्रु) का सत्कार,
नहीं हिमालय को चीत्कार।

मत छान और अब गहरी,
बोल अब क्रान्ति की स्वर–लहरी !

ओ शान्ति के प्रहरी,
बोल अब क्रान्ति की स्वर–लहरी !!

(1962 में भारत–चीन युद्ध के समय अवतरित भाव, बाद में कविता को व्यापक आयाम देने के लिये 'चीन' के स्थान पर 'शत्रु' शब्द का प्रयोग किया।)

❑

छिट–पुट (उर्दु)

— शशि कान्त

काफ़िर हूँ ना मोमिन हूँ , महज़ इन्सान हूँ।
इख़्लाक से है वास्ता मेरा, और मंज़िल आमीन है।

❑

हिन्दू हूँ, मुस्लिम हूँ या कि ईसाई हूँ
जैन हूँ, बुद्ध हूँ या कि सिख हूँ
रोज़ा–नमाज या कि पूजा करता हूँ
बुत परस्त हूँ या कि ना–बुत हूँ
ये सब लेबल हैं तफ़र्रक़ात के
और रूकावटें हैं इन्सानी इख़्लाक के।

❑

जीवन–चक्र

— डॉ. शशि कान्त

आंधी आयी– यौवन वेला– रात अंधेरी–सपनों की दुनिया
मदिर मधु गुंजन
दो निश्वास निलय
किसलय कम्पित
भावों की झंझा
अन्धड़ पतझड़ तड़पन कम्पन
क्लान्त प्रक्रति शमित शान्त !

बादल छाये– घना कुहासा–सा
मेघों से धिरा अंधेरा–सा
स्वप्निल जग
आन्दोलित मन
पयपूरित बोझिल तन
एक प्रतीक्षा
शत–शत उद्गार
सहस्त्र उत्कंठा !

मेह बरसा–

बादल घुमड़ उठे
बिजली कड़क उठी
मीठी–मीठी फुहार
ठंडी–ठंडी बयार
एकदम अंधकार
फिर चीत्कार
और मूसल वर्षाधार
लो मेघ से मेघपुरुष
चन्द्रोज्वल
सूर्यधवल !

फूल खिला–

ममता की गोद
वात्सल्य की ओट
स्नेह से सींचा
आशीष से भीगा
फलता फूलता कामना कुंज में
उत्फुल्ल आशापुंज !

ताप तपा–

ग्रीष्म में सूर्य की रश्मि
– उग्रताप –
गोद छीन लेती
ओट तोड़ देती
स्नेह सुखा देती
आशीष जला देती
एकाकी फूल
चुनौती देता
उछलता कूदता दौड़ता भागता
रुकता नहीं
जर्जर होता
पंखुड़ी–पंखुड़ी झुलस–झुलस जाती
पर वह खड़ा मुस्काता
उन्नत मस्तक !

फूल झड़ा–

पंखुड़ी गिरने लगीं
पराग उड़ने लगा
देह क्लान्त
मन श्रान्त
कृतकार्यता का मोद
चिरशान्ति की गोद,
फूल यों झड़ने लगा !

धूल उड़ी –

नीचे धूल का पिण्ड
समा लेता फूल को झड़ते ही
फूल की धूल
धूल में फूल
हवायें चलतीं
धूल उड़ती
आंधी आती
फूल की धूल भी न रहती !!

❑

सपनों का राही

– डॉ. शशि कान्त

मैं सपनों का राही हूँ, मुझे अभी मत छेड़ो।

बहुत देर से सोया हूँ, अभी कहीं खोया हूँ।
अवचेतन के उपवन में, चेतन को रहने दो ।। 1 ।।

मैं सपनों का राही हूँ, मुझे अभी मत छेड़ो।

क्षितिज पटल असीम आकाश, दृष्टि लोक झीना प्रकाश।
कल्पना की तूलिका से, स्मृति को संजोने दो ।। 2 ।।

मैं सपनों का राही हूँ, मुझे अभी मत छेड़ो।

उत्ताल तरंगें कम्पित वातायन, झिलमिल–झिलमिल रुपायन।
छाया की दृश्यावली में, मौन मुग्ध होने दो ।। 3 ।।

मैं सपनों का राही हूँ, मुझे अभी मत छेड़ो।

सागर तल की गम्भीरता, निविड़ तम की अन्तहीनता।
मन्द मृदु मधुर सुरों के स्पन्दन में खोने दो। ।। 4 ।।

मैं सपनों का राही हूँ, मुझे अभी मत छेड़ो।

आगे कल कब आयेगा, पीछे कल कब जायेगा।
कल का विवाद छोड़, आज ही में जीने दो ।। 5 ।।

मैं सपनों का राही हूँ, मुझे अभी मत छेड़ो।

याद मुझे जब जिसकी आये, छाया बन सपनों में छाये।
दीप शिखा की मद्धिम लौ में, छवि साकार बनी रहने दो ।। 6 ।।

मैं सपनों का राही हूँ, मुझे अभी मत छेड़ो।।

❑

शाश्वत राग

– डॉ. शशि कान्त

स्मृति को झंकृत कर दे, ऐसा राग सुनाता जा।।

अक्षि–पटल में सोयी, छवि को दुलराता जा।
सम्मोहन की झीनी चादर, हौले से ढुलकाता जा ।। 1।।

स्मृति को झंकृत कर दे, ऐसा राग सुनाता जा ।।

मन्द गन्ध की भीनी सुवास, दिसि–दिसि फहराता जा।
राही के पथ की कुंठा, ढलकाता–विखराता जा ।। 2।।

स्मृति को झंकृत कर दे, ऐसा राग सुनाता जा ।।

चन्द्र–वदन है सुधा–सदन, अमृत–कण टपकाता जा।
अवसाद ठहर नहीं पाये, मन्द–मन्द मुस्काता जा ।। 3।।

स्मृति को झंकृत कर दे, ऐसा राग सुनाता जा ।।

❑

इतिहास–संदेश

— डॉ. शशि कान्त

काल का चक्र चलता रहेगा, इतिहास प्रतिपल बनता रहेगा ।।

शक्ति का निरंकुश प्रवर्तन
मानवता को कुचलता रहेगा।
दानव का मुखोटा नोचकर
फिर भी मानव संभलता रहेगा ।। 1 ।।

काल का चक्र चलता रहेगा, इतिहास प्रतिपल बनता रहेगा ।।

काल की धुरी पर युगों का
याम क्षणों में बदलता रहेगा।
व्यक्ति का अहंकार और अन्ध स्वार्थ
उसे ही कुचलता रहेगा ।। 2 ।।

काल का चक्र चलता रहेगा, इतिहास प्रतिपल बनता रहेगा ।।

संचितो वंचितों का संघर्ष
क्रान्ति का सूत्रपात करता रहेगा।
मूल्यों का अवमूल्यन
नव मूल्यों का सृजन करता रहेगा ।। 3 ।।

काल का चक्र चलता रहेगा, इतिहास प्रतिपल बनता रहेगा ।।

काल की सीमा असीम
व्यक्ति को निस्सीम करती रहेगी।
क्रान्ति के बाद विश्रान्ति
और पुनः क्रान्ति होती रहेगी ।। 4 ।।

काल का चक्र चलता रहेगा, इतिहास प्रतिपल बनता रहेगा ।।

स्वार्थ के पक्षधर भ्रमजाल
और भक्ति का नाटक रचाते रहेंगे।
तो भी शोधक छलावों से उबर
सत्य की ओर बढ़ते रहेंगे ।। 5 ।।

काल का चक्र चलता रहेगा, इतिहास प्रतिपल बनता रहेगा ।।

समय रुकेगा नहीं,
इतिहास बढ़ता चलेगा।
व्यक्ति झुकेगा नहीं,
पद–चिन्ह छोड़ता चलेगा ।। 6 ।।

काल का चक्र चलता रहेगा, इतिहास प्रतिपल बनता रहेगा ।।

ऐसे पद–चिन्ह छोड़ना
जो बटोही को रास्ता दिखाते रहेंगे।
ऐसी ठोकरें बनाना नहीं
जो आने वाले को गिराते रहेंगे ।। 7 ।।

काल का चक्र चलता रहेगा, इतिहास प्रतिपल बनता रहेगा ।।

❑

क्या खोया, क्या पाया

(डॉ. शशि कान्त की षष्ठिपूर्ति पर दि. 12–02–1992 को आयोजित काव्य संध्या पर मित्रों के आग्रह पर उनके द्वारा प्रस्तुत अपने साठ वर्ष का लेखा–जोखा)

साठ बरस जीया हूं
सोचकर विस्मय होता है,
कितने युग देख लिये
पर सब कुछ जैसे आज भी जीता है।

आदर्शों का विलय और
आकांक्षाओं का उदय होते देखा,
और देखा – मूल्यों का अवसान
और स्वहित साधन का अभियान।

निपट बेहयाई से मुस्कराते चेहरे
और शवों पर बैठे शक्ति का आवाहन करते,
पर जनता से डरते और पहरे में चलते
जन–नेता भी देख लिये।

क्या कुछ बदला आदिम युग से अब तक ?–
वही द्वन्द्व, वही संघर्ष
वही शान्ति की अभिलाषा जन–जन के मन में,
पर वही स्वार्थ, दम्भ और
शोषण की ज्वाला जन–नेता के मन में।
फिर भी मैंने देखा है–
व्यक्ति बड़ा होता है युग से।

मुझे अपने साथी–संगी जन–जन का
भरपूर प्यार मिला, सहयोग मिला, सहकार मिला।
निराशा के क्षण भी आये, पर हताशा की नौबत नहीं आई कभी
गुरुजनों का आशीष हटाता रहा विघ्न–बाधा सभी।

आज नत हूं श्रद्धा से उन सबके प्रति
जिन्होंने प्रेरणा दी, प्रोत्साहन दिया,
और आभारी हूं ,उन सभी के प्रति
जिन्होंने प्यार किया, स्नेह दिया, सहकार किया।।

('शोधादर्श–16' में प्रकाशित)

❑

बहो, बहो, बहते चलो

– डॉ. शशि कान्त

ठहरे विचार
ठहरे पानी की तरह गंधाते हैं।
ठहरा जीवन
गतिहीन ढूह बन जाता है।
ठहरी आस्था
हृदय को निस्पन्द कर देती है।

आदि का अन्त स्वभाविक है।
जन्म और मृत्यु दो कूल हैं।

जीवन उनके बीच बहता नीर है।

बहो, बहो, बहते चलो–
चाहे धारा के साथ बहो,
चाहे धारा के विपरीत बहो।

जब तक बहने की क्षमता हो,
तभी तक जीवन की ममता हो।

('शोधादर्श–30' में प्रकाशित)

❑

हम हिन्दू हैं

– डॉ. शशि कान्त

हम हिन्दू हैं
हमें आतंक में जीने की आदत है
हम आतंकी का चेहरा नहीं उघाड़ेंगे
हम मुलायम हैं, हम सोते हैं
चेहरा उघाड़ के हमें और मत डराओ
हम तो मुद्दत से डरे–सहमें हैं।

हम हिन्दू हैं
हम वेद–पुराण पढ़ते हैं
बाइबिल–क़ुरान से डरते हैं
इतिहास की तो इति हो चुकी
तवारीख हम पढ़ते नहीं
दुनिया की सिफ़ारिश पे दम भरते हैं।

हम हिन्दू हैं
हमें आइना जब दिखाये कोई
हम आत्मा में समा जाते हैं
परमाणु–शक्ति सिद्ध होकर भी

वानर–शूकर से सहमे रहते हैं
हम अटल जन–मन भीरु हैं।

हम हिन्दु हैं
जय जय हिन्दुस्तान !
मत कहो भारत महान !!
जय जय हिन्दुस्तान !!!

(दि. 31–10–2001 को अवतरित भाव)

❑

आवाहन

मै कगार पर खड़ा

– डॉ. शशि कान्त

मैं कगार पर खड़ा,
हाथ में चिराग़ लिये
पुकारता –
कोई तो थाम ले दीया !

वक़्त गुज़र रहा
सब कुछ वही
न कुछ बदल रहा
न कुछ संवर रहां।
मैं कगार पर खड़ा——
मज़हब वही जो बांट दे
राजनीति वही जो नोट दे
अर्थनीति वह नहीं
जो स्वाभिमान स्वाधीनता दे।
मैं कगार पर खड़ा——

इन्सान बंधा हुआ
कह रहा–
अहंकार छोड़ो,

पर मुझे मत छेड़ो।

मैं कगार पर खड़ा——

आज का एक अध्यवसाय
चोरी करो
और अकड़ के चलो
पकड़ गये भी, तो निकल चलो।

मैं कगार पर खड़ा——

इतिहास की सीख व्यर्थ
सन्यास कर रहा अनर्थ
उन्माद है, त्याग अकारथ
स्वार्थ है, परमार्थ नदारद।

मैं कगार पर खड़ा——

(डॉ. शशि कान्त की पुस्तक **'नारद के संवाद'** से उद्धृत)

❑

संदेश

चिर स्वतन्त्र भारत के जन

— डॉ. शशि कान्त

नील गगन में पक्षी उड़ता चिर स्वतन्त्र
बटमार कर सकता नहीं उसे परतन्त्र।

भारत की जनता है उड़ता पक्षी
उससे खाता मात हर नरभक्षी।
अत्याचारों के पिंजड़े तोड़े हैं
अत्याचारी के जाल उधेड़े हैं।

निर्भय मानव निरंकुश शासक का काल बना
बंधन की बेड़ी चूर–चूर कर राष्ट्र स्वाभिमान बना।

बच्चे, बूढ़े और जवान–
शताधिक–कोटि भारत के जन

प्रणबद्ध करने को रक्षा
स्वतन्त्रता स्वाभिमान की।

रार भी ठानेंगे
हार नहीं मानेंगे
चाहे निरस्त्र हों, निर्वस्त्र हों,
पर न कभी भयत्रस्त और स्वार्थग्रस्त हों।

कभी न होंगे
समयसार शून्यसार निष्कामसार
दीन दास धरती पर भार।

सदा रहेंगे
कर्मठ कर्मशूर
क्रान्ति की धार !!

(डॉ. शशि कान्त की पुस्तक **'नारद के संवाद'** से उद्धृत)

❑

निर्भीक चिंतक और निष्पक्ष पुराविद–इतिहासज्ञ : डॉ. शशि कान्त जैन

– डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल

विलक्षण बौद्धिक प्रतिभा, तीक्ष्ण स्मृति और उदात्त–मानव मूल्यों के धनी स्मृति शेष डॉ. शशि कान्त जैन निष्पक्ष शोधखोज, स्पष्टवादिता, उत्कृष्ट नैतिकता, वैचारिक–दृढ़ता, निर्भीकता, निस्पृहता, निस्संगता, सत्यनिष्ठ–विचारणा,कर्तव्यनिष्ठा, अनासक्ति–बोध, अनाग्रही लेखक के रूप में सदैव स्मरण किये जाते रहेंगे। उनके विराट व्यक्तित्व के बारे में कुछ भी लिखना दैदीप्तमान सूर्य को लघुदीप दिखाने जैसा है। फिर भी डॉ. शशि कान्त जैन की इतिहास, पुरातत्व, पत्रकारिता, जैनधर्म–दर्शन, समाज–संस्कृति, संविधान–लोकतंत्र, शासन–प्रशासन, साहित्य–भाषा, आत्मीय मानवीय सम्बन्धों और निःश्रेयश के क्षेत्र में उनके अप्रतिम योगदान के प्रति अपनी विनयांजलि/श्रद्धांजलि रूप में शब्द–सुमन अर्पित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ।

इतिहास–मनीषी विद्यावारिधि स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन एवं श्रीमती अनन्त माला के ज्येष्ठ पुत्र के रूप में डॉ. शशि कान्त जैन का अवतरण दि. 12/2/1932 ई. में मेरठ में हुआ। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा मेरठ में, माध्यमिक शिक्षा लखनऊ और उच्च शिक्षा लखनऊ विश्वविद्यालय में सम्पन्न हुई। आप प्रारम्भ से ही कुशाग्र बुद्धि, मेधावी और समर्पित छात्र के रूप में रहे। आपने सन् 1953 में प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विषय में एम.ए. परीक्षा प्रथम श्रेणी एवं रूसी भाषा का डिप्लोमा परीक्षा विशेष योग्यता से उत्तीर्ण की थी। सन् 1952 में आपको स्वर्ण पदक और 1952–53 में डॉ. राधा कुमुद मुकर्जी छात्रवृत्ति का पुरस्कार पाने का सौभाग्य मिला। उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग की 1952 की परीक्षा में आप सफल रहे। तदनुसार, 1 अप्रैल 1953 से सचिवालय में सेवायोजित हुए। और कुशल प्रशासनिक अधिकारी के रूप में, पदोन्नत/सम्मानित होते हुए विशेष सचिव के पद से दिनाँक 30/06/1990 ई. को सेवानिवृत्त होकर जीवन पर्यंत इतिहास, धर्म–संस्कृति और राष्ट्रीय भावना से लोक समर्पित हो गये। सेवा निवृत्ति के बाद आपने तीन दशक तक निःस्वार्थ एवं समर्पित समाज सेवा का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया। यह ज्ञातव्य है कि आपके पिता स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जैन चाचा स्व. श्री अजित प्रसाद जैन, कनिष्ठ–भाई स्व. श्री रमा कान्त जी ने भी शासकीय सेवाओं से निवृत्त होकर शेष जीवन, मृत्यु के क्षणों

तक, समाज, धर्म–संस्कृति की सेवा में समर्पित रहकर निस्पृहता, निर्लोभता और निष्काम–धार्मिकता का आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किया जिसकी फलश्रुति बहुश्रुत **'शोधादर्श'** पत्रिका और पारदर्शी **'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति'**, लखनऊ, ऐसी एक मात्र संस्था है जो अपना वार्षिक लेखा व्यय प्रकाशित करती है। यह परम्परा अनुकरणीय है।

डॉ. शशि कान्त जैन की स्वतंत्र चिंतन और लेखन की प्रवृत्ति विद्यार्थी काल से रही। बीस वर्ष की आयु में आपका प्रथम लेख सन् 1952 में The Pioneer में प्रकाशित हुआ। यह क्रम निरंतरित रहा और हिन्दी–अंग्रेजी में आपके आलेख पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। शासकीय सेवा में रहकर आपने सन् 1965 में **'कौशाम्बी'** का हिन्दी में प्रकाशन कराया।

सेवाकाल के मध्य ही डॉ. शशि कान्त जैन ने अपना शोध–प्रबन्ध **'Political and Cultural History of Mid-North India'** पूर्ण कर पी–एच.डी की उपाधि सन् 1969 मे 37 वर्ष की आयु में प्राप्त की, जिसका प्रकाशन सन् 1987 में हुआ।

डॉ. शशि कान्त जैन की उक्त उपलब्धियों के परिप्रेक्ष्य में लेखक डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल को अपनी निजी जीवन की स्मृति का उल्लेख करना समीचीन लग रहा है। लेखक सन् 1957 में B.Com. प्रथम वर्ष का छात्र था, तब दिनाँक 16/9/57 को महाविद्यालय की पत्रिका The Holkar College Time, Indore में 19–20 वर्ष की आयु में 'जीवन का मूल्य' और दूसरा आलेख 'युग विजयी गाँधी' दिनाँक 1/2/58 के अंक में प्रकाशित हुआ। सेवाकाल में लेखक ने LL.B., M.A. (अर्थ+समाज शास्त्र) और वर्ष 1974 में (आयु 36 वर्ष) पी–एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। विपरीतताओं में, यह शिक्षा के प्रति अनुराग से सम्भव हुआ।

पुरातत्वीय क्षेत्र में डॉ. शशि कान्त जैन की बहुमूल्य और प्रेरणादायक उपलब्धि उड़ीसा के महाप्रतापी जैन राजा खारवेल के उदयगिरि की एक विशाल प्राकृतिक गुफा के मुख पर 17 पंक्तियों का 'शिलालेखीय प्राकृत भाषा' में उत्कीर्ण बाइस सौ वर्ष पूर्व के शिलालेख का गवेषणापूर्ण अध्ययन कर उसे प्रकाश में लाना है। यह शोध कृति **'The Hathigumpha Inscription of Kharvela and the Bhabru Edict of Asoka - A Critical Study'** के नाम से 1971 ई. में प्रकाशित हुई थी। इसका द्वितीय संशोधित संस्करण सन् 2000 में प्रकाशित हुआ। द्वितीय संस्करण में आपने प्राकृत भाषाओं के उद्भव तथा भारत की प्राचीन लिपियों के सम्बन्ध में दो लेख जोड़ दिये साथ ही

खारवेल सम्बन्धी कुछ विवादास्पद बिन्दुओं पर अपनी नवीन टिप्पणियाँ भी दी हैं। शोध–पत्रिकाओं में इसका समादर हुआ और यह देशी–विदेशी दो विश्व विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में सम्मिलित की गयी। यह बड़ी उपलब्धि है।

हाथीगुम्फा के शिलालेख को प्रकाश में लाने का श्रेय ई. 1825 में अंग्रेज सैलानी मि.स्टलिंग को जाता है (शोधा.–59, पृ.48)। शोधादर्श–56 में प्रकाशित आपके आलेख–'खारवेल'(पृ.12–20) में आपने शिलालेख के संशोधित पाठ की नागरी लिपि में अनुकृति और उसका हिन्दी रूपांतरण प्रकाशित किया है, जो मूलतः पठनीय है।

शिलालेख की पंक्ति 10 में भरदवस–पठनि मह में भारतवर्ष का प्रथम शिलालेखीय प्रमाण मिला जिसके आधार पर संविधान में इस देश का नाम भारतवर्ष घोषित/मान्य किया।

उक्त आलेख में डॉ. शशि कान्त जैन ने हाथीगुम्फा शिलालेख के सम्बन्ध में डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु', डॉ. लाल चन्द जैन और डॉ. भास्कर के आलेखों का उल्लेख किया जिनमें शिलालेख की लिपि और समय दर्शाई है। उनकी प्रस्तुति की भ्रांतियों का निराकरण/इंगित करते हुए निम्न भाव व्यक्त किया जो डॉ. शशि कान्त जैन की स्पष्टवादिता दर्शाता है।

"हमें बड़े संकोच और सन्ताप के साथ यह लिखना पड़ रहा है कि पूज्य आचार्य श्री के आशीर्वाद से उपरोक्त तीनों विद्वान मनीषियों ने जो परिकल्पना पूर्ण विशद विवेचन प्रस्तुत किया है उससे हम 19वीं शती के पूर्व के अन्ध–युग की ओर प्रवृत होंगे जब हम अपनी लिपि, भाषा और इतिहास भूल चुके थे और कुछ पौराणिक मिथिकों को ही इतिहास मान रहे थे। हम यह भी निवेदन करना चाहेंगे कि हम भारत के प्राचीन इतिहास, अभिलेखों और पुरा–सम्पदा के एक सामान्य शोधार्थी हैं, कोई आम्नायपरक प्रचारक विद्वान नहीं हैं जैसा कि डॉ. लाल चन्द जैन जी के हमारे लिए प्रयुक्त 'दिगम्बर विद्वान' सम्बोधन से भ्रम होता है।"

डॉ. शशि कान्त जैन की उक्त मनोव्यथा तथाकथित जैन पुरातत्व वेत्ताओं की निर्वचन–विधि, ज्ञान और अभिप्राय को व्यक्त करता है। खारवेल के शिलालेख के सम्बन्ध में 'शोधादर्श' क्रमांक 40, 41, 42, 56 एवं 59 पठनीय हैं।

पीतपत्रकारिता के दौर में स्वतंत्र–चिंतन, तथ्य परक लेखन, स्पष्टवादी और विचारोतेजक लेखन दुर्लभ है विशेषकर उस समय जबकि संचार के

माध्यम किसी विशेष रीति–नीति या शासकीय संकेतों पर आधारित हों। डॉ. शशि कान्त जैन इसके अपवाद थे उन्होंने अपनी लेखनी को तथ्यपरक, पारदर्शी और लोकोपयोगी बनाया। उनके पिताश्री डॉ. ज्योति प्रसाद जैन ने जैन दर्शन, जैन साहित्य और परम्पराओं, मानवमूल्यों और सांस्कृतिक परिदृश्य को यर्थाथ रूप में, बिना प्रतिबद्धता के प्रकाशित–स्थापित करने के लिए **शोधादर्श** पत्रिका का प्रारम्भ 1986 ई. में किया था। उन्होंने पत्रिका में प्रकाश्य सामग्री के मापदण्ड और स्थायी स्तंभों का भी निर्धारण किया था। उनके जीवन काल अर्थात दिनाँक 11/6/1988 के पूर्व, पत्रिका के 6 अंकों का सम्पादन उनके द्वारा किया था। सौभाग्य से अंक 6 में मेरा आलेख–'आचार्य कुन्दकुन्द : मोक्ष और मोक्षार्थी' भी प्रकाशित हुआ था। इस प्रकार मैं भी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के अपरोक्ष रूप से सम्पर्क में आया। अंक 6 के बाद अंक 42 (नवम्बर 2000) का सम्पादन डॉ. शशि कान्त जैन के द्वारा किया गया। अंक एक से 42 अंक का विस्तृत लेखा जोखा अंक 42 में दिया है। जो पठनीय है। डॉ. शशि कान्त जैन ने अपने सम्पादकीय–'अलविदा' से पाठकों को आश्चर्य में डाल दिया। तीर्थंकार महावीर स्मृति केन्द्र समिति से 25 वर्ष तक जुड़े रहने के बाद उन्हें परिस्थितिजन्य यह अनुभव हुआ कि संस्था के लिये वे उपयोगी नहीं हैं, अतः स्वप्रेरणा से उन्होंने अनासक्त भावपूर्वक संस्था से विदा ले ली। उनका अलविदा–कथन मार्मिक और प्रेरक है। विस्मय की बत यह है कि संस्था से अलविदा लेते समय उनके मन में कोई अन्यथा भाव नहीं था और वे संस्था से निवृत होने के बाद भी संस्था के उद्देश्यों और कार्यों के प्रति सजग और निष्ठावान रहे। यही कारण है कि लघु भ्राता श्री रमा कान्त जैन के निधन के बाद और पहले **शोधादर्श** के परामर्शदाता के रूप में सक्रिय सहयोग करते रहे।

शोधादर्श–42 के पृष्ठ 278 पर डॉ. शशि कान्त जैन के विचार बिन्दु शीर्षक में–'जैन समाज का यथार्थ–बोध' आलेख है जिसमें उन्होंने 12 बिन्दुओं के अंतर्गत तत्कालीन ज्वलंत प्रकरणों पर अपने स्पष्ट विचार, सुझाव और व्यंग्य–चेतना दर्शायी है। बिन्दु क्रमांक 1 में जैन मिलन की एक विज्ञप्ति की चर्चा है जिसमें 'वीर सदस्यों' को सुझाव दिया है कि वे मिलन के मंच से कोई विवादित बात नहीं करें जिसे कोई अस्वीकार कर दे। डॉ. शशि कान्त जैन ने इस परामर्श को 'सत्य से विरक्त' मान कर जैन मिलन की सदस्यता से इस्तीफा दे दिया (पृ.278)। अन्य बिन्दुओं पर भी डॉ. सा. ने स्पष्ट रूप से अपने विचार व्यक्त किये जो विचारणीय हैं। बिन्दु क्रमांक

12 में आपने लिखा कि 'वर्तमान में जैन पत्र–पत्रिकाओं की बाढ़ आ गई है परन्तु उनमें पं. नाथूराम प्रेमी, बा. जुगल किशोर मुख्तार........डॉ. नथमल टाटिया प्रभृति विद्वानों की शोध–खोज पूर्ण दृष्टि का प्रायः अभाव है। ऐसा प्रतीत होता है कि साधुवर्ग ने समाज की प्रबुद्धता को सोख लिया है। कहीं चिंगारी भी नहीं है। उस आशंका के प्रति कुछ लोग सचेत हों, चाहे उन्हें जैनों का सलमान रुश्दी और तस्लीमा नसरीन ही क्यों न करार दिया जाये।' आपने आगे लिखा– 'शोधादर्श तो विगत 15 वर्षों से इस दुष्कर्म के लिये पर्याप्त अपयश भी अर्जित कर चुका है। परन्तु कहीं कोई हलचल नहीं जैसे कि कहीं वीराने श्मशान में कोई बिजली चमकी भर हो। ऐसे प्रबुद्धता–शून्य शुद्ध–बुद्ध स्वात्मलीन समाज का क्या हश्र होगा, अनुमान करने की आवश्यकता नहीं है।'

इसी अंक के समाचार विमर्श (पृ. 323) में लेख किया है कि श्री मुरली मनोहर जोशी ने अपने इन्दौर–उज्जैन प्रवास में यह घोषणा की कि 'NCERT' द्वारा कक्षा 11 हेतु प्रकाशित इतिहास की पाठ्य–पुस्तक 'प्राचीन भारत' से 'जैन धर्म एवं बौद्ध धर्म' विषयक पाठ हटा दिया जायेगा। विमर्शकार श्री अजित प्रसाद जैन ने कहा–इस रिपोर्टिंग पर दिगम्बर जैन महासमिति एवं अन्य संस्थाओं को उसमें प्रमुदित होने की कोई बात नहीं। अच्छा तो तब होता जब पाठ को समुचित रूप से संशोधित कर दिया होता।

डॉ. बीजेन्द्र कुमार जैमिनी का आलेख– डॉ. शशि कान्त को 'बीसवीं शताब्दी रत्न' सम्मान आलेख से डॉ. सा. के यश में वृद्धि हुई है। यह अंक संग्रहणीय है।

डॉ. शशि कान्त जैन की तीक्ष्ण बुद्धि, स्मरण शक्ति और व्यंग्यात्मक शैली में विद्यमान भारतीय जनतांत्रिक प्रणाली तथा शासन व्यवस्था का प्रगटीकरण उनके द्वारा लिखित और प्रकाशित **FROWN / संतर्जन** के अंकों से होता है जो 1 मार्च 2004 से प्रकाशित हुए थे। FROWN में विविध राष्ट्रीय बिन्दुओं पर यर्थाथ परक प्रकाश डाला गया है। साथ उन घटनाओं या निर्णयों के पीछे अंतरनिहित सच्चाई को भी तथ्यों की साक्षी सहित प्रकट किया है। 'भारतीयत्व और युक्तियुक्त चिन्तन का प्रखर संवाहक' के रूप में FROWN डॉ. जैन की अनूठी, अनुपम और अद्‌भुत साहित्यिक विधा है जो 'नारद के रिपोर्ताज' के रूप में दिसम्बर 2006 अंक में प्रकाशित हुई है। कदाचित ही, कोई ऐसा साहसी, निर्भीक लेखक होगा जो शासन–प्रशासन और राजनेताओं की अंतरंग सच्चाई को प्रगट करने का साहस करेगा। संविधान और

संविधान के अंतर्गत कार्यरत संस्थाओं की कार्य प्रणाली, उनके पदाधिकारियों की परस्पर विरोधी नीति और विद्रूपताओं का साहसिक उद्घाटन डॉ. शशि कान्त जैन ने निर्भयता और दृढ़तापूर्वक किया है। स्थानाभाव से उसके उद्धरण देना शक्य नहीं है, फिर भी जिज्ञासु पाठकों को राष्ट्र की अंतरंग दशा समझने हेतु डॉ. शशि कान्त जैन के अंतरंग भावों को समझना इष्ट होगा। मेरा यह विनम्र सुझाव है कि FROWN के अंग्रेजी लेखों का हिन्दी अनुवाद कर सभी आलेखों को जन हितार्थ प्रकाशित करवाना अपेक्षित है।

उक्त संदर्भ में, राष्ट्रीय दिवसों के पीछे छिपी अंतरंग कथा की सच्चाई जानने हेतु शोधादर्श–75 (मार्च–जुलाई 2012 ई.) में प्रकाशित ऐतिहासिक परिदृश्य के निम्न बिन्दु उल्लेखनीय हैं–

1) अंग्रेज जून 1948 को सत्ता का हस्तांतरण करना चाहते थे किन्तु परिस्थितिवश हस्तांतरण 1947 को करना पड़ा। नेहरू जी ने 15 अगस्त का दिन इसलिए पसंद किया क्योंकि द्वितीय विश्वयुद्ध में इसी दिन एड्विना के पति लार्ड माउन्टबेटन ने जापानी सेना को अंतिम रूप से विजित किया था।

2) संविधान सभा ने 26 नवम्बर 1949 को 'अंगीकृत, अधिनियमित और आत्म समर्पित' कर लिया था। किन्तु संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया क्योंकि कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में पंडित जी ने 1930 में 26 जनवरी को 'पूर्ण स्वराज दिवस' मनाया था। (पृ.30)

3) कृतज्ञता–ज्ञापन स्वरूप लार्ड माउन्टबेटन को भारत का प्रथम गवर्नर–जनरल स्वीकार कर लिया और गणतंत्र की घोषणा के बाद भारत को ब्रिटिश कामनवेल्थ ऑफ नेशन्स का सदस्य बनाया जाना स्वीकार किया। जबकि पाकिस्तान ने 23/3/56 को इस्लाम–इ जम्हुरिया–ए–पाकिस्तान घोषित होने के बाद ब्रिटिश कामनवेल्थ की सदस्यता से अपने को हटा लिया ।

इतिहास–दर्शी स्मृति शेष डॉ. ज्योति प्रसाद जी ने **शोधादर्श** को धर्म–समाज–संस्कृति–पुरातत्व की शोध एवं सुधार हेतु व्यापक स्वरूप प्रदान किया जिससे 'शोधादर्श' नाम के अनुरूप 'जैन विश्वकोश' जैसी प्रमाणिक विश्वसनीय पत्रिका बन गयी। मानव व्यवहार का कोई ऐसा पहलू नहीं है जो उससे अछूता रहा हो। शोधादर्श–42 की अनुक्रमणिका में प्रदर्शित पत्रिका के स्तम्भों से पत्रिका की सर्वव्यापकता और पारदर्शिता का बोध होता है। प्रत्येक अंक गुरुगुण–कीर्तन से प्रारम्भ होता है। पश्चात धर्म, दर्शन, इतिहास, पुरातत्व

आदि के शोध आलेख होते हैं। पत्रिका के स्थायी स्तम्भ समाज–धर्म की समग्र गतिविधियों को अपने में समेट लेते हैं और प्रायः सभी क्रियाकलापों को स्पर्श करते हैं। पत्रिका के प्रमुख स्तम्भ हैं– गुरुगुण–कीर्तन, सम्पादकीय, समीक्षा, जिज्ञासा–समाधान, साहित्य सत्कार, समाचार विविधा/विमर्श, रिपोर्ट, विचार बिन्दु, चिंतनकण, शोध विमर्श सामयिक चिंतन, समाज चिंतन, स्मरणीय परिचय, अभिनन्दन, शोक संवेदन, आभार, स्वास्थ्य चर्चा, पाठकों के पत्र और आवश्यक सूचना आदि। सम्पादक मण्डल के सभी महानुभाव टीम–भावना से पत्रिका के स्तम्भों को साकार रूप प्रदान कर पत्रिका के प्रत्येक अंक को ज्ञानवर्धक, प्रेरक, दिशाबोधक और संग्रहणीय बनाते हैं। पाठकों की प्रतिक्रिया को जानने और उसे प्रकाशित करने में हर्षित अनुभव करते हैं। जो स्तम्भ अंक–42 में दर्शाये हैं प्रायः सभी अंकों की सामग्री उन स्तम्भों में समाहित हो जाती है।

डॉ. शशि कान्त जैन के 42 अंक के सम्पादन के पश्चात उससे विदाई सन्यास ले लिया। पत्रिका के पाठकों को आश्चर्य हुआ। इस अंक की समीक्षा में लेखक (डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल) के निम्न भाव उल्लेखनीय हैं जो अंक 43 में प्रकाशित हैं–

"शोधादर्श–42 के सभी स्तम्भ देखे। लेख ज्ञानवर्द्धक तो हैं ही अंक जैन समाज की घटनाओं का एनसाइक्लोपीडिया जैसा लगता है। शोधादर्श की अनुक्रमणिका 1–42 अपने आप में अनूठी और अभी तक सृजन की सार्थकता का सूचक है। शोधादर्श के सम्पूर्ण कृतित्व को पुस्तकाकार रूप में संयोजित कर उसका प्रकाशन जैन इतिहास एवं विचारों की अमूल्य निधि होगी।

'सम्पादकीय–अलविदा' दो बार पढ़ा। आपके विचारों ने हृदय को छू लिया। आपकी श्रम–साधना, समर्पण को नमन। आपकी क्षतिपूर्ति दुर्लभ है। पत्रिका आपका मार्ग दर्शन पाती रहे यही भावना है।" (पृ.78)

सभी पाठकों ने प्रायः ऐसी ही प्रतिक्रिया/भावना व्यक्त की, जिससे प्रकट होता है कि डॉ. शशि कान्त जैन न केवल विद्या के क्षेत्र में मान्य थे किन्तु मानवीय सम्वेदनाओं से भी जुड़े थे।

'शोधादर्श' के अंक 43 से 89 तक के अंकों का अवलोकन किया। डॉ. सा. ने कर्तृत्व बोध से सन्यास लिया किन्तु कर्तव्य बोध की भावना से वे 'शोधादर्श' के स्तम्भों और लेखन से पूर्ववत ही जुड़े रहे। शोध–समीक्षा और साहित्य सत्कार जैसा श्रम–साध्य कार्य वे जीवन के अंत तक करते रहे। अंक 89 में आपने 14 कृतियों की समीक्षा लिखी है।

साधन और समय के अभाव में पाठकगण धार्मिक–साहित्यिक एवं शोधकृतियों को न तो प्राप्त कर पाता है और न ही उनका अध्ययन कर पाता है। ऐसी स्थिति में इन कृतियों के सार से पाठकों को परिचित कराना महान उपकार का कार्य है। शोधादर्श के सम्पादक मंडल ने इस कार्य को स्वीकार कर पत्रिका को जीवन्त बनाया उसके लिये लेखक और पाठक दोनों उऋणी रहेंगे। लेखक डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल की 14 कृतियों को साहित्य सत्कार के स्तंभ में सम्मिलित होने का सौभाग्य मिला। 'जैन जाति नहीं धर्म है' की समीक्षा स्व. श्री अजित प्रसाद जैन ने की'। अष्टपाहुड एक अध्ययन, भ. महावीर की जन्मभूमि का सच, सिद्धलोक और सिद्धत्व साधना के सूत्र और संयम साधक साधु–इन चार कृतियों की समीक्षा स्वः श्री रमा कान्त जैन ने की। स्व. श्री शशि कान्त जैन ने वैशाली के गणनायक महावीर, अध्यात्म योग विद्या, कुतर्क की कैंची से कटता समाज, मनीषियों की दृष्टि में आत्मानुभूति और धर्म–ध्यान, मोक्षमार्ग प्रकाशक के मंगल सूत्र, विश्व के धर्म अहिंसा और शाकाहार, मूलआम्नाय निबंधावली–1, आप हम मूल आम्नायी हैं, और पंचामृत और स्त्री अभिषेक आगम सम्मत नहीं– इन नौ कृतियों की भावबोधक एवं तार्किक समीक्षा लिखी। समीक्षा के साथ अपना भिन्न दृष्टिकोण प्रकट करने में संकोच नहीं किया।

'पंचामृत और स्त्री अभिषेक आगम सम्मत नहीं' की समीक्षा में आपने समान अधिकार के आधार पर स्त्री अभिषेक के पक्ष में अपना भाव व्यक्त किया। लेखक ने जैन दर्शन की तीर्थंकरों/जिनदीक्षाधारियों के ब्रह्मचर्य व्रत एवं शील के दोषों के निवारण हेतु स्त्री अभिषेक को आगम सम्मत नहीं बताया। इस सम्बंध में फोन पर लम्बी चर्चा की और उच्च न्यायालय, इन्दौर के याचिका क्र. 8310/19 के आदेश दिनाँक 1/11/19 की ओर उनका ध्यान आकर्षित किया, तब आपने मूल आम्नाय की अवधारणा को सही रूप में समझा। डॉ.सा. अपने तार्किक विचार निः संकोच व्यक्त करते थे, साथ ही दर्शन की गहराइयों को भी उन्मुक्त भाव से स्वीकारने की उदारता उनमें थी। अनाग्रही और अनासक्त भाव से संस्कृति–साहित्य और जीवनचर्या का निर्वाह करने में उनका विश्वास था। ऐसे विशिष्ट गुणों से युक्त व्यक्तित्व विरल होते हैं।

डॉ. शशि कान्त जैन मतभेद को मनभेद का विषय नहीं बनाते थे। शोधादर्श के सम्पादकत्व से विराम लेने के पश्चात शोधादर्श के सम्पादक मंडल और विशेषकर श्रद्धेय स्व. श्री अजित प्रसाद जैन (चाचा जी) के साथ

उनके निजी प्रगाढ़ सम्बन्ध पूर्ववत ही बने रहे। उनके पद की मर्यादा और सम्बन्धों में कहीं कोई अप्रियता दृष्टव्य नहीं हुई। शोधादर्श–85 'युग–पुरूष–त्रयी स्मृति विशेषांक' में प्रकाशित 'स्मृति के झरोखे से' (पृष्ठ 103) को पढ़कर हृदय भावित हो गया। इसमें आपने अपने श्रद्धेय चाचा जी के प्रति जो आदर, स्नेह, अपनत्व और समर्पण का भाव व्यक्त किया, वह नमनीय और अनुकरणीय है। अब तो प्रायः सहज मन–भेद और अपने अनुकूल कार्य सिद्ध न होने या पारदर्शिता के विरोध में दीर्घ सम्बन्धों का विच्छेद किया जाना अनुभूत होता है। स्वनाम धन्य विद्वान–पत्रकार अपमानजनक–हीन कार्य करने में रंचमात्र संकोच नहीं करते। नैतिक मूल्यों की बात तो बहुत दूर की है।

डॉ. शशि कान्त जैन ने अपनी प्रखर बुद्धि और लेखन क्षमता का सार्थक उपयोग धर्म–संस्कृति, इतिहास और पुरातत्व के सत्यावेषण में किया। शोधादर्श के प्रत्येक अंक में आपके शोध लेख प्रकाशित होते रहे जिनसे पाठकों को विचारोत्तेजक सामग्री सहज प्राप्त होती रही। अंग्रेजी भाषा पर उनका विशेष अधिकार था। अंग्रेजी के आलेख भी शोधादर्श में प्रकाशित होते रहे जिनका हिन्दी अनुवाद कर सर्व–सुलभ बनाना अपेक्षित था। जैन दर्शन और जैन इतिहास की समग्रता की जानकारी शोधादर्श–74 (पृ.15 से 36) में प्रकाशित 'इतिहास के प्रति जैन दृष्टि' आलेख से होती है। इसमें कुलकर युग से भ. महावीर तक और धर्म के विकास क्रम का गवेषणात्मक–वर्णन मौलिक दृष्टि से किया है। विद्वानों के लिये यह चिंतनीय है। इसी अंक में लेखक का 'भ. शीतलनाथ की जन्मभूमि : मलय भद्रपुर : एक चिंतन' भी प्रकाशित है।

डॉ. शशि कान्त जैन का लेखन 'स्वांतः सुखाय' न होकर सर्व लोक हिताय एवं शोधार्थियों के मार्गदर्शन हेतु पथ प्रदर्शन भी रहा है। शोधादर्श–73 में आपका आलेख– 'Interpreting the Ancient Epigraphs of India' (पृ. 28–44) पर प्रकाशित हुआ है जो उनकी गहन गवेषणा के साथ शोधार्थी छात्रों के लिये भारतीय अभिलेखों के इतिहास और उनके अध्ययन हेतु मूलभूत सामग्री प्रदान करता है। भदन्त, अन्तेवासी, स्थविर, ब्राह्मण–श्रमण, आयागपट, सिद्धम् नन्दि, लेण, गुफा/गुम्फा, पोढ़ी, पसादो आदि अभिलोखों में प्रयुक्त शब्द हैं जिनको सही परिप्रेक्ष्य में जानना आवश्यक है तभी किसी अभिलेख का यथार्थ ज्ञान संभव है। डॉ. जैन का विशिष्ट योगदान इस कारण है कि उन्होंने भारतीय धर्म–संस्कृति के भाव बोध सहित इन शब्दों को व्याख्यायित किया। इस कार्य हेतु उनकी श्रम साधना को नमन है। ऐसे ही अन्य आलेख हैं जिनका उल्लेख स्थानाभाव से शक्य नहीं है।

डॉ. शशि कान्त जैन स्वभावता स्पष्टवादी और जुझारू प्रवृत्ति के रहे हैं। विकृतियों के सुधार हेतु आपने तत्परतापूर्वक प्रयास किये हैं। शोधादर्श–34 (1998 ई.) के पृष्ठ 26 पर आपका आलेख–JAINISM प्रकाशित है। आलेख में डॉ.सा. NCERT की कक्षा ग्यारह की पुस्तक में भगवान महावीर और जैन धर्म के पाठ में अशुद्धियों के सुधार के प्रयास का विवरण है। सुधार हेतु डॉ. सा. ने पुस्तक के लेखक प्रो. रामशरण शर्मा से पत्राचार किया और उन्हें गौतम बुद्ध और वर्धमान महावीर का शुद्ध पाठ भेजा। पुस्तक का प्रथम संस्करण 1977 ई. में हुआ था। उसके 18 वर्ष बाद 1995 ई. में जैन समाज जाग्रत हुआ किन्तु प्रयास सफल नहीं हुए। शोधादर्श–42 के पृष्ठ 323 जिसका उल्लेख ऊपर किया है, के अनुसार सुधार की अपेक्षा संदर्भित पाठ ही पुस्तक में से लोप कर दिया गया। इसी बीच हस्तिनापुर से यह प्रयास किया गया कि भ. महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर–नालंदा पाठ्य पुस्तक में दर्शायी जाये। कक्षा 6 की पुस्तक में भ. महावीर को जैन धर्म का विचारक बताकर उनकी जन्म भूमि वैशाली गणराज्य दर्शाया। जन्म स्थान न दर्शाने के भाव को लेकर गणिनीजी के समर्थकों ने यह प्रचारित कर दिया कि उनके प्रयास से पाठ्य पुस्तक में सुधार हो गया है। इस प्रकार अंततः वर्द्धमान महावीर जैन धर्म के विचारक के रूप में पढ़ाये जाते रहे। अन्य अशुद्धियाँ भी यथावत रहीं और बौद्धिक महानुभावों एवं सस्थाओं के कार्यक्रम से यह प्रकरण लुप्त हो गया।

लेखक डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल का पौत्र आदीश कक्षा 6 में पढ़ता था। उसके द्वारा ध्यान दिलाये जाने पर लेखक ने पहले होली फेथ इन्टरनेशनल (प्रा.) लि. द्वारा कंक्षा 6 की पुस्तक में सुधार करवाया। संस्थापक के स्थान पर 24वाँ और अंतिम तीर्थंकार का लेख हुआ। इसी क्रम में चार और पाठयक्रमों में सुधार करवाया। सन् 2013 में NCERT की पुस्तक में सुधार हेतु अनुरोध किया। बहुत प्रयासों के बाद सन् 2016 में प्रकाशित पुस्तक में 'विचारक' के स्थान पर 'जैन धर्म का अंतिम और 24वाँ तीर्थंकर' लिखवाने में सफलता मिली। पाठ्य पुस्तकों में सुधार के प्रयासों का आलेख शोधादर्श–87 (2018 ई.) के पृष्ठ 30–34 पर प्रकाशित कर डॉ. शशि कान्त जैन ने विशिष्ट टिप्पणी लिखकर उनके अपने प्रयासों से मुझे अवगत करा मुझे साधुवाद दिया। डॉ.सा. ने फोन पर भी मेरे सतत प्रयासों की सराहना की और उत्साह वर्धन किया। यह भारी मन से संकोच सहित लिख रहा हूँ कि डॉ. शशि कान्त जैन को छोड़कर किसी अन्य पत्रकार, यहाँ तक वीर पत्रिका, ने मेरे लेख का

प्रकाशन नही किया। समाज/संस्थाओं की शिक्षा–संस्कृति के प्रति घोर उपेक्षा के कारण ही कोई व्यक्ति इस प्रकार के कष्ट एवं व्यय साध्य कार्यों में रुचि नहीं लेता। महामस्तकाभिषेक के समय मैंने स्वस्ति श्री चारूकीर्ति भट्टारक जी का इस ओर ध्यान आकर्षित कर उनसे अनुरोध किया कि वे अपने मार्गदर्शन में इस काम को आगे बढ़ाएं।

भ. महावीर का जन्म आगम के अनुसार विदेह–कुण्डपुर में हुआ था। शोधादर्श का सम्पूर्ण सम्पादक मंडल उसके पक्ष में रहा। स्व. श्री अजित प्रसाद जैन ने शोधादर्श–48 एवं 72 में वैशाली–वासोकुण्ड को जन्म भूमि माना। सम्पादक महादेय ने अपनी टिप्पणी में डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की 'भरतीय इतिहास : एक दृष्टि' और डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल की 'वैशाली के गणनायक महावीर' भी दृष्टव्य है का लेख किया। डॉ. शशि कान्त जैन ने इस कृति की समीक्षा शोधादर्श–69 (2010 ई.) में प्रकाशित करते हुए निष्कर्ष में लिखा कि 'वासोकुण्ड–वैशाली को भगवान महावीर की जन्मस्थली के रूप में प्रतिष्ठापित करने के लिए डॉ. बंसल की यह पुस्तक विशेष महत्व रखती है।' डॉ. जैन शोधादर्श–60 में प्रकाशित डॉ. बंसल के आलेख– 'वासोकुण्ड–वैशाली के जनमानस में महावीर' का संकेत भी अपनी समीक्षा में देकर प्रकरण को पुष्ट किया। इसके लिये उनको साधुवाद। डॉ. शशि कान्त जैन का शोधादर्श–63 में 'भगवान महावीर की प्रथम सहस्राब्दि' आलेख में भ. महावीर की जन्म भूमि वैशाली के निकट स्थित कुण्डग्राम (क्षतित्र–कुण्ड) को स्वीकार किया। यह आलेख ज्ञानवर्धक और पठनीय है। प्रकारान्तर से, लेखक की कृति–'भगवान महावीर जन्म भूमि का सच' की समीक्षा करते हुए शोधादर्श–61 में स्वः श्री रमा कान्त जैन ने लेख किया की कतिपय 'गण' मान्य लोगों ने पुरस्कार–भय–उत्पीड़न–षड्यंत्र आदि अनैतिक उपायों से स्वार्थवश वासोकुण्ड– वैशाली का अपहरण किया था। इस प्रयास को लेखक ने स्थानीय लोक सर्वेक्षण द्वारा विफल कर दिया। इसकी प्रेरणा लेखक को श्री अजित प्रसाद जैन, डॉ. शशि कान्त आदि ने दी थी ।

डॉ. शशि कान्त जैन मिलन स्वभावी, सहृदयी और गुणग्राही व्यक्तित्व के धनी थे। जैन संस्कृति पोषक एवं लोक–हित में संलग्न महानुभावों से वे निरन्तर फोन पर सम्पर्क बनाए रखते थे और शोधादर्श में प्रकाशित सामग्री पर अपनी प्रतिक्रिया भेजने और विमर्श कर उसे प्रकाशित करने में उन्हें रुचिकर लगता था। लेखक डॉ. बंसल का शोधादर्श सम्पादक मंडल से विगत 35 वर्षों से सम्पर्क है। श्री अजित प्रसाद जैन से निरंतर पत्राचार एवं विचार

विनिमय होता रहा। परस्पर विश्वास एवं कार्य शैली की एकात्मता से लेखक शोधादर्श परिवार से जुड़ गया।

दिनाँक 6/12/2015 को आचार्य पूज्य श्री विद्यानन्द जी के मंगल सानिध्य में सम्पादक श्री ननिल कान्त जैन को पत्रकारिता पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उसी सभा में लेखक डॉ. बंसल को शाकाहार पुरस्कार दिया गया। पुरस्कृत महानुभावों का परिचय एक पुस्तिका में प्रकाशित किया गया था। उसमें जन्मतिथि का भी लेख था। डॉ. शशि कान्त जैन को पुस्तिका से मेरी जन्मतिथि दि. 10 जनवरी 1938 का बोध हुआ। उन्होंने दिनाँक 10/1/2016 की प्रातः फोन पर जन्मदिन की बधाई देकर मुझे अचंभित कर दिया। इसके बाद हर जन्मदिन पर उनकी शुभकामनाएँ/आशीर्वाद मुझे वरदान स्वरूप मिलने लगे। मैंने भी उनके जन्म दिन की जानकारी लेकर उन्हें बधाई देना शुरू कर दिया। परस्पर आत्मीयता इस रूप में वृद्धिंगत हुई कि एक–दो माह के अंतराल से फोन पर विविध विषयों पर चर्चा करने लगे। अंत में डॉ. सा. श्रीमती रंजना बंसल का भी स्मरण करते रहे। उनकी प्रेरणा से मैं उपकृत हुआ जिसकी फलश्रुति शोधादर्श में प्रकाशित पाठक–पत्र के रूप में हुई। डॉ. सा. की स्मृति दिनांक 10/1/2021 को भाव–विभोर करेगी और उनके स्नेहिल आत्मीयता का स्मरण करायेगी। पाठकों के प्रति सद्भाव के कारण ही डॉ. सा. जैन संस्कृति एवं संस्थाओं से जुड़े महानुभावों का परिचय शोधादर्श के पाठकों से कराते रहे।

लेखक मूलतः मूल आम्नाय की मान्यता से सम्बद्ध है। यह सौभाग्य पूर्ण संयोग है कि स्मृतिशेष डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का परिवार दिगम्बर जैन धर्म की मूल आम्नाय (तेरहपंथ) में आस्थावान रहा है। मूल आम्नाय की दार्शनिक धारणा को प्रकट करने के उपक्रम में लेखक के तथ्य परक आलेख शोधादर्श के अंक क्रमांक 6, 46, 47, 51, 56 (कविता), 57, 60, 61, 63, 65, 66, 67, 68, 70, 74, 76, 79, 82, 85, एवं 87 (कुल बीस) में प्रकाशित हुए। अंक क्रमांक 40 के समाचार विविधा के अंतर्गत पृष्ठ 89 पर लेखक के पूज्य पिताश्री त्रिशताब्दिदर्शी पं. चुन्नीलाल जी शास्त्री का संक्षिप्त वर्णन प्रकाशित किया। उसमें लेखक–डॉ. बंसल, पौत्र–अखिल बंसल एवं दामाद–डॉ. हुकमचंद भारिल्ल का उल्लेख है। अंक–76 इतिहास–मानीषी डॉ.ज्योति प्रसाद जैन को समर्पित है। इस अंक के गुरुगुण–कीर्तन के रूप में लेखक का आलेख–इतिहास –मनीषी युगपुरुष डॉ. ज्योति प्रसाद जैन प्रकाशित किया है। इस सम्मान हेतु लेखक डॉ. शशि कान्त जैन और श्री नलिन कान्त के प्रति अपना आभार व्यक्त करता है।

डॉ. शशि कान्त जैन धार्मिक क्रियाओं के वाह्य आडम्बरों में विश्वास नहीं करते। आपके दार्शनिक चिंतन के स्वरूप को जानने हेतु शोधादर्श–25 पृष्ठ 20 में प्रगट उनके विचार जानना इष्ट है। महावीर ने निःश्रेयस और अभ्यूदय का उपदेश दिया। बिना इच्छा के अपनी भावना और करनी को संयमित रखते हुए, चिन्तन, मनन और ध्यान में लगे रहना। अभ्यूदय लौकिक उत्कर्ष है जो फल की इच्छा में किये गये परिणाम से होता है। इसमें प्रवृतियों का फैलाव होता है जिसमें दैवि शक्ति की आराधना, स्तुति, पूजा, अनुष्ठान आदि सम्मिलित हैं।

निःश्रेयस में निवृत्ति में संकोचन है– अपने में ही सिमटकर पुरुषार्थ से आत्मा का विकास करना है। (यह आत्मानुभूति की ओर संकेत है)। उससे कषायों से– बन्धन से छुड़ाकर, अपने ही शुद्ध स्वरूप की प्रतीति करना है। (यह प्रतीति सम्यकदर्शन कहलाती है)। यह काम हमें स्वयं ही करना है, कोई बाहर की शक्ति–देवी–देवता, साधु–महात्मा हमारी मदद नहीं करेंगे।

तप इच्छा का निरोध है–इच्छाओं को अपने बस में कर उन्हें सीमित करना है। सब कुछ जो हमारे निजत्व से अलग है, इन्द्रियों को लुभाता है, कषायों में प्रवृत्त कराता है– उसे छोड़ते जाना है। इन्द्रियों का इस प्रकार निग्रह त्याग है।

(आत्मलीनता रूप) तप और (परिग्रह–विषयों का) त्याग हमें संयम के मार्ग पर आगे बढ़ाते हैं जो निवृत्ति मूलक है और निःश्रेयस की प्राप्ति के सुलभ करता है।

डॉ. शशि कान्त जैन के उक्त चिंतन में आत्मानुभवजन्य सम्यगदर्शन और ज्ञान तथा शुद्धोपयोगरूप चारित्र समाहित हो गया। डॉ. जैन इस उद्देश्य हेतु सदाचार, नैतिकता, सत्यनिष्ठ–चिंतन, सत्यान्वेषण और मानवोचित संस्कार युक्त अनाग्रही वृत्ति इष्ट मानते है। (अंक 61, पृ. 73 अवलोकनीय हैं)

शोधादर्श–74 के पृष्ठ 26 पर आपने महावीर के उपदेशों का सार– 'अहिंसावाद, कर्मवाद, साम्यवाद और स्याद्वाद कहा है। इन उपदेशों द्वारा उन्होंने करुणा, पुरुषार्थ, समानता और विवेकजन्य सहिष्णुता को मानवीय आचरण का आधार निर्दिष्ट किया। सभी प्राणियों को आत्म–कल्याण करने का समान अवसर प्रदान करने की दृष्टि से उनकी धर्म–सभाओं को समवसरण कहा गया।'

समग्रता में, डॉ. जैन का जीवन–दर्शन उक्त मापदण्ड के अनुसार सद्–श्रावक का प्रतिनिधित्व करता है। वे वर्तमान में जीते दृष्टव्य हैं जो धार्मिकता का आधार है।

'महादुख रूप इच्छाओं का स्वरूप : भेद–प्रभेद' जानने हेतु लेखक का आलेख शोधादर्श–79 के पृष्ठ 39–43 पर देखा जा सकता है।

डॉ. शशि कान्त जैन की प्रखर बुद्धि, प्रशासनिक योग्यता, सत्यनिष्ठ–यथार्थ शोध–खोज और उच्च नैतिक मूल्यों का प्रसाद रूप में प्रतिफल उनकी जीवन यात्रा के मध्य उन्हें सदैव मिलता रहा। पी–एच.डी की उत्कृष्टता दृष्टिगत कर विश्वविद्यालय की एक्जीक्यूटिव काउंसिल द्वारा सन् 1969 में अपवाद स्वरूप मौखिक परीक्षा मुक्त कर 'शोध शिरोमणि' बना दिया। हाथी–गुम्फा के शिलालेख और अशोक के भाब्रू अभिलेख के गवेषणापूर्ण अध्ययन से डॉ. जैन 'शोध शिरोमणि रत्न' बन गये। राज्य सेवा के अधिकारी प्रायः पदोन्नत होकर उप–सचिव होते हैं या I.A.S. केडर में पात्रतानुसार चयनित हो जाते हैं। किसी तकनीकी प्रक्रिया के कारण यह सम्भव नहीं हो सकने के कारण डॉ. जैन की प्रशासनिक क्षमता और नैतिकतापूर्ण कर्तव्य निष्ठा से उन्हें 'विशेष सचिव' पर पदोन्नत किया गया।

डॉ. शशि कान्त जैन को जैमिनी अकादमी पानीपत द्वारा 13/9/2000 को हिन्दी भाषा और अमूल्य समाज सेवा हेतु **'बीसवीं शताब्दी रत्न'** से सम्मानित किया गया। अमेरिकन बायोग्रेफिकल इन्स्टीट्यूट द्वारा सन् 2003 और 2004 में **'Man of the year'** के लिये नामित किया गया। सन् 2006 में आपको एस्ट्रोलाजिकल रिसर्च प्रोजेक्ट कोलकाता द्वारा **'महर्षि वेदव्यास'** सम्मान प्रदान किया गया। वर्ष 2018 में आपको **'पेंशनर्स शिरोमणि'** सम्मान से विभूषित किया गया। वाह्य जगत से प्राप्त यह सम्मान डॉ. जैन की प्रसिद्धि, कर्मणता और विशिष्ट उपलब्धियों का सूचक है।

डॉ. जैन अनेक समाज धर्म सेवी संस्थाओं में सक्रिय रहे। आप 'जैन सिद्धान्त भास्कर' 'The Jaina Antiquary' सम्यक विकास पत्रिका, और समन्वयवाणी पत्रिका के सम्पादक मंडल में रहे। 'शोधादर्श' से तो उनका सम्पादक एवं मार्गदर्शक का सम्बंध था। लेखक डॉ. बंसल भी धर्म मंगल, वीर, और समन्वयवाणी के सम्पादक मंडल में रहा। डॉ. सा. की प्रेरणा से लेखक की 38 अंकों की समीक्षा प्रकाशित हुई।

डॉ. शशि कान्त जैन की अंतिम सम्पादित कृति शोधादर्श 88–89 है यह कृति अप्रत्यक्ष रूप से पुरातत्वीय–शोधार्थियों को निष्छलता और तटस्थता का

संदेश देती है। शोधादर्श–87 में प्रो.डॉ. भागचन्द्र भागेन्दु का छह पृष्ठीय आलेख–'जैन अतिशय क्षेत्र बहोरीबंद' प्रकाशित हुआ था। उसमें लेखक ने गयकर्णदेव के शासन में स्थापित मूर्ति को दसवीं शताब्दी का होना दर्शाया था। मैंने डॉ. शशि कान्त जी से चर्चा में बताया कि गयकर्णदेव का समय 1125–1154 ई. है, अतः प्रतिमा बारहवीं शताब्दी–पूर्वार्द्ध की होती है। डॉ. सा. ने सुझाव दिया की अंक–87 की विस्तृत समीक्षा भेजो उसे अगले अंक में प्रकाशित कर मूर्ति निर्माण के समय को स्पष्ट करेंगे। तद्नुसार, अंक 88–89 में मेरी शोधादर्श–87 की समीक्षा प्रथक रूप से पृ.98–102 प्रकाशित हुई। डॉ. सा. द्वारा इतिहास के संदर्भ में मूर्ति के समय के निर्धारण की विधि की सम्मति से यह सुनिश्चित हो गया कि अब कोई विद्वान, पुराविद् गोलापूर्व जाति के गौरव–ध्वज को दसवीं शताब्दी का नहीं क़हेगा। डॉ.सा. के इस अवदान के प्रति कृतज्ञ हूँ।

वर्ष 2020 कोविद–19 के प्रकोप से पीड़ित रहा। अक्टूबर 2020 के अंतिम सप्ताह ने मुझे और मेरे परिवार को संताप में डुबो दिया । मेरे तृतीय पुत्र ज्ञानानन्द बंसल की 51 वर्ष की अल्पायु में जाग्रता–शांत अवस्था में देह–विलय हो गयी। अनभ्र बज्रपात हुआ। दिनांक 2/11/20 को मैंने भाई श्री शशि कान्त जैन को शोक–सूचना देने फोन किया। मेरा फोन श्री नलिन कान्त जैन ने उठाया। मैंने कहा कि भाई साहब से बात कराओ। उन्होंने सूचित किया कि दिनांक 30/10/20 को पापा जी का शान्त परिणामों सहित स्वर्गवास हो गया है। उनकी बात सुनकर हतप्रभ हो शोक में डूब गया। एक स्नेही, मार्गदर्शक और मित्र तुल्य शुभचिंतक के वियोग की पीड़ा से संतप्त हुआ। एक सप्ताह में दो परिजनों का वियोग निश्चित ही पीड़ा दायक है। परिसंतोष यही है कि दोनों ने सचेत अवस्था में शांतभाव पूर्वक देह का परित्याग कर शुभगति का वरण किया। दोनों दिवंगत आत्माओं की शांति, सद्गति हेतु उत्कृष्ट भाव सहित श्रद्धांजलि अर्पित है।

डॉ. शशि कान्त जी प्रकाश स्तम्भ स्वरूप पुराविद, इतिहासज्ञ, पत्रकार और धर्मार्थियों के प्रेरणा स्रोत बने रहें, यही हमारी विनयांजलि है।

विद्वरत्न, निष्पक्षों के पक्षधर, बहु–आयामी लेखक
कॉलेज कालोनी, एम.सी.डी. वार्ड नं 1/268, बुढ़ार (जि. शहडोल)–484110

स्मृत्यालोक में सहृद्वर डॉ. शशि कान्त जैन

– **डॉ. कैलाश नाथ द्विवेदी**

अपने प्रदेश की राजधानी लखनऊ के अनेक विश्रुत विद्वानों की लम्बी श्रृंखला में जिनकी पावन स्मृति मेरे मन–मंदिर में निरन्तर कौंधती रहती है, उनमें आदरणीय भाई डॉ. ज्योति प्रसाद जैन और डॉ. शशि कान्त जैन उल्लेखनीय हैं। अतः कभी–कभी हिन्दी–संस्कृत काव्य–वार्ता प्रसारण कार्यक्रम हेतु आकाशवाणी पहुँचने के पूर्व बस से चारबाग स्टेशन पर उतरकर सीधे ज्योति–निकुंज, पहुँचकर इन दोनों महानुभावों से मिलना न भूलता और प्राचीन इतिहास–संस्कृति, कला, पुरातत्व, दर्शन आदि विषयों पर विचार–विमर्श कर पर्याप्त सुखानुभव प्राप्त करता, जिससे बस यात्रा की श्रान्ति–क्लान्ति दूर होकर परम प्रसन्नता का अनुभव होता था।

राजस्थान जैन विद्या संस्थान, श्री महावीर द्वारा वर्ष 1995 में जब **'नाटककार हस्तिमल्ल'** (परिमल पब्लिकेशन, दिल्ली से प्रकाशित होकर) **'महावीर–पुरस्कार'** से पुरस्कृत हुआ तो इस समाचार को सुनकर ये मनीषीजन अत्यन्त हर्षित हुए थे तथा **'शोधादर्श'** में इस समाचार को प्रकाशित भी किया था। जैन नाटककार हस्तिमल्ल–विषयक शोध लेख भी अपना 'शोधादर्श' में निकला था।

डॉ. शशि कान्त जैन 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति' के साथ ही 'शोधादर्श' के एक सुदृढ़ स्तम्भ थे। इनकी भारतीय इतिहास, संस्कृति, पुरातत्व, कला, दर्शन आदि विषयों में गहन गति थी। इनके सारगर्भित, परमोपयोगी सुन्दरं लेखों से 'शोधादर्श' की शोभा दिनों–दिन सम्वर्धित होती रहती थी।

अपनी अनुपम पत्रकारिता की कला को निखारने में सचेष्ट होकर इन्होंने **'Frown'** नामक तथ्यात्मक पत्र निकालना भी प्रारम्भ किया, जो **'शोधादर्श'** का सम्पूरक होकर पाठकों में पर्याप्त लोकप्रिय सिद्ध हुआ। आज भी अगणित लोग इसकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हैं। ये दोनों स्तरीय और उपयोगी पत्रिकाएँ आत्मीयतावश ये मुझे भेजना नहीं भूलते।

डॉ. जैन स्वकीय सर्वोच्च सारस्वत साधना के साथ ही अपनी अनुपम शासकीय सेवा के लिए शासनाधिकारियों में सर्वाधिक प्रिय और समुल्लेखनीय रहे। यही कारण है कि इनकी सराहनीय उत्कृष्ट सेवाओं को ध्यान में रखकर

पूर्व मुख्य सचिव श्री अतुल कुमार गुप्ता की सन्निधि में इन्हें **'पेंशनर्स शिरोमणि'** की उपाधि से दिनाँक 22 नवम्बर, 2018 को सम्मानित किया गया था।

एक श्रेष्ठ साहित्य समीक्षक के रूप में 'शोधादर्श' का **'साहित्य–सत्कार'** स्तम्भ ही प्रत्यक्ष प्रमाण है, जिसमें अनेक उपादेय ग्रन्थों की सारगर्भित समीक्षा इनकी प्रकाशित होती रहती थी। इनके जीवन काल का 'शोधादर्श' (अंक 88–89) ही इस तथ्य को परिपुष्ट करता है।

'शोधादर्श' के यशस्वी सम्पादक चि. श्री नलिन कान्त जैन के दिनाँक 17 नवम्बर, 2020 के पत्र से हमें इनके महाप्रयाण होने का दुःखद समाचार मिला, जिससे मेरा मन अत्यन्त शोकाकुल है। मैं इनकी पुण्यात्मा की शान्ति एवं सद्गति के लिए जिनेन्द्र स्वामी श्री महावीर से पौनः पुन्य प्रार्थना करता हुआ इन शब्दों से इन्हें सश्रद्ध सुमनांजलि समर्पित कर रहा हूँ–

लक्ष्मणपुरवासी विबुध, शशि कान्त–सम रूप ।
जैन वंश के मुकुटमणि, राजरहित थे भूप।।
अति उदार मानी–मृदुल, क्षमाशील, शुचि शान्त।
धरा धन्य पाकर हुई, श्री सरस्वती के कान्त।।
समाजसेवी सफल वे, कर्मनिष्ठ अविराम।
परोपकारी सन्त सम, मृदुभाषी निष्काम।।
जिनवाणी–प्रेमी अमित, हिन्दी के सद्भक्त।
साहित्य–सरित् में डूबकर, संस्कृति में अनुरक्त।।
सरस्वती आराधते, 'शोधादर्श'–सहाय।
अज्ञान तिमिर हरने चले, शोध करें हर्षाय।।
कीर्ति–कौमुदी कलित अति, शशि कान्त–शुभरूप।
तन–मन को अच्छी लगे, ज्यों प्रातः की धूप।।
स्मरण तुम्हें करते सभी, होकर भाव–विभोर।
किस अनन्त से जा मिले, जिसका ओर न छोर।।
पुण्य स्मरण मैं करूँ, मन धरता तव ध्यान।
श्रद्धांजलि अर्पित तुम्हें, सुमनों से सम्मान।।

पूर्व प्राचार्य, म.प्र. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोंच (जालौन)
'कुसुम कुलाय', सूर्य नगर, अजीतमल (औरैया)–206121

विकृतियों की कलई खोलने वाली कृति नारद के संवाद के बहाने डॉ. शशि कान्त की अविस्मरणीय याद

– श्री सूर्य कुमार पांडेय

शेषनाग को काल का प्रतीक माना जाता है। एक पौराणिक मान्यता के अनुसार यह धरती उसी शेषनाग के फन पर टिकी हुई है। शेषनाग भी ऐसे, जिनके सहस्र फन हैं। यह भले ही एक दृष्टांत हो, किंतु इसका निहितार्थ यह है कि काल के कराल प्रहार से बच पाना असंभव है। यह किधर से आएगा और कब हमारी साँसों की यात्रा को विराम दे जाएगा, यह हम नहीं जानते। कुछ ऐसा हुआ कि काल आया और एक संक्रमण के बहाने हम सबके आत्मीय और आदरणीय डॉ. शशि कान्त को महाप्रयाण की दिशा में ले उड़ा। डॉ. शशि कान्त का जाना मेरी व्यक्तिगत क्षति है। उनसे मेरे पारिवारिक संबंध तो हैं ही, वह एक समय सचिवालय में विशेष सचिव हुआ करते थे और मेरे विभाग के कार्य देखते थे। तब भी उनसे मिलना होता था।

एक निश्छल, बेबाक और विद्वतापूर्ण व्यक्तित्व के धनी डॉक्टर साहब ने जिस प्रज्ञा–समृद्ध वंश में जन्म लिया था, सेवानिवृत्ति के बाद उस कुल–धर्म का आजीवन सम्यक निर्वहन करते रहे। वह चाहे जैन समाज के इतिहास और वर्तमान को लक्ष्य कर प्रकाशित होने वाली **शोधादर्श** पत्रिका का संपादन रहा हो, अथवा भारत के इतिहास की राजनीतिक और सामाजिक विषयों पर लिखी गई उनकी पुस्तकें ओर शोध आलेख हों, सभी में उनकी विचार–प्रवणता देखने को मिलती है। उनके बाद की पीढ़ी के लिए उनकी आजीवन सक्रियता प्रेरणादायक तो है ही, अनुकरणीय भी है।

डॉ. शशि कान्त ने भरपूर जीवन पाया। जबकि 88 वर्ष की अवस्था में प्रायः लोग निष्क्रिय हो जाते हैं, वह न केवल शारीरिक रूप से अपितु मानसिक तौर पर भी जीवंत थे। नए और बदलते समय पर अपनी पैनी दृष्टि रखने वाले डॉक्टर साहब से बातचीत करने से पता चलता था कि वह कितने अधुनातन हैं? वह आज के काल–खंड पर भी उतने ही शिद्दत से विचार रखा करते, जितना इतिहास की गहराइयों की परत–दर–परत मीमांसा करते थे। वह एक सुपठित और जिजीविषायुक्त व्यक्ति थे। अपनी बाद की पीढ़ी से भी बराबर और सम्मानजनक संवाद करने में उन्हें कोई संकोच नहीं होता था।

मैं चकित हुआ, जब उनकी व्यंग्य परक पुस्तक **नारद के संवाद** प्रकाशित हुई। यह डॉ. शशि कान्त की लेखकीय प्रतिभा कां एक अलग ही रूप था। एक व्यंग्य लेखक होने के नाते जब मैंने उनको इस पुस्तक के प्रकाशन की बधाई दी और यह बताया कि मैथिली लेखक हरिमोहन झा की कृति **खट्टर काका** के बाद मैंने हिंदी में लिखी गई इस शैली की दूसरी पुस्तक नहीं पाई। यह सुनकर वह अतिशय प्रसन्न हुए और मुझसे **नारद के संवाद** पर कुछ विस्तार से लिखने की इच्छा प्रकट की। जब–तब में समय निकलता रहा। मैं उनके जीवनकाल में इस पुस्तक पर अपने मंतव्य व्यक्त न कर सका। मुझे आज इस बात का अतिशय क्षोभ हो रहा है।

नारद के संवाद तीन भागों में विभक्त हैः 1. नारद के रिपोर्ताज 2. राम नाम सत है और 3. इतिहास के कहकहे। इसके अतिरिक्त 'प्रस्ताविकी' में लेखक ने पुस्तक के लेखन की भूमिका तथा आवश्यकता को स्पष्ट किया है। आवाहन, संदेश और संचरणीय शीर्षक से क्रमशः अभिव्यक्ति–स्वातंत्र्य, जन–स्वातंत्र्य, और जीवन–राग को व्यंग्य–गीतों के माध्यम से प्रकट किया गया है। वस्तुतः **नारद के संवाद** भारत के इतिहास और समकालीन समय की विद्रूपता और विडंबना पर पैनी और वक्रदृष्टि रखने वाली पुस्तक है। इस पुस्तक में मिथकीय पात्रों के बहाने आज के समाज की दशा–दुर्दशा, राजनीति, कूटनीति एवं भ्रष्टाचार पर तीखे और करारे कटाक्ष किए गए हैं। इस कृति की भाषा सरल और सहज है। इस कारण यह अपने पाठकों को बांधने में समर्थ है। पुस्तक की भाषा हिंदी, अंग्रेज़ी, अरबी, फ़ारसी और उर्दू मिश्रित है। इसे हम आज वाली हिंदी भी कह सकते हैं, जो अब युवा पीढ़ी की भाषा बन चुकी है। गद्य के बीच में कविता की छौंक भी लगाई गई है। यह हमें उस चंपू–काव्य की याद दिलाती है, जिसका उपयोग हिंदी के कई पूर्ववर्ती लेखकों ने भी किया है।

यहां मैं डॉ. शशि कान्त की इस व्यंग्य पुस्तक के कतिपय अंश उद्धृत करने का लोभ संवरण नहीं कर पा रहा हूँ। इनको पढ़कर कोई भी उनकी इस विधा और शैली में पारंगत होने का लोहा मान जाएगा।

1. जब कौओं का कोई झुंड किसी उल्लू को दौड़ाता है और कौए अपनी काँव–काँव के बीच किसी उल्लू को कोने में खदेड़ लाते हैं, तो यह एक रोचक दृश्य होता है और प्रेस कांफ्रेंस की याद दिलाता है।

2. कलियुग के भगवान केवल भारतभूमि में अधर्म की स्थापना के लिए अर्थात् कानून की व्यवस्था को समाप्त करने के लिए प्रकट हुए हैं, जहाँ वह दुष्टजनों को सुरक्षा प्रदान करते हैं।

3. यहाँ अनायास–अप्रयास प्राप्त धन को 'बाप का माल' कहा जाता है। राजकोष की भी यही स्थिति है। अतः बाप का माल बेदर्दी से लुटाने में कोई संकोच होने का प्रश्न ही नहीं उठता।

4. एक दिन अकस्मात् पक्षियों के दो झुंड आकाश में प्रकट हुए। बड़ा कलरव था। परंतु विचित्र यह था कि दोनों झुंड बारी–बारी से चहकते थे जैसे कि संसद में सत्तापक्ष और प्रतिपक्ष के सदस्य संसदीय कार्यवाही में भाग ले रहे हों। कभी–कभी दोनों झुंड समवेत कलरव भी करते थे, लेकिन चंचु–प्रहार नहीं करते थे।

5. जूनागढ़ की रियासत के नवाब को जब यह निराशा हो गई कि वह अपनी रियासत को भारत से अलग आज़ाद नहीं रख सकेंगे, तो वह हवाई जहाज़ द्वारा यहाँ से पलायन कर गए। परंतु अपने साथ हवाई जहाज़ में केवल अपने पालतू कुत्तों को ही भर कर ले गए।

मेरा उक्त व्यंग्योक्तियों को प्रस्तुत करने का आशय इतना ही है कि इन्हें पढ़कर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि डॉ. शशि कान्त ने **'नारद के संवाद'** के बहाने विकृतियों की कलई खोलकर रख दी है। काश, उन्हें और अवधि मिली होती। उनसे और उनकी वैचारिक परिपक्वता से समाज को अभी बहुत कुछ मिलना शेष था।

आज उन्हें इस लेख के बहाने मैं अपने श्रद्धा–पुष्प अर्पित करता हूँ। अब मुझे अपने मोबाइल पर उनके द्वारा लैंडलाइन से की गई कॉल्स की याद ही शेष है। मुझे वह सुस्पष्ट और स्नेहपगी वाणी कभी भी सुनने को नहीं मिलेगी– पांडेजी! मैं शशि कान्त बोल रहा हूँ। उनकी स्मृतियों को साश्रु नमन।

सुविख्यात साहित्यकार, व्यंग्यकार एवं कवि
538क/514, त्रिवेणी नगर द्वितीय, लखनऊ– 226020

मित्र का बिछोह

– श्री कैलाश नारायण टण्डन

हमारी मित्रता का प्रारम्भ लखनऊ विश्वविद्यालय में 1950 में हुआ जब हम दोनों B.A. Final में थे। मैंने उस समय जर्मन में डिप्लोमा और शशि कान्त ने रशियन में डिप्लोमा का कोर्स ज्वाइन किया था। उस बीच हम लोग यदा–कदा मिले और फिर 'श्रमण कल्चर स्टडी सर्किल' में हम दोनों एक साथ काम करने लगे। कालान्तर में श्री साहू जैन के पुत्र का विवाह लखनऊ में सम्पन्न हो रहा था और इस शुभ अवसर पर शशि कान्त भी आमंत्रित थे। शशि कान्त ने मुझे भी अपने साथ में उस विवाह में चलने के लिए कहा। बारात में बरातियों की संख्या बहुत सीमित थी और वे सब लोग दारुलशफा में ही ठहराये गये थे। हर कमरे में Fridge और Oven दोनों में खाने–पीने की मेवा, मिठाइयाँ आदि रखी गई थीं। रात्रि में शास्त्रीय संगीत का आयोजन हुआ। इसमें ओंकार नाथ ठाकुर और जोशी जी ने अपने शास्त्रीय संगीत को अत्यन्त आकर्षक रूप में प्रस्तुत किया। यह कार्यक्रम चलता रहा और हम लोगों को श्री रामकृष्ण डालमिया को रिसीव करने के लिए सम्मानित लोगों के साथ Airport जाना पड़ा। वहाँ पर कुछ देर के बाद रामकृष्ण डालमिया अपने निजी वायुयान से आये। उसके पश्चात् हम लोग विवाह के कार्य में सम्मिलित होने एवं प्रीतिभोज में आमंत्रित किये गये। वहाँ पर बहुत गाड़ियाँ थीं और हम लोग अपने–अपने घर चले गये। ये हम लोगों का पहला अवसर था जब हम लोग काफी साथ–साथ रहे।

घनिष्ठता का आरम्भ यूनियन मेडिकल स्टोर जो केसरबाग में स्थित था, में मिलन से हुआ। उस समय उनके पिता डॉ. ज्योति प्रसाद जी उसका संचालन कर रहे थे। हफ्ते में एक दो बार मैं जब भी अमीनाबाद आता तो डॉ. साहब जिनको मैं भाई साहब भी कहता था, उनसे कई बार सम्पर्क हुआ। मैं उनके व्यक्तित्व, उनके ज्ञान, उनके व्यवहार से बहुत प्रभावित हुआ। उन्होंने कई बार कोई समस्या होने पर उसका मार्ग दर्शन भी किया। अक्सर ऐसा होता था कि वह उनके नाश्ते का समय होता था और रमा कान्त जैन झोले में नाश्ता लेकर पहुँच जाते थे। ऐसा कभी नहीं हुआ कि उन्होने हमें नाश्ता करने के लिए स्नेह से कहा न हो। मैं संकोच करता था लेकिन उनके आग्रह को टाल न सका तब रमा कान्त बहुत छोटे थे। बाद में भाई साहब ने एक नये भवन को खरीद लिया और इसमें आजन्म रहे। उस समय वह एक सफेद कई कमरों वाला भवन था। इस भवन में आने का मुझे कई बार अवसर मिला

जब भाई साहब के चरण स्पर्श कर मैंने आशीर्वाद प्राप्त किया। उन्हीं का आशीर्वाद था कि मैंने जर्मन भाषा में डिप्लोमा में प्रथम स्थान प्राप्त किया। अब हम लोगों का मिलन बहुत जल्दी–जल्दी होने लगा था और भाई साहब के छोटे भाई जिन्हें हम चाचाजी कहते थे उनसे भी हमारा परिचय हुआ। विशेष बात यह है कि जैन धर्म में डूबे हुए इतने प्रकाण्ड विद्वानों ने अपनी लेखनी के द्वारा जैन धर्म का और जैन समाज का बहुत हित किया। उस समय ऐसे प्रकाण्ड विद्वानों की समाज को बहुत आवश्यकता थी और उन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से इस कार्य को तन–मन–धन से किया। कालान्तर में शशि कान्त भी इस जन्मजात प्रतिभा से वंचित न रह सके। जिस धार्मिक सुधार का कार्य करने का बीड़ा भाई साहब ने उठाया था उस कार्य को और अधिक तत्परता और लगन के साथ जारी रखा। साथ ही साथ रमा कान्त भी जो एक कवि भी थे, ने अपनी लेखनी के माध्यम से उस दिशा में प्रशंसनीय कार्य किया। रमा कान्त की अप्रत्याशित मृत्यु ने शशि कान्त को बहुत बुरी तरह से झकझोर दिया था। स्मृति में मैं भी उस क्षति को कम करने का असफल प्रयास करता रहा।

शशि कान्त का विवाह 1953 में हुआ था। मुझे और एक अन्य मित्र डॉ. अवस्थी को आरा में शादी में सम्मिलित होने के लिए ट्रेन से चलने के लिए आमंत्रित किया गया। हम लोगों ने आरा पहुंचकर वैवाहिक कार्यक्रमों में भाग लेकर आनन्द उठाया। उस समय हम दोनों ने M.A. कर लिया था। शशि कान्त उ.प्र. सचिवालय में कार्य कर रहे थे। मैं उस समय फैजाबाद में अध्यापन का कार्य कर रहा था और छुट्टी में अक्सर अपने घर हरदोई जाया करता था। ऐसी स्थिति में मैं लखनऊ में रुक जाया करता था और समय निकालकर मिलने का प्रयास करता था। हमारी मीटिंग अधिकतर Old India Coffee House, हजरतगंज में होती थी। सचिवालय में ब्रेक होने पर शशि कान्त वहाँ आकर मेरे साथ चाय भी पीते थे और गप–शप भी करते थे। मेरा विवाह 1955 की जनवरी में हुआ। मैंने उन्हें चलने के लिए कई बार कहा था और उनकी स्वीकृति भी मिल गई थी, लेकिन किसी अप्रत्याशित कार्य की वजह से वे सम्मिलित न हो सके, इसका उन्होंने कई बार क्षमा प्रार्थी के रूप में स्पष्टीकरण दिया। कई वर्षों के बाद मेरे पुत्र का मुण्डन हरदोई में हुआ और मैंने उनसे कहा कि तुम्हारा आशीर्वाद जरूरी है और इस बार उन्होंने मुझे निराश नहीं किया और वे अनेक उपहारों के साथ स्वयं उपस्थित हुए।

हमारा जब भी लखनऊ आना होता तो मैं या तो Old India Coffee House या यूनियन मेडिकल स्टोर या पानदरीबा वाले मकान में मिलने का

प्रयास करता। फोन पर हम लोगों की बात समय–समय पर होती रहती थी। इस बीच मैंने कुछ लिखना शुरू किया था। मैंने उनको बताया कि हस्त रेखा विज्ञान के सम्बंध में मेरा अध्ययन चल रहा और मैं इसलिए नही लिखता हूँ कि मेरी सम्पादकों तक पहुँच नहीं है तब ऐसी स्थिति में मुझसे निराश होने के लिए मना किया और 'जैन सन्देश' में अपने लेख भेजने का सुझाव दिया। उनके ही कहने से 'जैन सन्देश' में मैंने लिखना शुरू किया और कई पाठकों ने Handprint भेजकर मुझसे भविष्य जानने की प्रार्थना की। मैंने सम्पादक को यह लिखकर सूचित किया कि मैं पाठकों के उत्तर देने में असमर्थ हूँ। इसके पश्चात मैंने Astrological Magzine, बंगलौर में कई लेख निकाले। जब पहले लेख का पारिश्रमिक रु. 8.75 आया तो मुझे बड़ी निराशा हुई। इस स्थिति में शशि कान्त ने मुझसे पैसे के लिए लिखने के विचार को हतोत्साहित किया। इस प्रकार मैं लिखता रहा, मैंने डायरी लिखना भी शुरू किया। जब शशि कान्त अध्ययन करते थे, मनन करते थे और अपने विचार 'CARAVAN' में लिखा करते थे। बाद में फिर 'शोधादर्श' कब प्रारम्भ हुआ यह मुझे याद नहीं है, मैंने एक लेख Rockcut Sculpture of Jains पर लिखा और फिर यदा–कदा जब भी समय मिला कुछ न कुछ लिखता रहा।

वेतन वृद्धि के मामले में मेरा आवेदन राज्य सरकार के माध्यम से चल रहा था। प्रबन्ध समिति द्वारा किये गये वेतन वृद्धि को शिक्षा विभाग ने अस्वीकार कर दिया। उसके खिलाफ मुझे आगे की कार्यवाही करनी पड़ी। यह विषय जब सचिवालय में प्रतिक्रिया के लिए भेजा गया उस समय शशि कान्त ने अपने व्यक्तिगत सम्पर्क से उसे मेरे पक्ष में निर्गत करा दिया। यह कार्य अन्यथा सम्भव नहीं था। मैंने इसके लिए जब अपनी कृतज्ञता प्रदर्शित की तो इसके लिए उन्होंने मुझे हल्के से प्रतिवाद किया और कहा कि यह भी कोई धन्यवाद देने की बात है। दिवंगत मंजरी भाभी और मेरी पत्नी दिवंगत शकुन्तला जब कभी लखनऊ में मिलती थीं तो उनमें बहुत देर तक बातें होती रहती थीं। वैसे भी मेरी जब शशि कान्त से फोन पर बात नहीं हो पाती थी तो मैं मंजरी भाभी से फोन मिलाता था और ऐसे अवसर का मेरी पत्नी पूरा लाभ उठाती थीं।

ऐसा कई बार हुआ कि मेरी पत्नी मुरादाबाद से कानपुर के लिए अकेले चलीं, लखनऊ में उन्हे गाड़ी बदलनी होती थी और कानपुर की गाड़ी में बैठना होता था यह जिम्मेदारी मैंने कई बार शशि कान्त को सौंपी और उन्होंने इसे पूरी जिम्मेदारी से निभाया। मेरी पत्नी को जब लीवर सिरोसिस हो गया तो उनकी चिकित्सा कई महीनों तक चलती रही। करीब–करीब रोज ही

उनका और मंजरी भाभी का फोन आ जाता था। अपने अन्तिम दिनों में उन्हें PGI में Admit किया गया। यद्यपि वे ज्यादा दिन वहाँ नहीं रहीं, फिर भी इस बीच दो बार शशि कान्त रमा कान्त के साथ आये और काफी देर तक विभिन्न विषयों पर बात–चीत होती रही। कुछ दिनों के बाद वे संसार से विदा हो गईं। यह हृदय विदारक समाचार सुनकर वे बहुत दुखी हुए और मुझे फोन पर सांत्वना दी। इसके बाद वे करीब हर दिन फोन पर मेरा ध्यान बटाने की कोशिश करते रहे। मंजरी भाभी भी, विशेषतः जब शशि कान्त मुझसे फोन पर बात करते थे उस अवसर का लाभ उठाती थीं और एक सच्चे मित्र की तरह मेरे जख्मों को भरने का प्रयास करती थीं। शशि कान्त ने एक सच्चे मित्र का कर्तव्य निभाया।

जहाँ तक डॉ. अवस्थी का सम्बन्ध है उनका घर चारबाग से काफी दूर था। वे जब अस्वस्थ हो गये थे और मुझे भी उनकी अस्वस्थता के बारे में शशि कान्त ने बताया तो मैं भी उनके साथ उनके घर गया। कुछ महीनों के बाद जब मैं फिर अपने दाँत के इलाज के सम्बन्ध में लखनऊ गया तो मैनें समय निकाल कर शशि कान्त से भेंट की। भोजन के उपरान्त हम दोनों डॉ. अवस्थी से मिलने के लिये गये। वे काफी कमजोर हो चुके थे और बहुत निराश से थे हम लोगों से मिलकर उनके चेहरे पर मुस्कान की लहर दौड़ गई। चाय का समय था अतः उसके लिए आग्रह किया गया और हमारे मना करने के बाद भी उन्होंने कहा कि क्या हमारे साथ चाय नहीं पियोगे। ये मेरी आखिरी मुलाकात थी। कुछ समय के बाद वे संसार से विदा हो गये। शशि कान्त ने 'शोधादर्श' में उनके ऊपर लेख प्रकाशित किया जिसे पढ़कर पुरानी यादें ताजा हो गईं। यह शशि कान्त का आग्रह और मार्ग दर्शन ही था कि वे डॉक्टरेट पाने में सफल हुए।

शशि कान्त ने अपना सम्पूर्ण जीवन अध्ययन, मनन और प्रकाशन को समर्पित कर दिया था। वे धर्म और समाज दोनों विषयों पर सम्बंधित ग्रन्थों का अध्ययन करने में अपना अधिकांश समय व्यतीत करते थे। उनका समस्त जीवन अपने पिता की भांति धर्म और समाज के लिए समर्पित था। उन्होंने 'CARAVAN' में खूब लिखा। 'शोधादर्श' का कोई ऐसा अंक न होता था जिसमें उनका अंग्रेजी और हिन्दी दोनों में या कभी–कभी एक में लेख छपता था। प्रधान सम्पादक होने के नाते 'शोधादर्श' को जीवन देना उनका लक्ष्य था। हमारी बातों में धर्म सम्बन्धी कोई चर्चा नहीं होती थी। हम केवल सामाजिक अंधविश्वास और कुरीतियों पर चर्चा करते थे। कभी–कभी विचारों की भिन्नता भी होती थी लेकिन उससे हमारी मित्रता में जरा–सा भी अन्तर

नहीं आया। उन्होंने अपनी शादी की 25वीं सालगिरह मनाई तो मैं भी पीछे न रहा मैंने भी 2 साल के बाद अपनी 25वीं सालगिरह मनाई। प्रत्येक सिल्वर जुबिली पर हम दोनों ने एक दूसरे को अपने हार्दिक विचारों से सराबोर किया था।

यह तीर्थंकरों की महान कृपा थी कि शशि कान्त ने अपनी शादी की 50वीं सालगिरह मनाई। मैं इस अवसर पर दोनों को बधाई देने में अपने को बड़ा गौरवान्वित अनुभव कर रहा था। उन्होंने इस दिन की स्मृति में चाँदी का एक मोमेन्टो मुझे भी भेजा था जिसमें एक ओर उनका और मंजरी भाभी का चित्र बना हुआ था। समय बीतता गया, उनकी लेखनी चलती गई। वे लिखते रहे, हम पढ़ते रहे। उनका पठन, पाठन, लेखन अन्तिम दिनों तक चलता रहा। वर्ष 2019 में उनकी पुस्तक 'नारद के संवाद' छपी। हमारी अन्तिम मुलाकात उनके सुपुत्र राजीव कान्त की शादी में हुई थी उसके पश्चात हमारा मिलन केवल शाब्दिक मिलन था। जब भी मैंने उन्हे अपनी कोई कृति भेजी तो उन्होंने उसे सहर्ष और सधन्यवाद 'शोधादर्श' में प्रकाशित किया। यह कार्य अबाध गति से चलता रहा। हमारी मुलाकात आमने–सामने तो न हो सकी लेकिन टेलिफोन ने हमारा पूरा साथ दिया।

जीवन के अन्तिम दिनों में मैंने उनसे जब भी फोन किया उन्होंने कभी–कभी शक्तिहीन होने पर भी बड़े उत्साह से मुझसे बातें की। वे जीवन और मृत्यु के पालने में झूल रहे थे। जब मैंने यह अनुभव किया कि वे अपनी शक्ति लगाकर मुझसे बोल रहे हैं तो फिर मैंने यह उचित समझा कि उनके स्वास्थ्य के सम्बंध में उनके पुत्र से सम्पर्क किया जाए। करीब–करीब हर दिन मैं उनके स्वास्थ्य के सम्बंध में नलिन को फोन करता था। अधिक जिम्मेदार होने के कारण नलिन ने अपने को पूर्णरूप से उनकी सेवा और देख–रेख में समर्पित कर दिया था अतः अधिकतर निराश होना पड़ता था। जब मैं लखनऊ में था तब मेरी पुत्री नीना ने यह परामर्श दिया कि आप थोड़ा कम फोन करें। फिर भी आशा की किरण टूटी नहीं। मेरा प्रयास चलता रहा। यह मेरे जीवन का सबसे बड़ा दुर्भाग्य था कि मुझे 30 अक्टूबर को अपरान्ह उनके निधन का समाचार मिला। इस समाचार ने मुझे ऊपर से नीचे तक हिला दिया। मैंने उस मोबाइल को भी फेंक दिया जिसके माध्यम से मुझे यह हृदयद्रावक समाचार मिला था। भगवान उनकी आत्मा को शान्ति दे और हमें इस असह्य दुख को सहन करने की शक्ति दे।

पूर्व प्राचार्य, जी.एन.के. कॉलेज, कानपुर
117/एच–2/56, पाण्डु नगर, कानपुर–208005

वे जैन धर्म, दर्शन तथा इतिहास के प्रकाण्ड विद्वान थे

– **डॉ. परमानन्द जड़िया**

डॉ. शशि कान्त जैन के निधन का समाचार सुनकर अत्यंत दुखी हूँ। वे मेरे परम हितैषी मित्र थे। प्रतिवर्ष सोलह अगस्त को फोन करके मुझे जन्म दिवस की बधाई देते थे। समय–समय पर फोन करके मेरा हालचाल पूछते थे। मैं भी उनसे फोन पर वार्तालाप करता था। आज उनके न रहने पर अतीत की अनेक घटनायें चलचित्र की भांति मानस–पटल पर उभर कर मानस–मंथन करने लगी हैं।

डॉ. शशि कान्त अपने अनुज श्री रमा कान्त जैन के साथ अनेक वर्ष पूर्व मेरी कुटिया पर पधारे थे। मैं जब कभी श्री रमा कान्त जैन से मिलने उनके आवास पर जाता था तो डॉ. शशि कान्त जैन कृपा पूर्वक श्री रमा कान्त जैन के कक्ष में पधार कर हम लोगों की साहित्य–चर्चा का आनन्द लेते थे। मुझे याद आ रहा है कि वे अपने आवास पर आयोजित अपने पिता स्वर्गीय डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के स्मृति समारोहों में मुझे कभी मुख्य अतिथि और कभी सभापति के आसन पर आसीन कर गौरव प्रदान करते थे। वर्ष 2001 में जब मैंने अपनी दिवंगता पत्नी विसना जी के प्रथम स्मृति समारोह का आयोजन किया था तो डॉ. शशि कान्त ने मुझे पत्र भेज कर लिखा था। 'मिलन से महाप्रयाण तक' का प्रकाशन करा कर आपने एक साहित्यिक ताजमहल का निर्माण किया है, जिससे विसना जी सदैव आपके निकट रहेंगी।

डॉ. शशि कान्त ने वर्ष 2012 में नगर के कुछ साहित्यकारों के साथ मेरा भी सम्मान दीर्घ कालीन साहित्य–सेवा के लिये किया था। दैव योग से तबियत खराब हो जाने के कारण मैं सम्मान लेने नहीं पहुँच पाया। अतः दूसरे दिन डॉ. शशि कान्त वह सुन्दर मान–पत्र जिस पर उनके पिता श्री डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का चित्र बना है शीशे में फ्रेम किया हुआ, अंग वस्त्र के साथ मुझे देने मेरी कुटिया पर पधारे थे। आज भी वह मान–पत्र मेरे आगंतुक कक्ष में रखा हुआ है।

डॉ. शशि कान्त के परिवारिक समारोहों शादी–विवाहों में भी मैं सपरिवार सम्मिलित हुआ हूँ।

डॉ. शशि कान्त जैन धर्म, दर्शन तथा इतिहास के अधिकारी विद्वान थे। उन्होंने सचिवालय की सेवा में रहकर पी–एच.डी. का शोध सम्पन्न किया था।

उन्होंने अपने पिता डॉ. ज्योति प्रसाद जैन द्वारा संस्थापित शोध पत्रिका **'शोधादर्श'** को अद्यावधि प्रकाशन पथ पर अग्रसर रखा है। इसमें उनके चाचा श्री अजित प्रसाद जैन, अनुज श्री रमा कान्त जैन तथा पुत्र श्री नलिन कान्त जैन का प्रशंसनीय योगदान रहा है।

सचिवालय की सेवा से निवृत हो जाने के अनेक वर्षों बाद भी सचिवालय पेन्शनर्स एसोसिएशन ने उनका सम्मान किया, यह कम महत्वपूर्ण कार्य नहीं है। उन्होंने अंग्रेजी में **'फ्राउन'** तथा हिन्दी में **'संतर्जन'** नामक पत्रिकायें भी निकालीं। आंग्ल भाषा पर डॉ. शशि कान्त का असाधारण अधिकार था। वे मुझसे अवस्था में छोटे थे परन्तु पहले चले गये। विधि का विधान कोई जान नहीं पाया, परन्तु डॉ. शशि कान्त जैन अपने मित्रों में 'शोधादर्श' के माध्यम से आज भी जीवित हैं और सदैव जीवित रहेंगे। अक्षर ब्रह्म का कभी नाश नहीं होता। परन्तु स्थूल रूप से उनकी अनुपस्थिति मुझे सालती रहेगी।

साहित्य–भूषण, वरिष्ठ साहित्यकार, लेखक एवं कवि
जड़िया निवास, 51, खत्री टोला, मशकगंज, लखनऊ–226003

एक अपूरणीय क्षति

– डॉ. अनिल कुमार जैन

डॉ. शशि कान्त जी से मेरा सम्पर्क पिछले लगभग 22–23 वर्षों से रहा है। आपसे मेरा अनेक बार पत्र व्यवहार हुआ और अनेक विषयों पर फोन पर विस्तृत चर्चायें भी हुई। विभिन्न विषयों पर आपके विचार बहुत ही स्पष्ट तथा तर्कसंगत थे। डॉ. शशि कान्त जी सन् 1990 में विशेष सचिव के पद से सेवा निवृत हुए। तत्पश्चात् आप समाज सेवा के कार्यों में लग गये। जैन शोध –पत्रिका **"शोधादर्श"** का वर्षों तक आपने संपादन किया। अपनी बेबाक लेखनी के लिए आप प्रसिद्ध थे। वर्तमान में जैन संतों में व्याप्त शिथिलाचार से बहुत क्षुब्ध थे तथा उसका वे अपने लेखों और सम्पादकीय के माध्यम से भरसक विरोध करते थे।

राजनीति के क्षेत्र में भी आपने अपनी लेखनी चलाई और जहाँ भी लगा कि कुछ गलत हो रहा है, उसके विरुद्ध भी लिखने से नहीं चूके। आपने समसामयिक राष्ट्रीय राजनीतिक मुद्दों पर आधारित **"Frown / संतर्जन"** नाम से एक पत्रिका भी निकाली। इसमें प्रकाशित उनके कुछ चयनित लेख सन् 2017 में **"नारद के संवाद"** नाम से पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुए हैं। इन लेखों में न सिर्फ तत्कालीन राजनीति पर अपने विचार प्रस्तुत किये, बल्कि कुछ पुराने इतिहास से भी रू–ब–रू कराया है।

समाज के कार्यों में उत्कृष्ट योगदान के लिए इनको विभिन्न संस्थाओं के द्वारा सम्मानित किया गया। आप एक प्रसिद्ध इतिहासज्ञ थे। इन्होंने अनेक पुस्तकें लिखीं। इनकी पुस्तक **"कौशाम्बी"** सन् 1965 में प्रकाशित हुई थी। इनकी दूसरी पुस्तक **"The Hathigumpha Inscription of Kharvela and the Bhabru Edict of Asoka-A Critical Study"** सन् 1971 में प्रकाशित हुई जो काफी प्रसिद्ध है। इनका शोधप्रबंध **"Political and Cultural History of Mid-North India"** सन् 1987 में प्रकाशित हुआ।

दिनांक 30 अक्टूबर 2020 को डॉ. शशि कान्त जी का 88 वर्ष की आयु में निधन हो गया। आपके निधन से जैन समाज ने एक प्रख्यात इतिहासज्ञ, निर्भीक लेखक, प्रखर समालोचक एवं चिंतक खो दिया है। यह समाज के लिए एक अपूरणीय क्षति है। डॉ. शशि कान्त जी को हमारी सादर श्रद्धांजलि।

मोती पार्क के सामने, डी–197, मोती मार्ग, बापू नगर, जयपुर–302015

एक प्रज्ञावान समाजचेता का अवसान

– श्री सन्दीप कान्त जैन

दिनाँक 30 अक्टूबर 2020 को अपरान्ह जब फोन से ज्ञात यह हुआ कि "आदारणीय ताऊजी अब नहीं रहे" तो एक तरह का आघात सा लगा और मन यह स्वीकार करने को तैयार नहीं हुआ। यद्यपि पिछले कुछ समय से गम्भीर रूप से बीमार अवश्य थे लेकिन हम सबको यह उम्मीद थी कि पिछली कई बार की तरह ही इस बार भी वह अपनी अद्‌भुत जिजीविषा के बल पर पुनः स्वस्थ होकर हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे, लेकिन काल के आगे किसी का वश नहीं चलता। वह 30 अक्टूबर को अपरान्ह लगभग 3.30 बजे हम सबसे बहुत दूर चले गये– अपनी स्मृतियों और सीख रूपी धरोहर हमारे पास छोड़कर।

अपने इस जीवन काल में आँख खोलने के बाद इतने लम्बे समय तक (57 वर्ष से अधिक) साथ रहने का अवसर जिस व्यक्ति के साथ मुझे मिला, वो मेरे माता–पिता के अतिरिक्त मेरे 'ताऊजी' ही थे। चूँकि हमारा परिवार एक संयुक्त परिवार रहा है और हम सब एक ही परिसर में साथ–साथ अब तक सौहार्दपूर्वक रहते रहे हैं, तो हमें आज उनकी मृत्यु के पश्चात् ऐसा महसूस हो रहा है कि 2009 में पिताजी की मृत्यु के बाद एक बार फिर से जैसे पिता का साया मेरे सिर से उठ गया हो। यद्यपि ताऊजी हमारे पूरे कुटुम्ब में इस समय सबसे अधिक वय के थे। अच्छी आयु पाई–88 वर्ष से अधिक की। इससे भी अच्छी बात पर यह रही कि लगभग अंत समय तक उनकी इन्द्रियाँ पूर्ण रूप से सक्रिय रहीं। यह बहुत कम देखने में आता है कि इतनी आयु में भी व्यक्ति बिना चश्मे के पढ़–लिख सके। अंत समय तक उनका मस्तिष्क पूर्ण रूप से सक्रिय रहा और स्मृति भी लगभग अक्षुण्ण।

आदरणीय ताऊजी शशि कान्त जैन का जन्म एक मध्यमवर्गीय अग्रवाल जैन धर्मावलम्बी परिवार में 12 फरवरी 1912 को पिता डॉ. ज्योति प्रसाद जी व माता श्रीमती अनन्तमाला जी के मेरठ स्थित घर में बड़ी संतान के रूप में हुआ था। माता–पिता दोनों ही विद्वान थे तो यह तीक्ष्ण बुद्धि उनमें जन्म से ही थी। यद्यपि उनके बाल्य काल में घर में सीमित ही साधन थे, फिर भी अपनी अद्‌भुत मेधा के बल पर उन्होंने हमेशा हर परीक्षा में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया। इतिहास विषय में एम.ए. के साथ लखनऊ विश्वविद्यालय से पी–एच. डी. की उपाधि 1969 में हासिल की। उनके शोध–प्रबंध का विषय था–

"Political and Cultural History of Mid-North India" जो कि पुस्तकाकार में 1987 में प्रकाशित हुई। लखनऊ उनकी कर्मस्थली रही जहाँ लगभग 35 वर्ष उत्तर प्रदेश सचिवालय में सरकारी सेवा में रहे और सन् 1990 में विशेष सचिव के उच्च पद से ससम्मान सेवा निवृत्त हुए। सन् 1953 में 21 वर्ष की आयु में आरा (बिहार) के जमींदार श्री अमृत चन्द्र जैन की पौत्री व श्री रतन चन्द्र जैन की पुत्री मंजरी जैन से उनका विवाह हुआ। उनका विवाह संस्कार स्व. पं. नेमिचन्द्र शास्त्री 'ज्येतिषाचार्य' द्वारा स्वयं सम्पन्न कराया गया था। चूँकि वह स्वयं विद्वान डॉ. ज्योति प्रसाद जी के पुत्र थे और उनकी बारात में कई विद्वान भी सम्मिलित थे, तो उनके विवाह में एक प्रकार से विद्वानों का समागम ही हो गया था दोनों ओर से।

सरकारी सेवा में रहते हुए भी और पारिवारिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए भी ताऊजी का साहित्यिक शौक सदैव जिन्दा रहा जिसके दर्शन हम सबको समय–समय पर होते रहे। अखबारों में अनगिनत लेख/कालम आदि लिखे, रेडियो–टीवी के कार्यक्रमों में भी हिस्सा लेते रहे। साहित्यिक संगोष्ठियाँ, कवि सम्मेलन, मुशायरे आदि का संयोजन करना ताऊजी का शौक था। मुझे कई कवि सम्मेलन व मुशायरे (जो कि ताऊजी के संयोजन में हमारे निवास ज्योति–निकुंज में हुए और जिनमें हमारी ड्यूटी 'वालिंटियर' की होती थी) आज भी याद हैं। भगवान महावीर स्वामी के 2500वें निर्वाण महोत्सव के दौरान 1975 में लखनऊ के रवीन्द्रालय आडिटोरियम में हुई त्रिदिवसीय संगोष्ठी तो आज भी लखनऊ वासियों की स्मृति में है जिसका सफल संयोजन व संचालन ताऊजी ने ही किया था। संगोष्ठी का मुख्य विषय था "जैन धर्म का भारतीय संस्कृति में योगदान" जिसमें कई ख्याति प्राप्त विद्वानों ने शिरकत करके अपने–अपने शोधपूर्ण निबंधों का वाचन किया था। बाद में इन सब आलेखों को पुस्तकाकार में ताऊजी द्वारा प्रकाशित करवाया गया था, ताकि उस संगोष्ठी में व्यक्त विचारों/निष्कर्षों से अन्य लोग भी लाभान्वित हो सकें। ताऊजी की एक खासियत थी कि वह जिस कार्य का भी बीड़ा उठाते थे, उसे बहुत व्यवस्थित तरीके से अपने विशिष्ट अंदाज में अंजाम तक पहुँचाते थे। कार्य की परियोजना/परिकल्पना से लेकर उसकी विस्तृत रूपरेखा–निर्धारण व इसका इम्प्लीमण्टेशन तक सब कुछ वह बड़े योजनाबद्ध तरीके से करने व करवाने में निपुण थे। उनके इन्हीं गुणों को देखते हुए समाज द्वारा अक्सर उनको इस तरह के आयोजनों के संयोजन का भार सौंपा जाता था, जिस दायित्व को बड़ी कुशलता से संपन्न कराते थे।

सन् 1990 में सरकारी सेवा से निवृत्ति के पश्चात वह पूरी तरह से साहित्य–सेवा को समर्पित हो गए और शोध–पत्रिका **'शोधादर्श'** के संपादक/मार्गदर्शक के रूप में इस पत्रिका में उन्होंने चार चाँद लगाने के मुहावरे को चरितार्थ किया। समाज हित में अपने बेबाक विचारों को अवगत कराने में वह कभी पीछे नहीं रहे। अपने जीवन के अन्त समय तक इस पत्रिका से सक्रिय रूप से जुड़े रहे और अन्तिम अंक भी अपनी देख–रेख में अभी सितंबर, 2020 में ही पूरा करवाया अपनी गंभीर बीमारी के बावजूद। 'शोधादर्श' व अन्य पत्रिकाओं में लेखों के माध्यम से वह इतिहास के कई अनजाने–अनछुए तथ्यों को प्रकाश में लाए जिससे भारतीय इतिहस विषय के जिज्ञासुओं, शोधार्थियों को सही दिशा भविष्य में मिल सकेगी। खारवेल के जैन शिलालेखों से संबन्धित उनकी पुस्तक "The Hathigumpha Inscription of Kharvela and the Bhabru Edict of Asoka- A Critical Study" जो कि आस्ट्रेलिया की कैनबरा यूनिवर्सिटी व मगध यूनिवर्सिटी के पाठ्यक्रम में सम्मिलित की गई है, इस पुस्तक को मैं उनकी विद्वत जगत के लिए विशेषकर जैन समाज के लिए विशिष्ट देन मानता हूँ। इस पुस्तक में राजा खारवेल के द्वारा उड़ीसा की खंडगिरि–उदयगिरि स्थित हाथीगुम्फा में उत्कीर्ण जैन धर्म से संबन्धित महत्वपूर्ण शिलालेखों पर शोधपूर्वक विस्तृत विवेचन किया गया है जिसे विद्वतवर्ग ने बहुत सराहा और समादृत किया।

मैं अपने को सौभाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे एक ऐसे परिवार में जन्म मिला जहाँ डॉ. ज्योति प्रसाद जैन, श्री अजित प्रसाद जी, श्री रमा कान्त जी (पिताजी) व डॉ. शशि कान्त जी जैसे मनीषियों को निकट से दखने–जानने और उनसे कुछ सीखने का अवसर मिला। आदरणीय ताऊजी के निधन से न केवल हमारे परिवार की बल्कि पूरे विद्वत–जगत व जैन समाज की एक बड़ी क्षति हुई है, जिसकी भरपाई आसान नहीं है। उनकी स्मृति को नमन करते हुए मैं उनकी सद्गति की कामना करता हूँ।

❑

बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे डॉ. शशि कान्त जी

— श्री दयानन्द जड़िया 'अबोध'

शोधादर्श के माध्यम से डॉ. शशि कान्त जी से जुड़ाव हुआ और उनके सौम्य स्वभाव ने ऐसा आकर्षित किया कि मैं उनसे मिलने उनके घर भी पहुँच जाया करता था और मोबाइल पर भी उनसे बात हो जाया करती थी। वे मेरे अच्छे मित्रों मे से एक थे। चि. नलिन कान्त जी से उनकी अस्वस्थता का पता चला करता था, एक दिन मोबाइल पर ज्ञात हुआ कि 30 अक्टूबर को उनका निधन हो गया, सुनकर हृदय को आघात पहुँचा कि मैंने अपना एक और आत्मीय मित्र खो दिया। वैसे तो श्रीमदभगवंद् गीता के द्वितीय अध्याय के श्लोक संख्या 23 में भगवान श्री कृष्ण ने आत्मा को अजर बताते हुये कहा है–

नैनं छिदन्ति शस्त्राणि
नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्ले दयन्तापो,
न शोषयति मारुतः।।

और 'राम चरित मानस' के किष्किन्धा–काण्ड में भगवान राम ने बालि के मरणोपरान्त तारा को समझाते हुये कहा था–

"जीव नित्य तुम केहि लहि रोवा।"

परन्तु इस संसार में स्वजन के परलोक गमन पर शोक व दुःख का अहसास तो सभी को होता है मैंने भी पत्नी "चन्द्रा जड़िया" के निधनोपरान्त "वेदना" पुस्तक की रचना की थी। कहने का तात्पर्य यह कि यह सत्य है कि यह संसार नाशवान है और यह भी सर्व सत्य है कि जिसने जन्म लिया है वह संसार से विदा अवश्य लेगा। हर व्यक्ति अपने पीछे कुछ स्मृतियां छोड़ जाता है। कुछ की यादें दीर्घ जीवी होती हैं और कुछ की अल्पकालीन। डॉ. शशि कान्त जी ऐसी विभूति थे जो लम्बे समय तक याद किये जायेंगे। प्रथम तो यह कि उन्होंने जिस परिवार में जन्म लिया वह उच्च कोटि की शिक्षा प्राप्त और सुसंस्कृत परिवार रहा है।

डॉ. शशि कान्त जी के पिता डॉ. ज्योति प्रसाद जी जैन उच्च शिक्षा प्राप्त साहित्यकार, कवि व इतिहासकार रहे, साथ–साथ वह 'शोधादर्श' के जन्मदाता रहे। शशि कान्त के चाचा डॉ. ज्योति प्रसाद जैन के बन्धु अजित प्रसाद जैन भी अच्छे लेखक 'विचारक' समाज सेवी होने के साथ–साथ लम्बे समय तक **'शोधादर्श'** के सम्पादक रहे। शशि कान्त के छोटे भाई रमा कान्त जैन भी कवि, लेखक, व्यंग्यकार रहे जिनकी पुस्तक 'गिलास आधा भरा है' अपने समय में चर्चित रही। रमा कान्त जी भी 'शोधादर्श' के सम्पादक रहे।

शशि कान्त जी के पुत्र नलिन कान्त जैन वर्तमान में 'शोधादर्श' के सम्पादक हैं।

डॉ. शशि कान्त जी लेखक, विचारक, समीक्षक व सम्पादक सभी कुछ रहे। उन्होंने इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों मे "Frown/संतर्जन" नामक एक अग्रेंजी/हिन्दी पत्रिका का सम्पादन व प्रकाशन किया जो कई वर्ष तक समाज के मध्य ज्ञान प्रकाश करती रही। वह 'शोधादर्श' के मार्ग दर्शक भी रहे। उनके कुशल समीक्षक होने का प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि अभी 12–12–2020 को 'शोधादर्श' का अंक 88–89 मुझे प्राप्त हुआ है जिसके साहित्य–सत्कार स्तम्भ में पृष्ठ संख्या 89 से 97 तक उन्होंने अनेक पुस्तकों की समीक्षा की है जिसमें मेरी कृति "ऐसा वर दो" पर भी समीक्षा सम्मिलित है, उनकी एक समीक्षा मेरी ही एक अन्य पुस्तक "ये हैं अबोध के नवीन छन्द" पर जिसे 'जयन्ती–एक्सप्रेस' (साप्ता0) ने आठ अन्य समीक्षाओं के साथ अपने 13 मार्च 2015 के अंक में छाप कर राज्य कर्मचारी साहित्य संस्थान के वार्षिकोत्सव में वितरित की थी। इसके अतिरिक्त अन्य मेरी कंई पुस्तकों की समीक्षायें उन्होंने की थीं, वह सच्चे अर्थों में सम्मान योग्य एक अप्रतिम व्यक्तित्व थे इसी कारण उन्हें "पेंशनर्स शिरोमणि" का सम्मान प्राप्त हुआ था।

'शोधादर्श' के पिछले अंक में उन्हें "पेंशनर्स–शिरोमणि" सम्मान प्राप्त होने पर चित्र और समाचार प्रकाशित हुआ था, तब मैंने लिखा था अपने प्रतिक्रिया पत्र में कि जब मुझे "बीसवीं शताब्दी रत्न" सम्मान मिला तब उन्हें भी मिला था और मुझे अमेरिका के A.B.I. द्वारा "Man of The Year" सम्मान मिला था तब उन्हें भी मिला था, यह इस बात का द्योतक है कि उन्हें साहित्य–सेवा के परिप्रेक्ष में अनेक सम्मान प्राप्त हुये।

उनके अनेक लेख इतिहास का आधार लेकर लिखे गये। वह हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में लेख लिखने की क्षमता रखते थे। उनके लेखों में जैन धर्म के इतिहास और सिद्धान्तों पर सप्रमाण प्रकाश डाला गया है, इस प्रकार हम देखते हैं, कि डॉ. शशि कान्त जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी उच्च कोटि के विद्वान साहित्यकार थे, जो साहित्य के क्षेत्र में दीर्घकाल तक याद किये जायेंगे।

ईश्वर से यही प्रार्थना है कि वह गतात्मा को सद्गति प्रदान करे तथा आवागमन के चक्र से निकाल कर मुक्ति प्रदान करे इन्हीं शब्दों के साथ मैं उन्हें अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

मूर्द्धन्य साहित्यकार, लेखक एवं कवि
'चन्द्रा–मण्डप', 370/27, हाता नूरबेग, संगमलाल वीथिका सआदतगंज, लखनऊ–226003

समाज के सजग प्रहरी : डॉ. शशि कान्त

– श्री अंशु जैन 'अमर'

"शोधादर्श" शोध–पत्रिका के मार्गदर्शक डॉ. शशि कान्त जैन का दिनाँक 30 अक्टूबर, 2020 को उनके निज–आवास 'ज्योति–निकुँज' में महाप्रयाण हो गया। वे मेरे ताऊ जी थे और हमारा लगभग 54 साल का साथ रहा। ताऊ जी यूँ तो विगत एक वर्ष से स्वास्थ्य की ऊबड़–खाबड़ डगर से गुजर रहे थे, लेकिन अगस्त, 2020 के आखिरी सप्ताह में वह सदी की भीषणतम घातक कोरोना वैश्विक महामारी की चपेट में आ गये। यद्यपि वह महामारी से ऊबर गये लेकिन उसके दुष्परिणामस्वरूप उनके फेफड़ों में गम्भीर जानलेवा इन्फैक्शन हो गया और अन्ततः वह हम सभी का साथ छोड़कर चले गये। अक्सर यह कहा जाता है कि किसी वस्तु या व्यक्ति की कमी का एहसास उसके चले जाने के बाद होता है, इस बात का अनुभव हमें भी ताऊ जी के देह त्याग के बाद हुआ। वह हमारे परिवार की एक महत्वपूर्ण कड़ी थे, अतः हम सभी परिवार जनों को निःसन्देह अपूरणीय व्यक्तिगत क्षति हुई है।

डॉ. शशि कान्त का जन्म माँ सरस्वती के जैन स्वरूप पुस्तकधारिणी श्रुत देवी के उपासक परिवार में हुआ था। अतः पिता इतिहास–मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन से विद्या–व्यसन और प्रबुद्धता उन्हें विरासत में मिली, जिसे उन्होंने 1952–53 में शासकीय सेवा के अनुभवों से निखार कर अपनी लेखनी से सार्वजनिक पत्र–पत्रिकाओं को अभिसिंचित करना प्रारम्भ कर दिया। मैं विगत 54 वर्ष में उनकी लेखन–साधना का प्रत्यक्षदर्शी रहा हूँ और मैंने पाया कि उनका लेखन सतत् स्वतन्त्र–चिन्तन से प्रसूत रहा। डॉक्टर साहब के साथ–साथ उनके पिता जी, चाचा जी श्री अजित प्रसाद जैन एवं अनुज श्री रमा कान्त जैन पूरे परिवार के लेखन की भावना हमेशा यही रही कि–

"जगत ज्योतिर्मय कर सकूं, लेखनी में धार धर दें।"

ऐसी परोपकारी लेखन–साधना निष्पक्ष और सत्यान्वेषी हो, अतः वह उसे पिष्टपेषण–रहित, कदाग्रह–निरपेक्ष और तथ्य–सापेक्षता की कठोर कसौटी पर अनवरत कसते रहे। ये सभी गुण ताऊ जी के व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों का अभिन्न हिस्सा रहे।

डॉ. शशि कान्त जैन अत्यन्त स्वाभिमानी व्यक्ति थे। सचिवालय सेवा में विशेष सचिव पद पर पदोन्नति का मुद्दा हो या सामाजिक संस्था के दूरगामी हित से जुड़ा हुआ विषय हो, आपने अपने स्वाभिमान से कभी कोई

समझौता नहीं किया और उन्होंने पद–त्याग तक में संकोच नहीं किया।

डॉक्टर साहब ऊपर से जितने कठोर दिखते थे अन्दर से उतने ही सहृदय व्यक्ति थे, जिन्हें अपनी धर्म–पत्नी एवं परिवार से अगाध प्रेम था और उनकी उपलब्धियों पर वे गौरवान्वित महसूस करते थे। 64 साल के लम्बे साथ के बाद जनवरी, 2018 में धर्म–पत्नी के विछोह के दुःअवसर पर शोधादर्श–86 में श्रद्धांजलि आलेख में उन्हें **"स्मृति शेष संगिनी"** के रूप में सम्बोधन और स्वयं को **"छूट गया साथी"** उल्लिखित करना उनके दाम्पत्य–जीवन के सामंजस्य को इंगित करता है।

डॉक्टर साहब के व्यक्तित्व में एक और महत्वपूर्ण गुण था– युवाओं को तराशने–निखारने का उनका तरीका। जैसे कुछ कोच अपने खिलाड़ियों को शाबाशी देकर प्रोत्साहित कर उनकी कला को निखारते हैं, वहीं दूसरे श्रेणी के कोच अपने खिलाड़ियों की तारीफ न करके उन्हें अपने खेल में और सुधार करने के लिये और अधिक परिश्रम हेतु निर्देशित करते हैं। ऐसे कोच कठोर हो सकते हैं, लेकिन प्रायः देखा गया है कि इनके शिष्य ही ज्यादा सफल होते हैं। डॉक्टर साहब की दूसरी श्रेणी के सफल कोच के रूप में गिनती की जा सकती है।

डॉ. शशि कान्त जैन का व्यक्तित्व इतना पारदर्शी था कि उसकी पूरी छाप उनके कृतित्व पर स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। चाहे व्यक्ति हो या संस्था, धार्मिक हो या राजनैतिक– डॉक्टर साहब सर्वत्र एक निर्भीक पत्रकार के रूप में खड़े रहे। आचार्य विद्या सागर महाराज के कीर्ति–स्तम्भों की स्थापना, आर्यिका ज्ञानमती माता जी द्वारा भगवान महावीर की जन्म–स्थली बदलना, सोनिया गाँधी का विदेशी मूल का होना, अमित शाह का स्वयं को जैन कहने में संकोच करना जैसे अनगिनत विषयों पर उन्होंने प्रखर आलोचक की भूमिका अदा की।

डॉक्टर साहब ने समसामायिक राजनीतिक और सामाजिक परिदृश्य पर एक प्रबुद्ध चिन्तनशील पर्यवेक्षक की दृष्टि अपने प्रिय पात्र नारद के माध्यम से अपनी व्यंग्यात्मक कृति **"नारद के संवाद"** में डालकर अनेकानेक चाल–चरित्र–चेहरों को उद्घाटित कर समाज को परिचित कराने का अनूठा प्रयास किया।

डॉ. शशि कान्त जैन जैनेतर समाज से ज्यादा जैन समाज के भीतर व्याप्त कुप्रवृत्तियों से क्षुब्ध थे। शोधादर्श–86 (पृष्ठ–34) में डॉक्टर साहब लिखते हैं– "विगत 28 अप्रैल 2018 को कोलकाता में एक मुनि श्री प्रतीक सागर के शिथिलाचार का समाचार प्रकाश में आया। अहमदाबाद से प्रकाशित

साप्ताहिक पत्र **'जिनेन्दु'** में आचार्य भी पुष्पदंत सागर ने श्री प्रतीक सागर का पक्ष साधन किया है, जो यह संशय सूचित करता है कि क्या वह आचार्य स्वयं भी मुनिचर्या के वैसे ही आदर्श को समर्पित हैं।"

शोधादर्श–87 (पृष्ठ–34) में डॉक्टर साहब लिखते हैं– "तीर्थंकर महावीर के संदर्भ में भ्रांति प्रचारित करने का श्रेय आर्यिका ज्ञानमती जी को भी जाता है जिन्होंने अपने स्वार्थ के लिये भगवान महावीर का जन्म–स्थल ही बदल दिया और उसके लिये उन्होंने कभी खेद भी प्रकट नहीं किया।"

डॉक्टर साहब ने कतिपय जैन साधुओं की चर्या पर अपनी संवीक्षा करते हुए करारी चोट शोधादर्श–70 (पृष्ठ–10) में करते हुए लिखा है– "क्रोध, मान, माया, और लोभ ये चार विषम कषाय बताई गई हैं। जैन धर्म में आत्म–साधना का जो स्वरूप निर्दिष्ट है उसके अनुसार हर श्रावक–श्राविका को गृहस्थ जीवन में रहते हुए भी इन कषायों से अपने को विरत रखना चाहिए। साधुवेश धारण करने पर इन कषायों को लेश भी नहीं रहना चाहिए। परन्तु विडम्बना यह है कि जैनियों के कुछ साधु और साध्वी, इन कषायों से, प्रायः आबद्ध दीख पड़ते हैं। उनका साधुवेश त्याग नहीं वरन् मायाचार का प्रतीक ही प्रतीत होता है। यदि मंत्रियों और राजनेताओं से सत्कार प्राप्त करते हुए फोटो खिंचवाना और उनका प्रसारण करना साधुचार्या का एक आयाम है, तो इसे मान कषाय के पोषण के अतिरिक्त कदाचित कोई नाम नहीं दिया जा सकता। चातुर्मास के उपलक्ष में तथा अन्य प्रकार भी चन्दा इकट्ठा कराना लोभ कषाय की प्रवृत्ति का साक्षात् उदहारण ही कहा जायेगा। विभिन्न प्रकार के निर्माण कार्यक्रमों का सिलसिला भी जारी है जिसे परिग्रह संचयन के अतिरिक्त कोई नाम दिया जाना सम्भव नहीं है। जो महाराज और माताएं इस प्रकार के कषायजन्य कर्मों में लिप्त हैं उनके लिये क्रोध आ जाना कोई अस्वाभाविक बात नहीं है।"

डॉ. शशि कान्त जैन शोधादर्श–86 (पृष्ठ–35) में समाज के प्रबुद्ध वर्ग के प्रति नाराजगी व्यक्त करते हुए लिखते हैं– "एक मुनि महाराज को शासन की ओर से बॉडी गार्ड प्राप्त है। एक महाराज रजत शर्मा के टी.वी. चैनल पर 'आपकी अदालत' में भी उपस्थित होते हैं। एक महाराज का 'संयम स्वर्ण वर्ष' मनाया जा रहा है और इस उपलक्ष में कीर्ति–स्तम्भ स्थापित किये जा रहे हैं तथा उनके मुख के चतुर्दिक आभा मण्डल प्रदर्शित किया जाता है और उनके शीर्ष पर त्रि–छत्र अर्पण किया जाता है, तथा उनको 'भगवान' कहकर सम्बोधित किया जाता है।"

"हमें यह देखने पर विस्मय होता है कि आज शिक्षित और विचारशील

एवं प्रबुद्ध माने जाने वाले जैन महानुभाव मान एवं मायायुक्त साधुचर्या पर आक्रोश क्यों व्यक्त नहीं करते हैं।...........अन्ध श्रद्धा के रूप में जो लोग इस प्रकार के मानयुक्त मायाचार का भक्तिपूर्ण समर्थन करते हैं, उनको समुचित रूप से सम्बोधा जाना अपेक्षित है।"

डॉ. शशि कान्त जैन ने समाज के प्रबुद्ध वर्ग के साथ–साथ वर्तमान पत्रकारिता पर भी क्षोभ व्यक्त करते हुए शोधादर्श–70 (पृष्ठ–10) में लिखा है– "जिस प्रकार लौकिक राजनीतिक क्षेत्र में कलम को खरीदने का उपक्रम चलता है वही उपक्रम जैन समाज में धार्मिक क्षेत्र में भी चल रहा है, जो कि क्षोभ का विषय है।"

धर्म के क्षेत्र में बढ़ती जा रही विकृतियों, अनाचार आदि के प्रति आँखें फेर कर समाज की शुतुरमुर्गी सोच को झकझोरते हुए डॉक्टर साहब पत्रकारों का आवाह्न शोधादर्श–30 (पृष्ठ–282) में कुछ इस प्रकार करते हैं– "पत्रकार–धर्मिता से जुड़े लोगों का दायित्व है कि वे जन समुदाय को तथ्यों से अवगत करायें और सही सोच की ओर प्रेरित करें।"

डॉक्टर साहब ने समाज में जहाँ भी कोई कुप्रवृत्ति, कदाचार, शिथिलाचार आदि देखा, साहस और निर्भीकता के साथ उसकी प्रखर आलोचना की और समाज के विचारशील प्रबुद्ध वर्ग विशेषकर पत्रकारिता–जगत को चेताया भी। उनकी स्पष्टवादी लेखन शैली के कारण कतिपय पाठक उन्हें विचारोत्तेजक शैली का पत्रकार मानते हैं।

डॉ. शशि कान्त जैन ने पत्रकारिता के मानकों का पूर्णतया पालन करते हुए स्वान्तः सुखाय–लेखन कार्य किया। किसी भी धर्म–जाति –पंथ–आम्नाय–संस्था का उन्होंने पिष्टपेषण कदापि नहीं किया। न ही वे किसी कदाग्रह से ग्रसित रहे। वे जीवन–पर्यन्त तथ्यों के आधार पर ही अपनी पत्रकारिता करते रहे। डॉक्टर साहब भली–भांति इस बात से अवगत थे कि ऐसी आदर्शपूर्ण लेखन–यात्रा में लोगों के विरोध व आक्रोश का सामना करना पड़ सकता है। लेकिन डॉक्टर साहब स्वभाव से दृढ़–निश्चयी व्यक्तित्व के धनी थे, इसीलिये, वे अपनी पत्रकारिता के माध्यम से समाज के एक सफल सजग प्रहरी की भूमिका का निर्वहन कर सके। शोधादर्श–30 (पृष्ठ–268) में स्वयं उनकी कविता उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के इस गुण को रेखांकित करती है:–

"बहो, बहो, बहते रहो–
ठहरे विचार, ठहरे पानी की तरह गंधाते हैं।
ठहरी आस्था, हृदय को निस्पन्द कर देती है।

आदि का अन्त स्वभाविक है,
जन्म और मृत्यु दो कूल हैं,
बहो, बहो, बहते चलो–
चाहे धारा के साथ बहो,
चाहे धारा के विपरीत बहो।"

डॉक्टर साहब ने आदि–अन्त की सत्यता को स्वीकार कर जन्म–मृत्यु कूलद्वय के मध्य जीवन–पर्यन्त धारा के विपरीत बहने में संकोच नहीं किया। सजग प्रहरी डॉक्टर साहब के महाप्रयाण से समाज में एक शून्य उत्पन्न हो गया है, जिसकी निकट भविष्य में पूर्ति सम्भव नहीं दिखती है। ❑

शत–शत नमन

– श्री लूणकरण नाहर जैन एवं परिवार

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, लखनऊ के प्रमुख मार्गदर्शक डॉ. शशि कान्त जैन का 30 अक्टूबर 2020 को आकस्मिक निधन होने का समाचार सुनकर मुझे एवं मेरी धर्म सहायिका श्रीमती कमला नाहर जैन को अत्यन्त दुःख हुआ। मेरे आपके परिवार के साथ सन् 1980 से धार्मिक और पारिवारिक सम्बन्ध थे जो आज तक बने हुए हैं। आप जैन समाज के महान विद्वान और लेखक थे। सम–सामयिक विषयों पर आपके गवेशणात्मक लेख 'शोधादर्श' और अन्य पत्र–पत्रिकाओं में छपते रहते थे। देव, गुरु और धर्म के प्रति आपकी दृढ़ आस्था थी। आप अपने पीछे धर्मनिष्ठ सुपुत्रों चि. शिरीष कान्त, चि. नलिन कान्त, चि. राजीव कान्त, सुपुत्रियों सौ. अलका, सौ. शेफाली एवं पौत्र–पौत्रियों, नाती–नातिनों का सुसंस्कारित भरा–पूरा परिवार छोड़ गये हैं। मैं शोक संतप्त परिवार के प्रति हार्दिक संवेदना व्यक्त करता हूँ और भगवान महावीर से प्रार्थना करता हूँ कि उनकी आत्मा को शीघ्र शाश्वत सुखों की प्राप्ति हो।

वो भाग्यशाली और महान होते हैं
जिनके न रहने पर भी
लोग श्रद्धा और आस्था से
उनकी गौरव गाथा का गान करते हैं
डॉ. शशि कान्त जी आज हमारे बीच में नही हैं
पर उनकी यादें हर किसी के दिल में हैं
मैं उनके चरणों में श्रद्धा के सुमन अर्पित करते हुए
शत–शत बार नमन करता हूँ।

अध्यक्ष, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र., लखनऊ

जैन सांस्कृतिक मूल्यों एवं मर्यादाओं के संरक्षक

– श्री सुरेश जैन (आई.ए.एस.)

दार्शनिक चिंतक और पेंशनर्स शिरोमणि आपके पूज्य पिताजी और हमारे वरिष्ठ हितचिंतक आदरणीय शशि कान्त जी के देहावसान का समाचार सुनकर हार्दिक दुख हुआ। नैनागिरि में विराजे भगवान पार्श्वनाथ से प्रार्थना है कि शशि जी की आत्मा को चन्द्रमा सी शांति मिले। उन्हें सद्गति मिले।

श्री शशि कान्त जी ने उत्तर प्रदेश सरकार, जैन साहित्य तथा जैन समाज को अपनी सतत सेवाएं प्रदान की हैं। उनका चिंतन विमर्श प्रायः सभी पाठकों को प्रेरणादायी रहा है। उन्होंने **शोधादर्श** को नई ऊँचाई पर पहुँचाया है। उन्होंने जीवन भर जैन सांस्कृतिक मूल्यों और मर्यादाओं का संरक्षण किया।

16 फरवरी, 2019 को हमें और हमारी पत्नी न्यायमूर्ति श्रीमती विमला जी को लखनऊ में श्रद्धेय शशि जी का भरपूर स्नेहपूर्ण आशीर्वाद मिला। उन्होंने अपने दरवाजे पर हमारा स्वागत किया। प्रिय नलिन जी और उनकी श्रीमती जी ने हमें ममता से ओतप्रोत आतिथ्य प्रदान किया। आदरणीय शशि जी से विभिन्न सामाजिक एवं धार्मिक विषयों पर विस्तृत चर्चा हुई। उन्होंने लखनऊ नगर की विविध ऐतिहासिक जानकारियां दीं। उनकी मृत्यु के कुछ दिन पूर्व ही उनका टेलीफोन पर मंगल आशीर्वाद प्राप्त कर हमें बड़ी प्रसन्नता हुई।

उन्होंने तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति के माध्यम से 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र शोध पुस्तकालय' वर्ष 1976 में श्रुत पंचमी को स्थापित किया और उसे गत 45 वर्षों से दिन दूनी प्रगति के साथ संचालित कर रहे हैं। इसी के माध्यम से सुप्रसिद्ध **शोधादर्श** पत्रिका का प्रधान संपादक के रूप में वास्तविक रूप से फरवरी, 1986 से (थोड़े से अंतराल को छोड़कर) जून, वर्ष 1988 तक नियमित रूप से संपादन और प्रकाशन करते रहे हैं। उनके जीवन के अंतिम क्षणों की निम्नांकित दो पंक्तियां सदैव पठनीय और अनुकरणीय हैं–

चन्द्र वदन है सुधा सदन, अमृत कण टपकाता जा।
अवसाद ठहर नहीं पाये, मन्द–मन्द मुस्काता जा।।

शोधादर्श के पितृ पुरुष और समूची जैन संस्कृति के चार आधारभूत स्तंभों– डॉ. ज्योति प्रसाद जैन, श्री अजित प्रसाद जैन, श्री रमा कान्त जैन और श्री शशि कान्त जैन के चरणों में हम श्रद्धा सुमन समर्पित करते हुए प्रार्थना करते हैं कि वे जहां भी हों, वहीं से मिल–जुलकर हमारे साथी और मित्र नलिन कान्त जी को अपनी पूरी ऊर्जा से आपूरित अपना मंगल आशीर्वाद देते रहें, जिससे **शोधादर्श** प्रगति के सोपानों पर सदैव आगे बढ़ता रहे।

अध्यक्ष, जैन तीर्थ नैनागिरि
30, निशात कालोनी, भोपाल–462003 (म.प्र.)

जैनागम व साहित्य जगत में अपूरणीय क्षति

– डॉ. लोकेश जैन, डॉ. दीपा जैन

आदरणीय बाबूजी से मेरा परिचय 2009–10 में हुआ जब मेरी बहन डॉ. दीपा जैन ने अपना विद्यावाचस्पति का शोध कार्य–'गुणस्थान में अध्ययन' पूर्ण किया था।

श्री नलिन कान्त भाईजी के पत्र के बाद इस शोध कार्य का सारांश 'शोधादर्श' में छपा। उसके बाद बाबूजी से आत्मीयता कब स्थापित हो गई पता ही नहीं चला। कई बार मैंने अपने भी लेख आपके पास भेजे। उनके साथ प्रायः समसामयिक सामाजिक राजनैतिक परिस्थितियों पर फोन पर विचार विमर्श होता रहता था। उनका चिंतन बहुत गहरा तथा विश्लेषण एकदम तटस्थ वैज्ञानिकता को लिए हुए होता था। आपका स्नेह मुझे परिवार के सदस्य की तरह ही मिलने लगा। हालांकि मैं आपसे कभी प्रत्यक्ष रूप से नहीं मिला तथापि आप परिवार के सभी सदस्यों से परिचित थे। जब कभी मैं दुविधा में होता तो मेरा मार्गदर्शन सदैव वात्सल्य के साथ किया करते थे।

इस वर्ष लॉकडाउन में हम सतत विमर्श व संपर्क में थे। अंतिम मुलाकात फोन पर हुई जब आपने कोरोना से पीड़ित होने से अवगत कराया था। हम तो स्वास्थ्य लाभ की कामना कर रहे थे कुछ समय से आपका फोन नहीं लग रहा था फिर इस अंक के साथ मिली आपके महाप्रयाण की खबर ने मुझे स्तब्ध कर दिया। इस नश्वर शरीर को सभी को छोड़ना होता है लेकिन इस शरीर का सदुपयोग जो बाबूजी की तरह कर सके वे विरले ही होते हैं। इतना सरल व प्रभावी व्यक्तित्व जो किसी को भी अपना बना ले। वे सही मायनों में विचारपुंज थे। जैनागम व साहित्य जगत में उनकी यह क्षति

अपूरणीय है क्योंकि इतनी निर्भीकता से संयम के साथ आगमसम्मत बात को दृढ़ता के साथ रखपाना हर किसी के बस की बात नहीं। वे बिना तथ्यों के कोई बात नहीं कहते थे तथा संगत तथ्यों को एकत्र करने में अपनी समग्र इच्छा शक्ति झोंक देते थे वो भी उस उम्र में जब लोग स्वयं को निवृत मानकर निष्क्रिय हो जाते हैं और अपनी भूमिका को समेट लेते हैं। प्रभु आपकी दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करे। अश्रुपूरित नेत्रों के साथ परम आदरणीय बाबूजी को हम सभी परिवार–जनों की हार्दिक भावभीनी श्रद्धांजलि नमन।

प्रोफेसर, ग्रामीण प्रबन्ध अध्ययन केन्द्र, गुजरात विद्यापीठ
रंधेजा (जि. गांधीनगर)–382620

आदर्श जैन श्रावक एवं साहित्यकार

– डॉ. अमित जैन

आपके द्वारा भेजा गया 'शोधादर्श' का अंक और साथ में संलग्न पत्र प्राप्त हुआ। पत्र पढ़कर मन में बहुत दुख का अनुभव हुआ कि आपके पूज्य पिता जी डॉ. शशि कान्त जैन जी अब हमारे बीच नहीं रहे। मैं चाणक्य वार्ता परिवार की ओर से उन्हें शत–शत नमन करते हुए श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं।

आपके पूज्य पिता जी के साथ मुझे आपके आवास पर कई बार मिलने का मौका मिला। डॉ. शशि कान्त जी एक आदर्श जैन श्रावक, साहित्यकार, संवेदनशील व्यक्तित्व के धनी और भारतीय इतिहास के मर्मज्ञ विद्वान थे। जब मैंने 'भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में उ0प्र0 जैन समाज का योगदान' विषय पर अपना शोध कार्य प्रारंभ किया, उस समय मेरा अक्सर लखनऊ आना–जाना रहा। डॉ. साहब से प्रथम मुलाकात के दौरान उन्होने मेरे विषय से संबधित अनेक रोचक, प्रमाणिक एवं ऐतिहासिक जानकारियां मुझे प्रदान की, जिसके कारण शोध कार्य में मुझे बहुत सहयोग प्राप्त हुआ। अनेक जैन पत्र–पत्रिकाओं के बारे में उन्हें बहुत ही गहन जानकारी थी और अनेक जैन स्वतंत्रता सेनानियों को वे व्यक्तिगत रूप से भी जानते थे।

मेरा शोध कार्य पूर्ण होने के बाद जब मैं डॉ. साहब से मिलने के लिये ज्योति निकुंज आया, तो उन्होंने मेरी सराहना की तथा शोध कार्य को अति उत्तम बताया। मेरा यह शोध प्रबंध बाद में भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा पुस्तक रूप में प्रकाशित किया गया, जिसका विमोचन भारत के माननीय राष्ट्रपति श्री

प्रणव मुखर्जी ने राष्ट्रपति भवन में किया। इस पुस्तक में भी मैंने डॉ. शशि कान्त जी और डॉ. रमा कान्त जी जैन का स्मरण किया है। आपका परिवार आज ही से नहीं बल्कि सौ वर्षों से भी अधिक समय से जैन धर्म एवं समाज की सेवा में समर्पित होकर कार्य कर रहा है। मुझे आशा है कि आप पिता जी डॉ. शशि कान्त जैन जी के आदर्शों को सदैव अपने हृदय में संजोये हुये उनके मार्ग पर निरंतर आगे बढ़ते रहेंगे।

सम्पादक–चाणक्य वार्ता
'सन्निधि', ए–28, मनसाराम पार्क, नई दिल्ली–110059

बेबाक लेखक

– श्री ललित कुमार नाहटा

डॉ. शशि कान्त जी जैन से मैं कभी मिल तो नहीं पाया, लेकिन उन्हें अक्सर पढ़ता था। करीब 450 जैन पत्र–पत्रिकाओं में हर माह सौ के करीब पत्र–पत्रिका मेरे यहाँ आती हैं, उसमें 6–7 पत्र–पत्रिकाओं को छोड़कर बाकी को मैं सरसरी तौर पर ही देखता हूँ। 6–7 पत्र–पत्रिकाओं को मैं फुर्सत के समय में मनोयोग से पढ़ता हूँ, उसमें एक **'शोधादर्श'** काफी वर्षों से मैं पढ़ रहा हूँ।

किसी भी पत्रिका को पढ़ने से आप उसके सम्पादक की साहित्यिक रुचि व धार्मिक–सामाजिक प्रसंगों को समझने की उनकी क्षमता से रूबरू हो जाते हो। जिसे मैं अपने शब्दों में कहता हूँ कि मैं सम्पादक/लेखक को पढ़ रहा था। डॉ. शशि कान्त जी, सही लगे या गलत लगे, स्पष्ट व बेबाक कहने व लिखने में विश्वास रखते थे, अतः पढ़ने में अच्छा लगता था। डॉ. शशि कान्त जी जैन का देहावसान मात्र उनके परिवार की ही क्षति नहीं है, वरन् धर्म व साहित्य जगत की भी क्षति है। जन्म के साथ ही मृत्यु भी प्रकृति का शाश्वत नियम है। 'उप्पणे वा, धुवे वा, निगमे वा' ये शब्द परमात्मा महावीर के द्वारा कहे गये जगत के सार शब्द हैं। इसे मात्र पदार्थ के लिये नहीं वरन् व्यक्ति के लिये भी हम मान सकते हैं। व्यक्ति जन्म लेता है, मृत्यु को प्राप्त करता है, लेकिन अपने प्रकट किये विचारों, कृतित्व एवं उपलब्धियों के कारण स्थायी रूप से स्मृति रूप में विद्यमान रहता है।

इस पृथ्वी ग्रह पर डॉ. शशि कान्त जी जैन के शरीर में अवतरित उस भव्य आत्मा को नमन।

'हरखमणि', 21, आनन्द लोक, अगस्त क्रान्ति मार्ग, नई दिल्ली–110049

शोध–मनीषी डॉ. शशि कान्त जैन

– डॉ. कुसुम पटोरिया

विश्रुत इतिहास–मनीषी व जैन समाज के जाज्वल्यमान नक्षत्र डॉ. ज्योति प्रसाद जैन का परिवार एक धर्मनिष्ठ व सम्मानित परिवार रहा है। उनके शोधकार्य जैन संस्कृति व इतिहास के लिए मील के पत्थर हैं। इतिहास, साहित्य व शोध के प्रति यह अभिरुचि व निर्भीक लेखन के संस्कार उनके भाई स्व. अजित प्रसाद जी, दोनों पुत्रों में ही नहीं तीसरी पीढ़ी में भी विद्यमान हैं।

आपके ज्येष्ठ पुत्र डॉ. शशि कान्त जैन इतिहास व साहित्य के आधुनिक संशोधकों में अग्रगण्य थे। उनके शोधकार्य में उनका मूलगामी निष्पक्ष व अनाग्रही दृष्टिकोण झलकता है। साहित्य व इतिहास के अतिरिक्त वर्तमान समाज में व्याप्त शिथिलताओं और उनके समाधान पर भी उनकी निर्भीक लेखनी चली है। उनका देहावसान विद्वत–जगत की अपूरणीय क्षति है।

मेरी पुस्तक 'यापनीय और उनका साहित्य' में मैंने खारवेल का सन्दर्भ दिया था, उसे अद्यतन करने के लिए उन्होंने अपनी पुस्तक 'The Hathigumpha Inscription of Kharvela and the Bhabru Edict of Asoka – A Critical Study' भेजी थी। साथ ही उस पर समीक्षा भी की थी।

उनके सोद्देश्य व सार्थक जीवन के प्रति मेरा विनम्र प्रणाम। उनका परिवार जो कुछ अंशों में मेरा भी परिवार है, आ. रमा कान्त जी मेरे जीजाजी थे। परिजनों को दुःख सहन करने की शक्ति मिले, यह मंगलकामना है।

पूर्व प्रोफेसर, नागपुर विश्वविद्यालय, नागपुर–440001

अपूरणीय क्षति

– डॉ. प्रभाकिरण जैन

स्मृतिशेष डॉ. शशि कान्त जैन जी को हमारी भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित है। मुझसे उनकी बहुत बार फोन पर चर्चा होती थी। मेरी पुस्तकों के विषय में और मेरी कविताएं 'शोधादर्श' में उन्होंने बहुत सुन्दर तरीके से प्रकाशित कीं। उनकी स्नेहपूरित भाषा और अपरिमित ज्ञान ने मुझे सदा प्रभावित किया। उनका जाना हमारे समाज के लिए अपूरणीय क्षति है।

सुप्रसिद्ध साहित्यकार, पन्ना भवन, दरियागंज, नई दिल्ली–110002

श्रद्धा–सुमन

श्री लूणकरण नाहर जैन, अध्यक्ष, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ0प्र0, लखनऊ

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ0प्र0 के आजीवन सदस्य 88 वर्षीय डॉ. शशि कान्त जैन का लखनऊ में शुक्रवार दिनांक 30 अक्टूबर, 2020 को अपरान्ह 3.30 बजे महाप्रयाण हो गया। वह लगभग दो माह संक्रमण के कारण अस्वस्थ रहे। अपने पीछे वह प्रपौत्र–प्रपौत्री सहित भरा–पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

डॉ. शशि कान्त जी समिति की स्थापना से जुड़े और प्रबन्ध समिति के सदस्य थे। उनका परामर्श और सहयोग समिति के कार्यकलापों को निष्पादित करने में विशेष रूप से सहायक होता था। समिति की शोध पत्रिका 'शोधादर्श' का सम्पादन उन्हीं के मार्गदर्शन में होता था। वह उत्तर प्रदेश शासन में विभिन्न पदों पर कार्य करते हुए विशेष सचिव, शिक्षा के पद से सेवानिवृत्त हुए और सत्यनिष्ठा एवं कर्तव्य परायणता के लिये विशेष रूप से ख्याति प्राप्त थे। उ0प्र0 शासन द्वारा सरकारी कार्य के अतिरिक्त उत्कृष्ट बौद्धिक कार्य करने कि लिये उन्हें सम्मानित किया गया था। वह कुशल लेखक, समालोचक, कवि, निष्पक्ष पत्रकार, ओजस्वी वक्ता एवं अपनी आन के प्रति सदा सजग, उत्कृष्ट प्रतिभा के धनी थे। उनमें बौद्धिक कार्य सम्पादन की अद्भुत क्षमता थी। उनका विशेष आग्रह गुणीजनों एवं गुरुजनों को सदैव स्मरण और सम्मानित करने का होता था।

उनके निधन से समिति का एक प्रेरणा स्तम्भ विलीन हो गया। समिति के सभी सदस्यों को उनके चिर वियोग से हार्दिक संताप हुआ है।

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ0प्र0 स्मृतिशेष डॉ. शशि कान्त जैन के प्रति अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करती है, और श्री जिनेन्द्र देव से दिवंगत आत्मा की चिरशांति एवं सद्गति की प्रार्थना करती है तथा शोक संतप्त परिवारजनों के प्रति हार्दिक संवेदना व्यक्त करती है।

श्री विनित जैन, अध्यक्ष, श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन सभा, लखनऊ

श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन सभा, लखनऊ को डॉ. शशि कान्त जी जैन के 30–10–2020 को हुए आकस्मिक निधन का समाचार सुनकर अत्यन्त दुख हुआ। आप इतिहास–मनीषी विद्यावारिधि स्व. डॉ. ज्योति प्रसाद जी के ज्येष्ठ सुपुत्र थे। आप जाने माने लेखक, सम्पादक और समालोचक थे। आपके लेख मुनियों में शिथिलाचार और समाज में बढ़ते हुए आडम्बर पर

विभिन्न जैन पत्र–पत्रिकाओं में छपते रहते थे। आप हमारे समाज के निमंत्रण को स्वीकार कर भगवान महावीर के जन्म कल्याणक महोत्सव मे विगत 15–20 वर्षों से बराबर पधारते रहे हैं। आपके द्वारा अध्यक्ष या मुख्य अतिथि के रूप में दिया गया, उद्बोधन हमारे समाज के मार्गदर्शन का काम करता था।

आपके निधन से समस्त जैन समाज ने एक महान विद्वान मनीषी को खो दिया है। सभा आपके शोक संतप्त परिवार के प्रति हार्दिक संवेदना व्यक्त करती है और भगवान महावीर से प्रार्थना करती है कि वो स्वर्गस्थ आत्मा को स्वर्ग में चिर शान्ति दें।

डॉ. अनुपम जैन, सम्पादक–अर्हत् वचन, कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इंदौर

आपके पूज्य पिताजी डॉ. शशि कान्त जी के निधन का समाचार मिला दुःख हुआ। मैं उन सौभाग्यशाली व्यक्तियों में से हूँ जिन्हें डॉ. ज्योति प्रसाद जैन एवं डॉ. शशि कान्त जैन दोनों का सान्निध्य प्राप्त हुआ।

डॉ. शशि कान्त जी के कार्यकाल में भी **शोधादर्श** की गुणवत्ता, निर्भीकता एवं निष्पक्षता बरकरार रही उनके निधन से जैन समाज, पत्रकार जगत एवं अकादमिक वर्ग की अपूरणीय क्षति हुई है।

कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ परिवार दिवंगत आत्मा की शीघ्र मुक्ति एवं शोक संतप्त परिवार हेतु धैर्य की कामना करता है।

श्री अजित जैन 'जलज', राष्ट्रीय प्रचारक, करुणा अंतर्राष्ट्रीय, टीकमगढ

जैन शोध के रत्नत्रय (डॉ. ज्योति प्रसाद जी, श्री अजित प्रसाद जी एवं श्री रमा कान्त जी) के जाने के बाद श्रद्धेय डॉ. शशि कान्त जी का वियोग अंतिम ज्योति पुंज का बुझ जाना सा लगा। एक उदार, वृहद, विहंगम दिव्य दृष्टि : जिसने इस सर्वथा धूमिल होती विद्वत प्रभा में शशि जैसी कान्ति बिखराने की हरदम कोशिश की।

विगत एक शताब्दी में जैन विद्वानों ने अनेक युगान्तकारी कार्य किये हैं परंतु उस शोध बोध का अभी तक कोई समुचित सदुपयोग नहीं हो सका है। **शोधादर्श** को अपने चारों युग पुरुषों के विचार वैशिष्ट्य को क्रमशः सबके सामने रखना चाहिये, उनके चिन्तन पर चलते हुये अगर हम आगामी वर्षों में कुछ सार्थक उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकें तो यही श्रद्धेय शशि कान्त जी के लिये सबसे बड़ी श्रद्धांजलि होगी।

संतवाद एवं पंथवाद के एकान्तिक मकड़जाल से मुक्त, शुद्ध अनेकान्तिक, आगममार्गी, भयमुक्त साहसी विद्वान, पूरी तरह से रचनात्मक एवं सकारात्मक रीति से जैनत्व का जागरण करें, यही **शोधादर्श** का संकल्प हो, ऐसी मेरी भावना है।

श्री रवीन्द्र कुमार 'राजेश', अलीगंज, लखनऊ

अपने प्रिय मित्र डॉ. शशि कान्त जी की 30 अक्टूबर, 2020 को आकस्मिक मृत्यु के समाचार ने मुझे एवं मेरे प्ररिवार को बुरी तरह झकझोर दिया। जीवन के मानवीय पक्षों के संरक्षक डॉ. शशि कान्त जी का नैतिक मूल्यों के परिपालन में अटूट विश्वास था। शशि कान्त जी सबके प्रति सद्भाव रखते थे।

शशि जी की विद्वता का सभी सम्मान करते थे। उनके मार्ग दर्शन में 'शोधादर्श' पत्रिका के विभिन्न अंकों में जैन धर्म के आदर्शों की बड़ी विशिष्ट विवेचना मिलती है। वे मेरे बड़े घनिष्ट मित्र थे। उनके अधिकांश आयोजनों में मैं भाग लेने का प्रयास करता था।

मैं परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि वे जिस लोक में भी गये हों, परम शांति प्राप्त करें।

शशि कान्त जी थे महानतम
शत–शत विनत प्रणाम।
आगामी यह अंक समर्पित हो
उन्हीं के नाम।

श्री बी.डी. अग्रवाल, राजेन्द्र नगर, लखनऊ

प्रिय शशि कान्त के देहावसान का समाचार जानकर मैं सन्न रह गया। बड़े प्रयत्न के पश्चात भी निश्चय न कर पाया कि अपनी भावनायें किन शब्दों में व्यक्त करूँ।

30 साल से अधिक पुराना साथ तथा मैत्री आँखों के सामने घूम गई। कितने अपनेपन व प्यार से कटे बीते दिन याद आने लगे।

शशि कान्त की अपने कार्य के प्रति लगन, कर्मठता, शान्त व गम्भीर स्वभाव अपनी आँखों के सामने घूम गये। इतने बड़े विद्वान होने पर भी सरलता तथा हर एक से प्यार से बात करना याद आया।

ईश्वर से प्रार्थना है कि उनकी आत्मा को शान्ति प्रदान करे तथा इस परिवार में निरन्तर विद्वता का अड्डा जमा रहे।

श्री मनोज आभा जैन, आशियाना, लखनऊ

बहुत विलंब से आज शोधादर्श की प्रति मिली। जैसे ही प्रति को खोला तो अन्दर के पत्र को पढ़ कर स्तब्ध रह गया। शशि कान्त भाई साहब के महाप्रयाण के समाचार ने मुझे आहत कर दिया। उनके विलक्षण व्यक्तित्व और मौलिक प्रतिभा ने दिल पर अमिट छाप छोड़ी है। प्रचलित विचारधारा से हटकर अपनी निजी सोच उनका विशेष गुण था जो कि सदा अनुकरणीय रहेगा। उनका महाप्रयाण जैन समाज के लिए अपूरणीय क्षति है। उनकी विचारधारा हम सबके लिए प्रेरणास्रोत है।

Dr. Kamal, Dr. Beena Jain, Indira Nagar, Lucknow

We are deeply saddend by sudden demise of respected uncle. May God provide peace to departed soul and courage to you all for bearing this great loss. At this time of loss we are with you. He was a gem of a man. We will always cherish his sweet memories.

डॉ. अभय कुमार जैन, आशियाना, लखनऊ

दुखद समाचार। एक विचारक का पर्याय परिवर्तन।

श्रद्धासुमनांजलि

—डॉ. कैलाश नाथ द्विवेदी

ज्योतिनिकुंजवासोऽभूत् लखनऊपुर्यां शुभे।
शोधादर्शेन सुख्यातः, शशिकान्तः सुधीःबुधः।।
समाजस्य सपर्यायां, संलग्नः सेवकोत्तमः ।
आसीत् सद्धर्मतत्त्वज्ञः, शशिकान्तो बुधोत्तमः।।
महावीरस्मृतिः पुण्या, पोषिता येन मानिना।
तच्छिक्षया कृता सेवा, शशिकान्तेन धीमता।।
नमो मित्राय धीराय, संस्कृतेर्ज्ञानधारिणे।
समाजे कृतकार्याय, शशिकान्त यशस्विने।।
धर्मज्ञकर्मशीलाय, ज्ञानिने मानदायिने।
सुहृच्छशिकान्ताय, श्रद्धांजलिः समर्प्यते।।

चित्र वीथिका

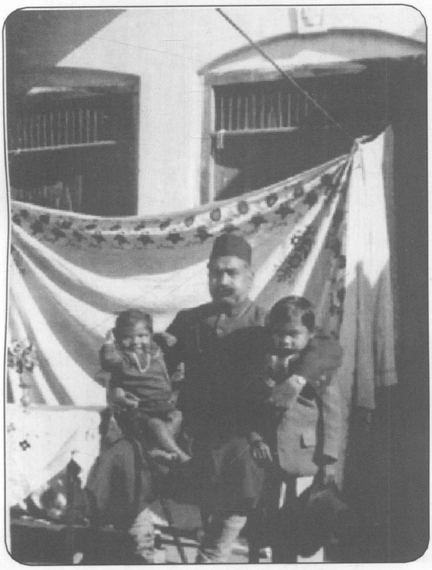

सन् 1936–38 : डॉ. शशि कान्त (दांये खड़े), अनुज रमा कान्त के साथ पितामह पारस दास जी की छांव में

मार्च, 1951 : एन.सी.सी. में कैडेट

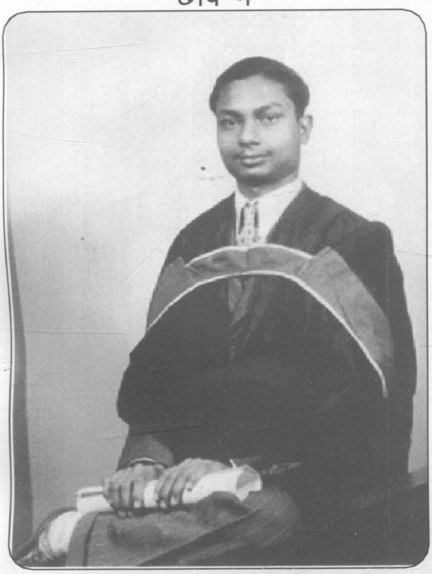

दिसम्बर, 1951 : बी.ए. की डिग्री प्राप्त करने पर

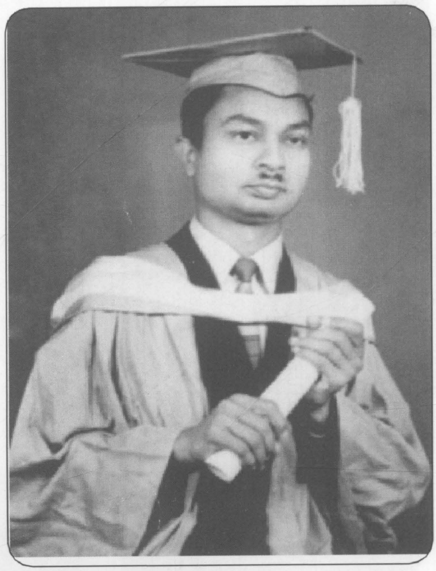

फरवरी, 1970 : पी–एच.डी. की उपाधि के साथ

डॉ. शशि कान्त एवं श्रीमती मंजरी : परिणय 27 नवम्बर, 1953 ई.

डॉ. शशि कान्त एवं श्रीमती मंजरी : परिणय रजत जयन्ती– 27 नवम्बर, 1978 ई.

डॉ. शशि कान्त एवं श्रीमती मंजरी :
परिणय स्वर्ण जयन्ती – 27 नवम्बर, 2003 ई.

डॉ. शशि कान्त एवं श्रीमती मंजरी :
परिणय हीरक जयन्ती– 27 नवम्बर, 2013 ई.

अप्रैल, 1970 : डॉ. शशि कान्त (बांये खड़े), धर्मपत्नी मंजरी (बांये बैठी), दादी, माता–पिता, अपने एवं अनुज के परिवार के साथ

फरवरी, 2020 : डॉ. शशि कान्त अपने भरे–पूरे परिवार के बीच में

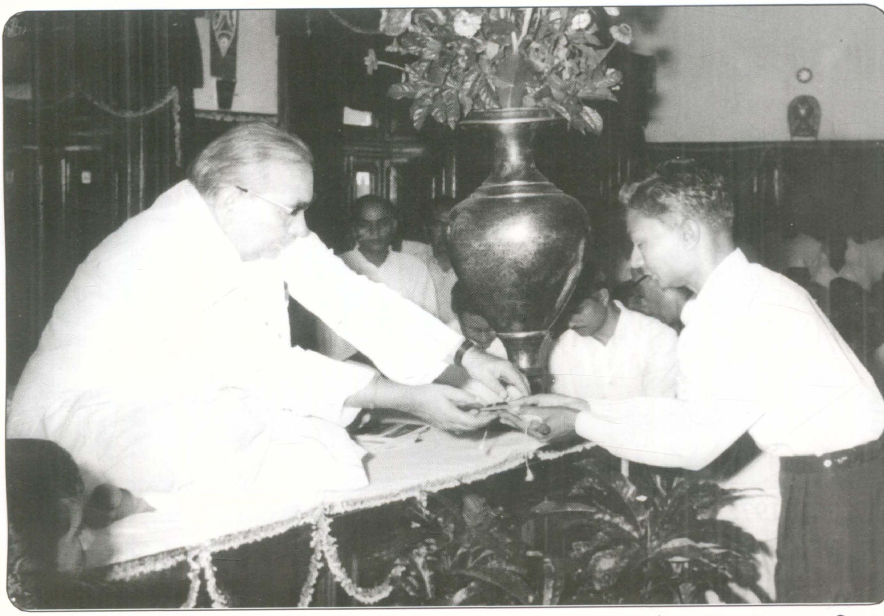

2 अक्टूबर, 1972 ई. – तत्कालीन मुख्य मंत्री, उत्तर प्रदेश, पं. कमलापति त्रिपाठी द्वारा डॉ. शशि कान्त का उत्कृष्ट बौद्धिक कार्य के लिए सम्मान

22 नवम्बर, 2018 ई. – उत्तर प्रदेश सचिवालय पेन्शनर्स वेल्फेयर एसोसियेशन के वार्षिक अधिवेशन में डॉ. शशि कान्त जैन 'पेशनर्स शिरोमणि' की उपाधि से विभूषित

13 मई, 1972 ई. : 'कान्त बाल केन्द्र' विद्यालय के संस्थापक डॉ. शशि कान्त का प्रधानाध्यापिका श्रीमती मंजरी जैन, संरक्षक डॉ. ज्योति प्रसाद जैन एवं सत्र 1971–72 के बच्चों के साथ समूह चित्र

'कान्त बाल केन्द्र' विद्यालय के बच्चों के साथ गणतन्त्र दिवस मनाते डॉ. शशि कान्त, साथ में (बांये खड़े) श्री अजित प्रसाद जैन

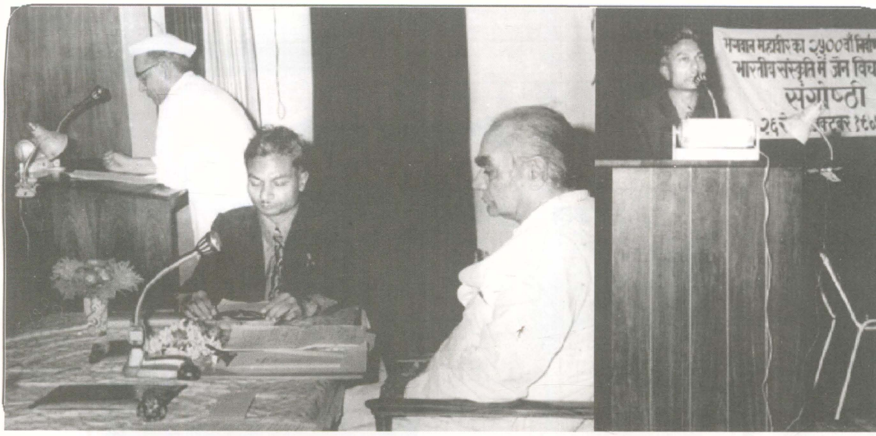

26 अक्टूबर, 1975 ई. – तीर्थंकर महावीर के 2500 वें निर्वाण महोत्सव पर आयोजित संगोष्ठी का उद्घाटन सत्र : (बांया चित्र) डॉ. रामजीलाल सहायक, तत्कालीन उच्च–शिक्षा मंत्री, उ.प्र., माइक पर उद्बोधन देते हुए, डॉ. शशि कान्त (संयोजक), डॉ. केसरी नारायण शुक्ला, अध्यक्ष, कला संकाय, लखनऊ विश्वविद्यालय; (दांया चित्र) डॉ. शशि कान्त माइक पर सम्बोधित करते हुए

2, अक्टूबर, 1988 ई. – श्री जैन धर्म प्रवर्द्धिनी सभा द्वारा आयोजित 'अहिंसा सम्मेलन' में डॉ. शशि कान्त व्याख्यान देते हुए

10 मई, 1987 ई. – अनन्त–ज्योति विद्यापीठ के तत्वावधान में आयोजित तृतीय विद्वान–मनीषी अभिनन्दन समारोह में डॉ. शशि कान्त अभिभाषण देते हुए

25 जून, 1988 ई. – डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की श्रद्धांजलि सभा में डॉ. शशि कान्त पिता जी का स्मरण एवं नमन करते, 'पद्मभूषण' पं. अमृत लाल नागर बैठे हुए

11 जून, 2014 ई. – प्रेमचंद सभागार में आयोजित काव्य कृति 'सोनचिरैया फिर चहकेगी' के लोकार्पण समारोह में डॉ. शशि कान्त आशीर्वचन देते हुए, श्रीमती बिन्दु जैन, श्री राजीव कान्त जैन, डॉ. सरल अवस्थी एवं कविवर श्री सूर्य कुमार पाण्डेय मंच पर (बांये से दांये)

परिवार के उद्गार

'मेरे पापा' मेरी नजर से

— डॉ. अलका अग्रवाल

कभी सोचा भी न था कि एक दिन ऐसा भी आएगा जब हमें पापा के बगैर जीना पड़ेगा। हर बच्चे के लिए उसके पापा उसकी पूरी दुनियाँ होते हैं, मेरे पापा भी मेरी दुनियाँ थे। बचपन से लेकर आज तक कभी अकेले होने का अहसास ही नहीं हुआ, हमेशा पापा साथ थे। आज उनके चले जाने के बाद हर रोज अकेले होने का अहसास होता है। पापा के रहते कभी अपने को असुरक्षित नहीं महसूस किया। जीवन के उतार चढ़ाव में पापा का सम्बल सदा रहा। आज मैं जो भी हूँ, सब पापा का ही श्रेय और आशीर्वाद है।

मैंने घर में बचपन से सुना कि मेरे पैदा होने के बाद से घर में बढ़ोत्तरी हुई। पापा का मुझ पर अतिरिक्त स्नेह रहा। मेरे बिना कहे ही पापा मेरी इच्छा पूरी कर देते थे। कभी किसी चीज की जरूरत ही महसूस नहीं हुई। मुझे नहीं याद कि पापा ने मारना तो दूर कभी मुझे डाँटा भी हो। पढ़ाई–लिखाई में मैं ठीक–ठाक थी। अच्छे नम्बरों से पास हो जाती थी। बाबाजी, पापा–मम्मी सभी प्रसन्न रहते थे। कभी किसी को डाँटने या टोकने की जरूरत ही नहीं पड़ी। पापा के हमारे ऊपर अत्यधिक विश्वास ने हमें कभी कुछ गलत की तरफ जाने ही नहीं दिया।

पापा परिवार के स्तम्भ थे। मम्मी भी पापा के बगैर कुछ नहीं कर सकती थीं। लेकिन जब तक मम्मी थीं, पापा को घर–परिवार की व्यवस्था की कोई फिक्र नहीं थी। हम भाई–बहनों के विवाह की व्यवस्था हो या फिर घर में पोता–पोती, नाती–नातिन के आने की तैयारी, सब मम्मी संभाल लेती थीं। पापा–मम्मी की ट्यूनिंग जबरदस्त थी। मैंने इस बात को बचपन से महसूस किया। किसी चीज़ के बारे में मम्मी जो सोचती थीं, पापा उनके कहने से पूर्व ही उसे अंजाम दे देते थे। अनेकों बार मैंने ऐसा देखा और मम्मी को पापा के इस गुण की तारीफ करते हुए भी सुना। मम्मी की हमेशा से यही इच्छा थी कि वे पापा के सामने इस दुनियाँ से चली जाएं और हुआ भी ऐसा ही। पापा ने भी उनके प्रयाण को उत्सव की तरह मनाया, खूब दान–पुण्य किया, दिल खोलकर बाँटा।

पापा का सात्विक जीवन था। उनका खान–पान संयमित था। सेब उनका प्रिय फल था। सुबह के नाश्ते में एक सेब खाने के उनके नियम में

कभी गैप नहीं हुआ। मम्मी ने सदा पापा के खान–पान का बहुत ध्यान रखा। नित्य एक घण्टे प्राणायाम तथा व्यायाम करते थे पापा। यही क़ारण था कि 88 वर्ष की आयु में भी उन्हें कोई बीमारी नहीं थी। रिटायरमेंट के बाद 30 वर्षों का लम्बा समय उन्होंने पूर्ण व्यस्त रहकर व्यतीत किया। उनका नित्य का नियम था कि शाम को 7 से 8–9 बजे तक फोन पर सबसे बात करते थे। घर के प्रत्येक बच्चे के पास उनका फोन जाता था यही वजह है कि हर बच्चे को आज उनकी कमी महसूस हो रही है।

पापा को लिखने–पढ़ने का शौक था। बचपन से मैंने उन्हें कभी खाली बैठे हुए नहीं देखा। मम्मी की बीमारी के दौरान उनके लेखन में शिथिलता आ गई थी परन्तु 8 जनवरी 2018 को मम्मी के दिवंगत हो जोने के बाद पापा ने फिर से अपने लेखन की गाड़ी को पटरी पर लाने की कोशिश की थी। उनकी सूची में बहुत सारे कार्य थे जो उन्हें पूर्ण करने थे। उन्हें स्वयं नहीं पता था कि उन्हें इतनी जल्दी संसार से विदा होना पड़ेगा, किसी को नहीं पता होता है। बीमारी के दौरान मेरी जब भी उनसे बात होती, यही कहते– "बेटा चिंता मत करो, मैं ठीक हो जाऊँगा। ठीक तो होना ही है मुझे।" सितम्बर के अंतिम सप्ताह में जब मैं उनसे मिली थी तब बोले थे "अब नहीं लगता कि मैं कुछ कर पाऊँगा।" उनके अंतिम दिनों का कष्ट याद करके अक्सर मन विचलित हो जाता है। ऐसा क्यों होता है कि एक स्थिति में आकर हम बिल्कुल असहाय हो जाते हैं! चाहकर भी कुछ नहीं कर पाते। काश! मैं उनके उस कष्ट, उस वेदना को कुछ कम कर पाती।

पापा आप बहुत याद आते हैं। मम्मी के जाने के बाद उनकी कमी इतनी महसूस नहीं हुई थी क्योंकि पापा ने कभी उनकी कमी महसूस ही नहीं होने दी। लेकिन आज पापा के चले जाने के बाद तो हम अनाथ हो गए।

ये शाश्वत सत्य है कि जो इस संसार में आया है। उसे अपने कर्मों का लेखा–जोखा पूरा करके एक दिन इस संसार से विदा होना है। पापा एक सफल एवं सुखी जीवन जी कर,गए। वे अपने पीछे ज्ञान, संस्कार, प्रेम, मैत्री, स्नेह तथा मानवता की जो विरासत हम लोगों के लिये छोड़कर गए हैं हम उन्हें सहेज कर रख लें, यही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

❑

मेरे मौसा जी

— **श्रीमती सरिता अग्रवाल**

आज जब उनके विषय में कुछ लिखने बैठी, तो समझ में ही नहीं आ रहा है कि कहाँ से शुरू करूं और क्या–क्या लिखूँ। इतनी यादें इतने पल जो उनके सानिध्य में गुजारे थे सब जीवंत हो उठे हैं, शब्दों की सीमा के परे हैं उनको प्रगट कर पाना।

मेरे मौसा जी, जिनका स्नेह, सान्निध्य मुझे ननिहाल (आरा) में रहने के कारण बाल्यावस्था से ही बहुत मिला। स्मृति पटल पर उनका आरा आना और ढेरों प्रेरणास्पद पाठ्य सामग्री मेरे लिए लाना सभी दृश्य जीवंत हो उठे हैं। मुझे जो कुछ भी लिखने पढ़ने का शौक है उसका पूरा श्रेय मेरे मौसा जी को ही जाता है।

विद्वता, स्नेह एवम् दायित्वपूर्णता का सम्पूर्ण स्वरूप थे हमारे मौसा जी। हर गर्मी की छुट्टियों में उनके एवम् पू. मौसी माँ के साथ बिताए हुए दिन मेरी स्मृति की अमूल्य धरोहर हैं। मैं और मेरे छोटे भाई बहन सभी उस स्नेह गंगा में स्नान किया करते थे। अप्रतिम व्यक्तित्व के धनी मेरे आदरणीय मौसा जी को शत् शत् नमन।

हे पितृ तुल्य हे महामना!
करती हूँ सादर अभिनन्दन, सादर अभिनन्दन।
पाकर तुम्हें अपना स्वजन, गर्वित था
सदैव तन मन, सदैव तन मन
तुम प्रखर सूर्य से, जिससे आलोकित था
घर का उपवन, घर का उपवन
आंखे करें अश्रु वर्षण, कैसे अर्पित करूं
श्रद्धा सुमन, श्रद्धा सुमन
हे पितृ तुल्य, हे महामना!
सादर अभिनन्दन, सादर अभिनन्दन।

❑

यादों के झरोखें से 'ताऊ जी'

– श्रीमती इन्दु कान्त जैन

जीवन का सफर भी ट्रेन के समान ही तो है। जहाँ कुछ–कुछ समय के अन्तराल पर पुराने मुसाफिर उतरते जाते हैं और कुछ नये चेहरे जुड़ते चले जाते हैं। आज फिर एक व्यक्तित्व तस्वीरों में सिमट गया। एक और अध्याय समाप्त हो गया। किन्तु कुछ अध्याय कभी समाप्त नहीं होते। उनके होने का अहसास हम ताउम्र अपने आस–पास ही महसूस करते हैं।

ताऊ जी के दुखद निधन का समाचार मिला। मन बहुत विचलित हो गया। ऐसा लगा मानो किसी ने हमारी बहुत ही बहुमूल्य वस्तु को हमसे छीन लिया। 2009 में पापा की बीमारी के दौरान, जब मैं शून्य में विलय होते पापा के अस्तित्व को देख, अन्जाने भय से भर गई थी। तभी, मैंने अपने कन्धे पर एक हाथ महसूस किया मेरे पीछे ताऊ जी खड़े थे। बोले– "बेटा चिन्ता मत करो। मैं हूँ न।" उसके पश्चात् इन ग्यारह वर्षों में उन्होंने मुझे कभी भी पिता की कमी का अहसास नहीं होने दिया। वह हर महीने एक बार फोन अवश्य करते थे। परिवार के सभी सदस्यों का हाल–चाल पूछते थे। किसी की भी बर्थडे अथवा मैरिज एनिवर्सरी पर वह अपना आशीर्वाद अवश्य देते थे।

पापा की मृत्यु के समय मेरी पहली पुस्तक 'दर्द का रिश्ता' लिखकर तैयार थी किन्तु छपी नहीं थी। ऐसे में ताऊ जी और नलिन भइया के सहयोग से ही पुस्तक छपने का कार्य पूर्ण हुआ। मेरी दोनों पुस्तकों (दूसरी–'आत्म–कल्याण के दस चरण') का 'विमोचन' उन्होंने लखनऊ में बड़ी ही धूम–धाम से किया। बहुत खुश होते थे, जब हम कुछ नया लिखते थे। हमेशा आगे बढ़ने के लिये प्रोत्साहित करते थे।

यह हमारे लिये अत्यन्त गर्व का विषय है कि हमने जिस परिवार में जन्म लिया वहाँ "इतिहास–मनीषी, विद्या–वारिधि डॉ. ज्योति प्रसाद जैन", "श्री अजित प्रसाद जैन", "श्री रमा कान्त जी सम्पादक–सरताज" एवं "डॉ. शशि कान्त जी" जैसी विलक्षण प्रतिभायें थीं।

ताऊ जी अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि के थे। अतः हम सभी बच्चों को भी अच्छी शिक्षा मिले इसके लिए वह हमेशा प्रयासरत रहते थे। उसी का नतीजा था कि हमारे घर में उन्होंने 'कान्त बाल केन्द्र' के नाम से एक स्कूल खोला। जिसमें हम सभी बच्चों की प्रारम्भिक शिक्षा हुई। उन्हें संगीत से भी लगाव

था। अतः समय–समय पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आयोजन होते थे। ताऊ जी की लिखी एक 'गजल' मुझे याद आ रही है –

मौजों की रवानी में,
एक दर्द का साया है।
हमारी परेशानी पर,
उनको सकूँ यूँ आया है।

लिखने–पढ़ने का शौक उन्हें अपने पिता से विरासत में मिला था। धार्मिक आडम्बर से रहित किन्तु सत्य, अहिंसा, संयम, समता, छल–कपट से दूर, सादा जीवन उच्च विचारों से परिपूर्ण था उनका व्यक्तित्व।

कहते हैं– तोड़ने में मेहनत नहीं लगती है किन्तु किसी भी चीज को जोड़े रखने के लिये बहुत प्रयत्न करना पड़ता है। उन्होंने अपने सभी भाई–बहनों के परिवारों को हमेशा जोड़े रखा। उनके जाने से ऐसा लगा मानो "वह रक्षा–सूत्र टूट गया जिसने अब तक परिवार के सभी सदस्यों रूपी मोतियों को एक माला में पिरोकर रखा था।"

जब भी लखनऊ जाती थी उन्हें हमेशा इन्तजार करते पाती थी। लौटने पर उनका फोन अवश्य आता था– "बेटा ठीक से पहुँच गई।" "बेटा चिन्ता मत करो। मैं हूँ न।" यह आवाज अब कभी भी सुनाई न देगी। भावनायें शब्दों की मोहताज नहीं होती। कितना भी लिखो शब्द कम पड़ ही जाते हैं।

"कल का 'है' आज 'था' हो गया,
'वर्तमान' अब 'भूत' हो गया।
नाम था पहचान जिसकी,
वह सदेही निराकार हो गया।
मुखरित अब मूक हो गया,
जल बुलबुला सा विलुप्त हो गया।
हिण्डोला सा डोलता हुआ,
अस्तित्व अदृश्य हो गया।
'वर्तमान' अब 'भूत' हो गया।"

❑

यादों में रह गए पापा

– श्रीमती शेफाली मित्तल

'पापा' आज हमारे बीच नही हैं, ये मानने को दिल नही करता। मेरी आखिरी मुलाकात उनसे फरवरी 2020 में हुई थी। उसके बाद 'कोरोना' महामारी के चलते मैं लखनऊ नहीं जा सकी। इसे मैं अपना दुर्भाग्य ही कहूँगी कि उनके महाप्रयाण के समय ऐसी परिस्थितियाँ बनीं कि मैं उनके अंतिम दर्शन भी न कर सकी। ये अवसाद मुझे अक्सर कष्ट देता है। उनकी बीमारी के दौरान हमारी बात वीडियो कॉल पर हो जाती थी। वो बहुत कम बात करते थे– "जीते रहो, Ok, All the Best" बस इतना ही। उनको अच्छा नहीं लगता था कि कोई उन्हें लेटा हुआ देखे। वो हमेशा 'Fit' दिखाना चाहते थे।

मैं अपने सभी भाई–बहनों में सबसे छोटी हूँ। यही कारण है कि मुझे सभी का लाड़–प्यार मिला। बचपन में एक बार मुझे 'टाइफाइड' हुआ था। बुखार काफी तेज था, तब पापा ही मेरे पास बैठे रहते थे। डॉक्टर के यहाँ भी वो स्वयं ही ले जाते थे। मेरे विवाह के बाद मेरे बच्चों के Summer Holidays से पूर्व ही पापा का फोन आने लगता था –"बेटा, क्या प्रोग्राम है लखनऊ आने का?" इतना ही नहीं, जब मैं Train में सवार होती तो वहाँ पहुँचने तक चार बार फोन आता– "कहाँ पहुँचे?" "Train Right Time है?" ये वो यादे हैं जो हमेशा याद आएंगी।

पापा को शिक्षा से बहुत प्रेम था। वो एक बुद्धिजीवी व्यक्ति थे। शिक्षा दान के उद्देश्य से ही उन्होंने घर में एक प्राइमरी स्कूल भी खोला था जिसका संचालन उनकी देख–रेख में मम्मी किया करती थीं। पढ़ना–लिखना उनकी Hobby थी। विद्वत्ता की सार्वजनिक पहचान हो, इसी धारणा से पापा प्रतिवर्ष विद्वानों का "अभिनन्दन समारोह" आयोजित किया करते थे। हम बच्चों से भी उनकी एक ही अपेक्षा थी कि हम सब होनहार उठें। हमारे प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होने पर उन्हें बेहद खुशी होती थी।

पापा में कृतज्ञता, मानवता एवं उदारता के गुण सर्वोपरि थे। आदरणीय बाबाजी (डॉ. ज्योति प्रसाद जैन) के देहान्त के बाद उनकी पुण्यतिथि एवं जन्म जयन्ती का समारोह के रूप में आयोजन कर, पापा ने सदैव ये एहसास जीवित रखा कि "बाबाजी आज भी हमारे बीच हैं।"

पापा का व्यक्तित्व अत्यंत सरल था। नित्य सुबह व्यायाम से उनकी दिनचर्या शुरू होती थी । देखने मे पतले–दुबले थे परन्तु उन्हें कोई बीमारी नहीं थी। उनका खान–पान अत्यंत साधारण था। नाश्ते से पहले 'नींबू–पानी' एवं खाने के बाद 'अश्वगंधारिष्ट' – ये दोनों चीजें वो नियमित रूप से लेते थे। यही कारण है कि वृद्धावस्था में भी उनकी याद्दाश्त बिल्कुल ठीक थी।

मम्मी–पापा का 64 वर्षों का साथ रहा था। प्रत्येक परिस्थिति में मैंने पापा मम्मी को एक–दूसरे के साथ खड़ा देखा। दोनों की विचारधारा बिल्कुल

एक दिशा में चलती थी। किसी की मदद करना, उन्हें बहुत अच्छा लगता था। मुझे याद आ रहा है—जब मम्मी लम्बे समय से बीमार चल रहीं थीं तब उनके कष्ट को देखते हुए पापा ने गरीबों में 'कम्बल' वितरित करने का मन बनाया था और जैसे, मानो, ये मम्मी के मन की इच्छा रही हो, अगले ही दिन वो सारे कष्टों से मुक्त हो गईं। उनकी मैत्री, सामंजस्य एवं सहन—शीलता मुझे बहुत प्रभावित किया करती थी। पापा बहुत मजबूत व्यक्तित्व के स्वामी थे। किसी भी परिस्थिति में विचलित न होना— ये उन्होंने ही हमें सिखाया था।

पापा अपने खानदान में सबसे बड़े थे। फोन के माध्यम से वो सबसे नियमित रूप से जुड़े हुए थे। उनका बड़प्पन एवं गांभीर्य, उन्हें सबके दिलों में जीवित रखेगा।

"शशि मंजरी वाटिका" में उपजे सभी फूल उनके दिए हुए संस्कारों से सुवासित हों, यही मेरी कामना है। पापा— ऐसा कोई दिन नहीं होता जब आपका ख्याल न आता हो। यादों में हर पल जीने वाले 'रक्षास्तम्भ' पापा को मैं सादर श्रद्धा सुमन अर्पित करती हूँ। ❑

हमारे ताऊ जी

— श्रीमती सौम्या जैन

गरिमामय व्यक्तित्व के स्वामी आदरणीय ताऊ जी अब हमारे मध्य नहीं हैं। श्रद्धेय डॉ. शशि कान्त जैन मेरे पति श्री सन्दीप कान्त जैन के ताऊ जी अर्थात् मेरे ता ससुर जी।

उनसे परिचय विवाहोपरांत ज्योति निकुंज में घर में सबसे वरिष्ठतम व्यक्ति के हुआ, बड़े होने के साथ—साथ उनका बड़प्पन व स्नेहमयी वात्सल्य ह्‌म सभी को सदैव प्राप्त होता रहा।

वह अनुशासन प्रिय एवं जागरुक व्यक्तित्व के धनी थे, समय—समय पर सभी का हाल—चाल पूछते रहने के स्वभाव के चलते उनसे हमेशा अपनापन व सुरक्षा की भवना का अहसास सदैव बना रहता था।

गोष्ठियों के दौरान ताऊजी अक्सर अपने पूर्वजों के संस्मरण सुनाकर हम सबको उनसे परिचित कराया करते थे। सभी विषयों पर उनका समान रूप से अधिकार होने के चलते अक्सर ताऊ जी से समस्याओं के समाधान मिल जाया करते थे। उनका प्रत्येक विषय पर गूढ़ पकड़ देखकर मन कभी—कभी विस्मय व गर्व से भर जाया करता था।

ताऊ जी कुशल सम्पादक व निर्भीक पत्रकार थे, अपनी लेखनी द्वारा समाज में फैले अन्धविश्वास व कुरीतियों पर करारी चोट किया करते थे।

मुझे गर्व है कि उनके सम्पर्क में रहकर बहुत कुछ सीखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

उनकी पुनीत स्मृति को मेरा कोटिशः नमन! ❑

मेरी स्मृतियाँ

– श्री अंखिलेश मित्तल

आपने पिता–ससुर के रूप में मुझे कभी ऐसा नहीं लगा कि वे अगर ऐसे होते तो शायद और अच्छा होता। उनकी सोच और Decision से कभी ऐसा नही लगा कि इससे अच्छा Decision हो सकता है। बहुत ही सामान्य Requirements थीं उनकी। Unconditional love & affection था उनको अपने सभी बच्चों से। अपने पिता की मृत्यु के बाद एक बार लगा कि शायद पिता की तरह कौन है जो हमारा शुभ चिन्तक होगा और कभी जरूरत पड़ने पर सहायता कर सकेगा। लेकिन उनके होते हुए कभी कोई कमी नहीं लगी। मुझे याद है उनकी वो छवि जब वो पहली बार मुझसे मिलने Factory में आये थे, शादी से पहले और साथ ही उनका अन्तिम वार्तालाप फोन पर। अपनी तबियत खराब होने के कराण हम लोग उनसे मिलने नही जा पा रहे थे। उनकी अपनी तबियत खराब होने के बाद भी उन्होंने कहा कि "मैं तो ठीक हो जाऊँगा तुम अपना ध्यान रखो और घबराना नहीं।"

उनको Celebration करने का शौक था। कोई न कोई Occassion ढूँढ कर वे घर में ही Gathering करते रहते थे।

बहुत लोगों के साथ उन्होंने सम्बन्ध बना कर रखे थे। फोन करना उनकी आदत थी। हर किसी को फोन करते थे। मुझे भी वो हर Sunday को फोन करते थे। कई बार ऐसा सोचा कि उनके फोन से पहले मैं करता हूँ लेकिन हमेशा उनका फोन ही आ जाता था। कोई Occassion ऐसा नहीं था कि उनका फोन नहीं आए। आकांक्षा की शादी में उनको बुलाने का बहुत मन था लेकिन कुछ महीनों से उनका स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण ऐसा नहीं हो सका।

हमारे जीवन में उनकी कमी हमेशा रहेगी।

Memories of Babaji

– Sri Shishir Jain

I have faint memories from childhood of babaji bringing toys and candies for us. Though I was fond of babaji, I got a chance to interact with him and know him closely during my engineering days in Lucknow from 2001-05.

These 4 years was the time when I developed affection and admiration for babaji for his caring, loving and calm nature and for his command over varied subjects like history, geography, politics, religion, world affairs and what not. All in all, babaji was a person whom I could rely upon for guidance on different aspects of life. Babaji used to call me regularly to know about my well being where we would discuss variety of topics from weather, politics society to health and family.

As my job involves travelling to different places outside India, he would encourage me to know about the local culture and history. I remember, when I was travelling to Azerbaijan frequently during 2012-13, he encouraged me to buy a local dress as a souvenir. I imbibed from him a sense of interest for history and culture which is something different from my core field.

On the personal level, I learnt maturity in thoughts and actions from babaji. As the head of the family, he could take all of us along and bind us together with love and affection. I will always miss babaji and think about him with a smile.

मेरे बाबा जी

– श्री केशव जैन

'बाबा' जैसा अतिसुन्दर शब्द और कीमती सम्बन्ध मेरे जीवन में विवाह द्वारा प्राप्त हुआ। मैं ज्यादा समय अपने दादाजी के साथ नहीं रह पाया था। मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि मुझे दादाजी वापस मिल जायेंगे। लेकिन शायद मैं इतना बदकिस्मत नहीं था मुझे फिर से बाबा के रूप में वह रिश्ता मिला। मेरा पूरा परिवार ही उनके जीवन में खुद को पाकर बड़ा खुश हुआ था।

मेरी जब भी उनसे बात हुई मुझे कभी लगा ही नहीं कि मैं उनसे कुछ दिनों पहले ही मिला हूँ। बाबा मेरे लिए हमेशा बहुत बड़ी प्रेरणा रहेंगे। मैंने बहुत कम समय में उनसे बहुत कुछ सीखा, विशेषकर समाचार देखना।

मेरी जब भी उनसे बात होती थी वे हमेशा सामयिक विषयों के बारे में बात करते थे जो मुझे पता नहीं होता था और मुझे उनसे बात करने में डर भी लगने लगा था। कभी उनसे बात करने के लिए मैंने समाचार देखना शुरु किया जो आज मेरी आदत बन गई।

उनसे बात करने पर कभी नहीं लगता था कि मैं एक सीनियर सिटीजन से बात कर रहा हूँ। वह हमेशा युवाओं की तरह बात करते थे और नई शिक्षा देते थे।

आधार हो आप मेरे लिए, आपके आशीर्वाद से बढ़ता रहूंगा।
ज्ञान की जो राह दिखाई उसको बनायें रखने की कोशिश करूंगा।।
यूं तो नहीं बन सकता मैं आपकी तरह।
आपके कुछ अंश ही अपने जीवन में ला पाऊं,
इतनी कोशिश जरूर करुंगा ।।
हमेशा आपका फ़ोन आना, अब बहुत याद आयेगा।
अब हर लमहा आपकी यादों में सिमट जायेगा।।
आपके जाने से अब यह अफसाना भी चला गया।
बाबाजी कहने का हक मेरे जीवन से फिर चला गया।

मेरे नाना जी

– श्रीमती अनुभूति अग्रवाल

30 अक्टूबर 2020, शरद पूर्णिमा के दिन लगभग 3.30 बजे एक असहनीय वाक्य ने मन बहुत दुखी कर दिया, "बेटा, नानाजी चले गये"। एक पल को तो विश्वास ही नहीं हुआ। उनके साथ की सारी स्मृतियां आँखों के सामने नाचने लगीं। खुद को संभालना मुश्किल हो रहा था। "अरे, ऐसा कैसे हो सकता है। दो दिन पहले तो उनसे बात हुई थी। ठीक लग रहे थे वो। आशीर्वाद भी दिया था– जीते रहो बेटा!", बस यही बातें मन में घूम रही थीं। उस दिन पहली बार एहसास हुआ सिर से बुजुर्गों का साया उठना क्या होता है।

हमारे नानाजी डॉ. शशि कान्त जैन एक "सादा जीवन उच्च विचार" धारणा वाले व्यक्ति थे। पूरे परिवार को एक सूत्र में बाँधे हुये थे वे। न किसी से नाराज़गी, न कोई अकड़, बस सारे रिश्ते निस्स्वार्थ भाव से स्नेहपूर्वक सींचते जा रहे थे। शायद ही कोई हफ्ता ऐसा होगा जब उनका फोन न आता हो। कोरोना काल में तो हर दूसरे दिन वो हाल चाल लेने के लिये फोन कर दिया करते थे और सतर्क रहने की सख्त हिदायत देते थे। पर नियति का खेल देखो, वो खुद इस बीमारी की चपेट में आ गये। शायद पूरे परिवार की बला अपने ऊपर ले ली थी उन्होंने। यही तो होता है परिवार का मुखिया।

मैंने काफी समय उनके साथ बिताया है। मेरा मन ही सबसे ज़्यादा नानी के घर में लगता था। नानाजी के साथ रहते हुये मुझे ये समझ आया कि वे एक प्रखर आलोचक थे और किसी भी बात पर अपने विचार रखने से पीछे नहीं हटते थे, फिर चाहे वो पूरी दुनिया से अलग ही क्यों न हों। और उनकी यही बात मुझे सबसे अच्छी लगती थी। एक परिष्कृत विचारों वाले व्यक्ति थे वो।

आज के तौर तरीके उन्हें ज़्यादा समझ नही आते थे और वे इस बात को स्वीकार भी करते थे, फिर भी उन्होंनें समय के साथ खुद को बदलने की हर सम्भव कोशिश की, जो इस उम्र में काफी मुश्किल होता है।

बचपन में मुझे एक डिबेट कॉम्पटीशन में हिस्सा लेना था। जिसका टॉपिक था "Terrorism"। वो पहली बार था जब मेरा उनके लेखन से परिचय हुआ। मैं तब पाँचवी क्लास में पढ़ती थी, ज्यादा समझ नहीं थी मुझे। नानाजी ने पूरी डिबेट मुझे लिखवाई जिसकी मेरे स्कूल में काफी प्रशंसा भी हुई।

मुझे भी लिखने में काफी दिलचस्पी है। ये गुण शायद उन्हीं से मुझे प्राप्त हुआ है। मेरे लेख पढ़कर वे काफी खुश भी होते थे। और मैं भी अपने आर्टिकल्स में उन्हीं की तरह जो सही लगता है वो लिखती हूँ चाहे वो सबकी सोच से अलग ही क्यों न हो।

नानाजी एक बात हमेशा कहते थे कि इंसान को हमेशा बिज़ी रहना चाहिये। तभी मैंने उन्हें कभी खाली नहीं देखा। उन्होंने रिटायरमेंट के बाद खुद को लिखने पढ़ने में व्यस्त रखा। ज्ञान का भंडार थे वो। दुनिया का कोई ऐसा टॉपिक नहीं था जिस पर वो डिस्कशन न कर सकते हों। धर्म हो, इतिहास हो या फिर राजनीति हो, उनके पास हर सवाल का जवाब था। बहुत भाग्यशाली हैं वे लोग जिन्हें उनके आसपास रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सकारात्मक ऊर्जा से परिपूर्ण थे नानाजी। मैंने उनके जीवनकाल में उन्हें न कभी थकते हुये देखा, न ही बीमार देखा, सिर्फ चलते हुये ही देखा। मेरे सामने तो शायद वे पहली और आखिरी बार ही बीमार हुये थे।

नानाजी की उपलब्धियों के बारे में तो हम लिखने योग्य ही नही हैं। अपने जीवनकाल में उन्होंने खूब यश कमाया। भरा पूरा परिवार बनाया। इसे कहते हैं, "A Life Well Lived"। नानाजी के आदर्शों पर चल कर ही हम उन्हें पूर्ण श्रद्धांजलि दे पायेंगे। वे हमारी यादों में हमेशा रहेंगे। इसी के साथ मैं अपने शब्दों को विराम देती हूँ।

❑

जीवंत नाना जी

– श्रीमती आंकांक्षा मित्तल

" Helloooo....जीते रहो बेटा!" नाना जी के ये शब्द आज भी मन में गूँजते रहते हैं। लगभग हर 15 दिन में उनका फोन आया करता था। मैं हमेशा सोचती थी इस Weekend नानाजी को Call करूँगी लेकिन उससे पहले वो खुद ही याद कर लिया करते थे। बात भले ही कुछ खास न हो करने को, लेकिन फिर भी जब यह एहसास हुआ कि अब कोई नहीं है ऐसे Call करने को, तो काफी अकेला महसूस हुआ।

उनका हर Occassion पर, चाहे त्योहार हो या Birthday, आशीर्वाद स्वरूप फोन अवश्य आता था उनको सबके Birthday पता होते थे और हमेशा याद भी रहते थे।

मेरी बहुत इच्छा थी कि नानाजी मेरी शादी में सम्मिलित हों। चूँकि यह न हो पाया तो मैंने शादी से पहले ही प्लान कर लिया था कि जो भी सबसे पहला Long Weekend पड़ेगा, उसमें लखनऊ जाकर नानाजी का आशीर्वाद लेना है। अप्रैल की तारीख भी तय कर ली थी पर महामारी के चलते वो प्रोग्राम टलता ही रहा और उनके जाने से पहले तक भी नहीं बन पाया।

कभी–कभी यह सोच के बहुत अचंभा–सा होता है कि नानाजी अब नहीं है क्योंकि वो तो हमेशा Fit & Healthy ही रहते थे। आखरी समय में भी उनकी यही धारणा थी कि वे एकदम ठीक हैं। बचपन में हम हर साल गर्मियों की छुट्टियों में लखनऊ जाया करते थे। और उस समय का बहुत Excitement से पूरे साल इंतजार किया करते थे। सब लोग एक साथ इकट्ठा होते बहुत मजा करते थे। नानाजी रोज़ सुबह–सुबह Exercise करते थे और हम बच्चा–पार्टी को भी अपने साथ करवाते थे। वो दिन साल के सबसे अच्छे दिनों में से हुआ करते थे। नानी का हमारे आते ही "आओ तुम्हे प्यार करें!" और नानाजी के ऑफिस जाकर उनके ज्ञान के खज़ाने की बातें करना, हमेशा याद आएगा।

नाना जी की बुलंद एवं स्नेहपूर्ण आवाज हमेशा के लिए मेरे मन में अंकित रहेगी।

❑

मेरे प्यारे नाना जी

– कु0 संचिता मित्तल

नाना जी हमेशा मुझसे पूछा करते थे कि कुछ नया लिखा बेटा? लिखा करो।

इसलिए आज उनके लिए कुछ लिखने की कोशिश – मेरे प्यारे नाना जी, कभी नहीं सोचा था कि आप भी जा सकते हैं। आप से बात करके मेरी सारी Achievements की खुशी दुगनी हो जाती थी।

मेरे हर Result पर फोन करना, एक Constant Cheer Leader थे आप मेरे लिए। कुछ अच्छा हो तो बधाई देना और कुछ बुरा हो तो आपका कहना "Tension नहीं लेना! समझे बेटा।"

जब कोई Medal मिला या Placement हुआ, हमेशा आपका ख्याल आया कि नाना जी को बताऊँगी। ना कोई App ना कोई Whatsapp, फिर भी हर Birthday पर सबसे पहला फोन आप ही का होता था। फोन पर आपकी आवाज "Hello! जीते रहो बेटा" हमेशा मेरे कान में गूंजेगी।

आपसे Summer Vacation में घंटों Politics की बाँते सुनना (जो मुझे कुछ कम ही समझ आती थीं) और आपके पास आपकी Study में बैठना। आपने हम सबको अपने Writer Genes दिए हैं, पर आपके लिए कुछ पिरो के लिखने की शक्ति लाना मुश्किल है। मैं बस इतना ही कहना चाहूँगी–

"We were blessed to have grandparents like you. You have touched many lives positively".

❑

अग्रज

(श्री रमा कान्त जैन द्वारा अग्रज डॉ. शशि कान्त के जन्म की अमृत जयंती पर दि. 12.02.2007 को प्रकट उद्‌गार)

पचहत्तर बसन्त जिये आपने,
जीवन आपका धन्य है।
सफलता–सोपान चढ़े जो,
वहां नहीं अन्य है।।

मेधा ज्योतित रही आपकी,
ज्ञान आपका अनन्त है।
तर्कणा–शक्ति विलक्षण आपकी,
अद्‌भुत लेखनी ज्वलन्त है।।

जो चाहा, कर दिखाया,
है दृढ़ इच्छाशक्ति आपमें।
अपनी मंजिल पाने की
लगन अनूठी है आपमें।।

उपलब्धियां अनेक हैं आपकी,
कहां तक गिनायें हम।
आपके गुण गाने की,
क्षमता कहां पायें हम।।

यश पाया प्रभूत आपने,
धन–सम्पदा अकूत है।
सपूत हैं निधि आपकी,
श्री–सुबुद्धि अनुस्यूत है।।

मानवता है गजब की,
अपनों का रखते ध्यान।
स्नेह–सलिल बहाते निरंतर,
बनाये रखते अपना मान।।

"मंजरी" महके आंगन में,
"शशि" शोभित गगन है।
हरियाली छायी चहुं ओर,
पल्लवित–पुष्पित चमन है।।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी,
आपको मेरा नमन् है।
स्वस्थ रहें, शतक बनायें,
कहता मेरा मन है।।

❑

मैंने तो मित्र खोया है

–श्री विभव जैन

जब बड़ों का साया हट जाता है
अंतहीन संसार में अंधेरा घना हो जाता है
अनंत चक्र में अपना सोपान चढ़ जाता है
पर शर्तहीन प्रेम कम हो जाता है

संसार का नियम यही है
शरीर नश्वर, आत्मा अनंत है
पर खून का प्रेम आत्मा से आता है
लगता ही नहीं कभी वह जाता है

ज्योति निकुंज की ज्योति आज कम है
शशि अब नभ में चमक रहा
सबको कुछ कमी लग रही
पर मैंने तो मित्र खोया है

शाश्वत सत्य यही है
मृत्यु सबको आती है
फिर भी अपनों के जाने पर
वेदना बहुत सताती है।

डॉ. शशि कान्त जैन की प्रिय

राष्ट्र–वन्दना

शुभ सुख चैन की बरखा बरसे,
भारत भाग है जागा
पंजाब, सिन्धु, गुजरात, मराठा,
द्राविड़, उत्कल, बंगा
चंचल सागर विन्ध्य हिमालय,
नीला जमुना गंगा
तेरे नित गुन गायें,
तुझसे जीवन पायें,
सब तन पाये आशा
सूरज बनकर जग पर चमके
भारत नाम सुभागा
जय हो, जय हो, जय हो,
जय जय, जय जय हो
भारत नाम सुभागा
सबके दिल में प्रीत बसाये
तेरी मीठी बानी
हर सूबे के रहने वाले
हर मजहब के प्राणी
सब भेद औ फ़र्क मिटा के
सब गोद में तेरी आके
गूंधे प्रेम की माला
सूरज बनकर जग पर चमके
भारत नाम सुभागा
जय हो, जय हो, जय हो,
जय जय, जय जय हो
भारत नाम सुभागा
सुबह सबेरे पंख पखेरू
तेरे ही गुण गायें
बास भरी भरपूर हवायें
जीवन में ऋतु लायें
सब मिल कर हिन्द पुकारें
जय आज़ाद हिन्द के नारे
प्यारा देश हमारा
सूरज बनकर जग पर चमके
भारत नाम सुभागा
जय हो, जय हो, जय हो,
जय जय, जय जय हो
भारत नाम सुभागा !!

(आजाद हिन्द सरकार और आई.एन.ए. के लिये अंगीकृत राष्ट्र–गान)

विद्वान–मनीषियों एवं गुरुओं का अभिनन्दन

अनन्त–ज्योति विद्यापीठ द्वारा विद्वान–मनीषियों के अभिनन्दन का एक विशिष्ट कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इसके अन्तर्गत इतिहास की शोध के साधक विद्वानों को **'इतिहास–मनीषी'** के सार्थक विशेषण से सम्मानित किया जाता था और पारम्परिक भारतीय शैली में प्रशस्ति–पट्ट, 'इतिहास–मंजूषा' (shield) एवं शाल तथा श्रीफल भेंट करके उनका अभिनन्दन किया जाता था। **'इतिहास–मंजूषा'** की अवधारणा एवं अभिकल्पना स्वयं डॉ. शशि कान्त की थी और यह मानव की स्थूल से सूक्ष्म की ओर, सांसारिक से दिव्य की ओर, और क्षणिक से चिरन्तन की ओर, यात्रा की परिकल्पना को चित्रित करती है। **'इतिहास–मनीषी'** को डॉ. जैन ने यों परिभाषित किया–

'इस चराचर जगत का इतिहास अनन्तकाल की धुरी पर असीम आकाश से आवृत्त है। जो कुछ भी यहाँ घटित होता है वह अगले ही क्षण इतिहास में समाहित हो जाता है और हम उसे "ऐसा हुआ" अथवा "अतीत की कथा" के रूप में जानते हैं।

इतिहास में और अतीत के सम्बन्ध में मात्र सूचना के संकलन में एक अन्तर यह है कि इतिहास–लेखन में इतिहासकार निरन्तर विवेक का प्रयोग करता है।

जो व्यक्ति इतिहास के प्रति विवेकपूर्ण दृष्टि रखता है, उसका शोधन सत्य की निकटता के लिए करता है, और उसका विवेचन मनुष्य को परम श्रेय शाश्वत शान्ति की ओर उन्मुख करने के लिए करता है, वह "इतिहास–मनीषी" है।'

इस अभिनन्दन के लिये अर्हता के निम्नलिखित मापदण्ड निर्धारित किये गये–

अभिनन्दनीय विद्वान भारतीय मनीषा के ऐसे विशिष्ट प्रतिनिधि हों जिनका समस्त जीवन इतिहास शोधन में लगा हो, जो वयोवृद्ध हों, जिनका कृतित्व विशद भी हो और सारभूत भी हो, जिनका व्यक्तित्व प्रेरणादायक हो, और जो वृद्ध–वय में भी शोध कार्य एवं साहित्य साधना में स्वान्तः सुखाय लगे हों। इस योजना की विशिष्टता यह निर्धारित की गयी कि यह विद्वानों का विद्या–प्रेमियों द्वारा सम्मान किये जाने का आयोजन हो जिसमें धन और सत्ता के व्यामोह से परे विशुद्ध स्नेह और गुणानुराग का आधार हो।

प्रथम अभिनन्दन समारोह : 12 फरवरी 1979 ई., को प्रथम अभिनन्दन समारोह राज्य संग्रहालय के तत्कालीन निदेशक डॉ. नीलकंठ पुरुषोत्तम जोशी की अध्यक्षता में विद्यापीठ के मुख्यालय ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ में आयोजित किया गया और उसमें भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के वयोवृद्ध अधिकारी–विद्वान डॉ. ज्योति प्रसाद जैन और डॉ. राम कुमार दीक्षित को सम्मानित किया गया।

द्वितीय अभिनन्दन समारोह : 12 फरवरी, 1982 ई., को डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की अध्यक्षता में बाल–रवीन्द्रालय, लखनऊ में आयोजित द्वितीय अभिनन्दन समारोह में प्रोफ़ेसर चरनदास चटर्जी, डॉ. बहादुर चन्द छाबड़ा और प्रोफ़ेसर कृष्ण दत्त बाजपेयी को सम्मानित किया गया।

तृतीय अभिनन्दन समारोह : तत्पश्चात विद्यापीठ की प्रवर समिति द्वारा यह निश्चय किया गया कि इतिहास के अतिरिक्त अन्य विषयों के विद्वानों एवं अन्य मनीषियों को भी विद्यापीठ द्वारा सम्मानित किया जाना चाहिए तथा उदीयमान प्रतिभाओं को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। यह भी निश्चय किया गया कि भारतीय इतिहास और संस्कृति के प्रति समर्पित विदेशी विद्वानों का भी सम्मान किया जाये। तदनुसार 10 मई, 1987 ई., को तृतीय अभिनन्दन समारोह में 5 विद्वानों–डॉ. श्याम लाल पाण्डेय, डॉ. ए. एल. बाशम, डॉ. जनार्दन दत्त शुक्ला, डॉ. बैज नाथ पुरी और डॉ. नीलकंठ पुरुशोत्तम जोशी को 'इतिहास–मनीषी' सम्मान के अतिरिक्त 35 मनीषियों– पं. रामरतन, श्री मानिक लाल घोष, श्री आनन्द स्वरूप मिश्रा, श्री राम गोपाल, श्री रामेश्वर प्रसाद दुबे, श्री वीर नन्दन जिन्दल, डॉ. भगीरथ मिश्र, श्री महेश्वर पाण्डेय, डॉ. हरबर्ट गुन्थर, डॉ. नन्द किशोर देवराज, श्री लक्ष्मी कान्त श्रीवास्तव, श्री अजित प्रसाद जैन, श्री ज्ञान चन्द जैन, श्री ज्ञानेन्द्र मोहन सिन्हा, डॉ. अमर पाल सिंह, डॉ. गिरिजा शंकर मिश्रा, डॉ. हर्ष नारायन, डॉ. सरयू प्रसाद अग्रवाल, श्री राम निहोर चतुर्वेदी, श्री कैलाश नाथ गोयल, डॉ. नासिर अली खान, डॉ. सुधांशु कुमार जैन, श्री विश्वम्भर नाथ, श्री नरेश चन्द्र जैन, श्री रमा कान्त जैन, श्री रतन चन्द गुप्ता, श्री काशीनाथ गोपाल गोरे, डॉ. रमेशचन्द्र शर्मा, डॉ. (श्रीमती) प्रभा गुप्ता, डॉ. (कु.) उषा माथुर, डॉ. विनय कुमार जैन, डॉ. (कु.) इन्दु राय, श्रीमती सुधा जिन्दल, डॉ. (कु.) सुधा जैन, और डॉ. (श्रीमती) बीना जैन का भी अपने क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धियों के लिए अभिनन्दन किया गया।

उपरोक्त मनीषियों में डॉ. बाशम और डॉ. गुन्थर विदेशी विद्वान हैं जिन्हें भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विषयक शोध के प्रति समर्पण हेतु सम्मानित किया गया।

परिचर्चाओं का आयोजन

अनन्त–ज्योति विद्यापीठ के तत्वावधान में इतिहास के क्षेत्र में शोध से संबंधित समस्याओं पर पाँच परिचर्चाओं का आयोजन क्रमशः 7 नवम्बर 1977, 7 नवम्बर 1978, 7 नवम्बर 1979, 6 फरवरी 1982 और 7 नवम्बर 1982 को किया गया।

प्रथम संगोष्ठी : चर्चा का विषय था–शोध एक अनवरत प्रक्रिया। चर्चा इस प्रस्तावना पर प्रारम्भ हुयी कि जिज्ञासु और शोधार्थी को प्रायः उचित मार्ग दर्शन और अपेक्षित साधनों का अभाव रहता है जिसके कारण यद्यपि शोध ग्रंथों का परिमाण बढ़ गया है और शोधशालाओं की संख्या काफी बढ़ गयी है, शोध का स्तर नहीं उठ पाया है। प्रायः शोधार्थी मौलिक उद्भावनाओं को नहीं प्रस्तुत करता–क्यों ऐसा है, यह एक ज्वलंत प्रश्न है और भारतीय बौद्धिक जगत इससे आन्दोलित है।

परिचर्चा में यह बात उभरी कि शोध का सम्बन्ध सेवायोजन से नहीं होना चाहिए; शोध के लिए जिस एकाग्रता एवं साधना की आवश्यकता है उस दृष्टि से शोध कार्य को अध्यापन कार्य से स्वतंत्र रखा जाना चाहिए। यह अनुभूत किया गया कि शोध के लिए एकाग्रता और चयन की दृष्टि आवश्यक है, तथा शोध कार्य टीम के रूप में अधिक साध्य है। शोध प्रक्रिया पर एक ग्रन्थ भी अपेक्षित है जिसके माध्यम से शोध छात्र जान सके कि उसे क्या करना चाहिए।

दूसरी संगोष्ठी : विषय था–इतिहास की विधा। परिचर्चा इस प्रस्तावना को लेकर हुयी कि इतिहास को लेकर कुछ भ्रम है। वह सूचना का संकलन मात्र नहीं है वरन् सामग्री के वस्तुपरक विश्लेषण और भावपरक विवेचन का अद्भुत सम्मिश्रण है। अतः इसका उपयोग जनता का मनोबल बढ़ाने और गिराने, दोनों ही रूपों में किया जा सकता है। भारत के इतिहास का जो स्वरूप ब्रिटिश शासन काल में मुखर हुआ और जिसका प्रतिपादन देशी–विदेशी शोध–शालाओं में किया गया, वह बहुधा भारतीय जनता का मनोबल गिराने, उसे विभ्रमित और विभाजित करने, तथा उसे ब्रिटिश सत्ता की श्रेष्ठता से

अभिभूत करने का था। खेद की बात है कि स्वतंत्र भारत में इतिहास की शोध उन प्रवृत्तियों से मुक्त नहीं हो पायी है जो परतंत्रता में इसके लिए अनिष्टकर थी। इतिहास के प्रति समीचीन दृष्टि क्या हो, इतिहास शोधन का मापदण्ड क्या हो, शोध के लिए विषय का चयन कैसे हो–ये प्रश्न आज बौद्धिक जगत को आन्दोलित किये हैं और जिज्ञासु और शोधार्थी दोनों ही इनका समाधान पाने को आतुर हैं।

चर्चा में यह बात उभरी कि इस प्रकार के इतिहास–लेखन से सतर्क रहना है जिसमें पूर्ण मिथ्या कथन या मुख्य तथ्यों का पूर्ण दमन तो नहीं होता परन्तु तथ्यों का परीक्षण विभिन्न मानदण्डों से किया जाता है और परिश्रमपूर्वक अर्ध–सत्यों का संकलन किया जाता है, कुछ तथ्यों को उभारा जाता है और कुछ को दबाया जाता है, कथानक को स्वतः स्पष्ट न होने देकर घटनाओं और तथ्यों को विशेष प्रकार से ऐतिहासिक संदर्भों में प्रस्तुत किया जाता है, और इस सबका उद्‌देश्य एक दूषित या भ्रामक कथानक प्रस्तुत करना होता है। हमें जनता के स्त्रोतों का भी उपयोग करना चाहिए और राजकीय अभिलेखों के कथ्यों की जनस्त्रोतों के आधार से परीक्षा करनी चाहिए। वर्तमान परिस्थितियों में इतिहास का कोई उपयोग नहीं होगा यदि वह मात्र शासक वर्ग के कार्यकलापों की ही गाथा हो।

तीसरी संगोष्ठी : विषय था–इतिहास की शोध के पथ में छलावे। परिचर्चा इस प्रस्तावना को लेकर प्रारम्भ हुई कि जिन साधनों पर हमें निर्भर करना पड़ता है उनमें से कितनों का आधार एकांगी, एक–पक्षीय, स्वप्रशंसामूलक, सयत्नप्रचार–मूलक और सत्य को ढकने वाला है, इसको कैसे जाँचा जाय। इतिहास के शोधार्थी का यह दायित्व है कि वह पक्षधरों द्वारा प्रस्तुत भ्रमजाल को काट डाले और उन छलावों को प्रकट करे जो स्वार्थ–लोलुपों ने समय–समय पर सत्ता के सहारे और धर्म, सम्प्रदाय, जाति, भाषा, प्रदेश आदि के बहाने बनाये हैं। जो मिथक (मिथ्या–कथ्य) निहित स्वार्थों ने प्रचारित कर दिये हैं उनको अनावृत्त करने के लिए कैसे साहस जुटाया जाय–यह बौद्धिक चिन्तकों के लिए एक ललकार है।

चर्चा में यह बात उभरी कि कथा साहित्य के आधार से जो मिथक प्रसार पा गये हैं उनकी विवेचना की जाय ताकि सत्य का लोप न हो जाय। यदि हम तथ्यों को काल्पनिक कथ्यों से अलग नहीं कर सकेंगे तो इतिहास

पुराण गाथा बनकर रह जायेगा, घटनायें आस्था, अन्ध–विश्वास और कल्पना से आवृत्त हो जायेंगी, और स्वयं इतिहास के तथ्य डूब जायेंगे।

चौथी संगोष्ठी : विषय था–भारत के इतिहास के स्त्रोतों का मूल्यांकन। परिचर्चा इस प्रस्तावना को लेकर प्रारम्भ हुई कि यह बात निर्विवाद है कि भारत का इतिहास प्रायः छः हंजार वर्ष से एक अनवरत क्रम में उपलब्ध है। इतना लम्बा इतिहास विश्व के किसी अन्य भूखण्ड का अभी नहीं है। इतिहास के साधन बहुल हैं। विगत दो सौ वर्षों में प्राचीन साहित्य का अध्ययन और विश्लेषण, पुरातात्विक उत्खननों से प्राप्त सामग्री, पुरालेख, सिक्के और मुद्रायें, भारत के बाहर भारत के सम्बंध में लिखा गया साहित्य और पुरालेख–यह सब इतनी सामग्री है जो हमारे देश का इतिहास प्रस्तुत करने में हमें सहायक हो सकती है। परन्तु इस सब विविध साधन–सम्पदा का हमारे शोधार्थी और इतिहास कार उचित मूल्यांकन नहीं कर रहे हैं। आवश्यक यह है कि इस संबंध में पक्षधरता का निषेध किया जाय और विवेकशीलता पर बल दिया जाये। परन्तु खेद की बात है कि जिन लोगों पर शोध निर्देशन का दायित्व है वे अपना दायित्व निष्ठापूर्वक नहीं निभा रहे हैं। प्राचीन इतिहास की शोध में कुछ मिथक साम्प्रदायिक पक्षधरता के कारण जुड़ गये और स्त्रोतों का मूल्यांकन इस दृष्टि से किया जाता रहा कि किसी सम्प्रदाय विशेष की श्रेष्ठता तथा प्राचीनता का उससे प्रतिपादन हो सके। मध्ययुगीन इतिहास के निरूपण में कुछ पक्ष शामिल हो गये। जिन साधनों को उस युग के इतिहास के लिए आधार बनाया गया वे प्रायः सरकारी संरक्षण में लिखे गये विवरण हैं जिनका मुख्य उद्देश्य सांप्रदायिक विद्वेष को प्रोत्साहित करना था। दरबारी साहित्य के अतिरिक्त जनता के साहित्य का बहुत ही कम उपयोग उस युग का इतिहास संजोने में किया गया है। आधुनिक युग में प्रायः ब्रिटिश शासन की श्रेष्ठता, ब्रिटिश बौद्धिकता का अनुसरण और भारतीयत्व के प्रति एक प्रकार की अवमानना का प्रस्तुतिकरण ही इतिहासकारों का प्रिय विषय रहा है। इस बात को निरूपित करने में हमारे इतिहासकार अपने को असमर्थ पाते हैं कि वे क्या परिस्थितियाँ थीं जिनके कारण मुट्ठीभर यूरोपियन, विशेषकर अंग्रेज, इस महादेश पर अपनी सत्ता स्थापित करने में समर्थ हुए। जो प्रतिपत्ति देश के स्वतंत्रता आंदोलन की दृष्टि से प्रस्तुत की गयी वह और भी भ्रामक रही। स्वतंत्रता के बाद के इतिहास के साथ तो बराबर उपांहासास्पद व्यवहार

किया जा रहा है। आज के युग में ऐसे मिथ्या–कथ्य सत्ताधारी लोगों द्वारा बच्चों की पाठ्य पुस्तकों में प्रसारित कर दिये गये हैं जो तथ्य तो हैं ही नहीं, बुद्धिग्राह्य भी नहीं है। यह सब ऐसी स्थिति उत्पन्न करता है जिसमें भारतीय इतिहास के सभी युगों के स्त्रोतों का सम्यक् मूल्यांकन कैसे किया जाय और ऐसा मूल्यांकन करते समय सत्तारूढ़ निहित स्वार्थों को किस प्रकार इतिहास को भ्रष्ट करने को रोका जाय–यह एक ज्वलन्त प्रश्न है जिस पर भारत के सभी बुद्धिजीवी चिन्तित एवं आन्दोलित हैं।

चर्चा में यह बात उभरी कि पक्षधरता से विरत हुआ जाये और विवेकशीलता पर बल दिया जाये, ऐतिहासिक पुनर्निर्माण में विभिन्न विधाओं का यथावश्क उपयोग किया जाये, राजनैतिक या साम्प्रदायिक दृष्टि से प्रतिपादित गलत कथ्यों को उजागर किया जाये, और स्त्रोतों के मूल्यांकन में तुलनात्मक समीक्षा की दृष्टि अपनायी जाये।

पंचम संगोष्ठी : विवेच्य विषय था– इतिहास और पुराण में अंतर्भेद। परिचर्चा इस प्रस्तावना को लेकर प्रारम्भ हुयी कि आज बौद्धिक चिन्तकों के सामने यह एक ज्वलन्त प्रश्न है कि किस प्रकार इतिहास और पुराण में भेद किया जाए, आगे आने वाली पीढ़ी द्वारा मूर्तिभंजक बनकर मिथ्या–कथ्यों का भण्डा–फोड़ किया जाये और समस्त समीचीन दृष्टि का विकास किया जाये।

चर्चा में यह बात उभरी कि यह क्षोभ की बात है कि हमारे देश में धर्म की इतनी अधिक चर्चा के बावजूद नैतिक स्तर में बहुत गिरावट परिलक्षित होती है। सत्य भावात्मक है और धर्म सत्य का आचरण में अनुपालन है। पुराण कथाओं और परम्परागत अनुश्रुतियों का विश्लेषण किया जाना अपेक्षित है ताकि कल्पना और वास्तविकता का निदान किया जा सके।

उपर्युक्त सभी संगोष्ठियों में चर्चा की प्रस्तावना डॉ. शशि कान्त जैन द्वारा प्रस्तुत की गयी और उन्होंने परिचर्चा का समाकलन भी किया। डॉ. ज्योति प्रसाद जैन, डॉ. नीलकंठ पुरुषोत्तम जोशी, डॉ. अमरपाल सिंह, डॉ. राम कुमार दीक्षित, डॉ. श्याम लाल पाण्डेय, डॉ. रमेश चन्द्र शर्मा, डॉ. नन्द किशोर देवराज, डॉ. (कु.) उषा माथुर, डॉ. (कु.) किरन मराल, श्रीमती प्रियम्वदा जिन्दल, तथा सर्वश्री नर्बदेश्वर चतुर्वेदी, अजित प्रसाद जैन, खुशाल चन्द गोरावाला, रमा कान्त जैन, काशीनाथ गोपाल गोरे, वीर नन्दन जिन्दल,

जगजोत सिंह, कैलाशनाथ पाण्डे, ए. सेन गुप्ता, बिद्युत बरन सरकार, शैलेन्द्र रस्तोगी और ज्ञान चन्द जैन ने परिचर्चा में भाग लिया।

तीर्थंकर महावीर के 2500वें निर्वाण महोत्सव पर चार दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन : तीर्थंकर महावीर के 2500वें निर्वाण महोत्सव के संदर्भ में डॉ. शशि कान्त को यू. पी. गवर्नमेंट कमेटी द्वारा रेडियो पर वार्तायें तथा नाटक आदि और एक संगोष्ठी के संयोजन का दायित्व दिया गया था। तीर्थंकर महावीर के 2500वें निर्वाण महोत्सव पर 'भारतीय संस्कृति में जैन विचारधारा' विषय पर 26–29 अक्टूबर, 1975 ई0 को बाल रवीन्द्रालय, लखनऊ में चार दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन एवं संचालन किया।

जून 1995 में संगोष्ठी का आयोजन : 'Redaction of Scriptures of Principal Religious Systems' पर जून 1995 में संगोष्ठी का आयोजन एवं संचालन किया।

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म–शती समारोह में विद्वान मनीषियों का अभिनन्दन एवं विचार–गोष्ठी : लखनऊ में दिनांक 21 जुलाई, 2012 ई. को इतिहास–मनीषी डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की जन्म–शती के उपलक्ष में जयशंकर प्रसाद सभागार में "ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट", "अनन्त–ज्योति विद्यापीठ और तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश", के संयुक्त तत्वावधान में डॉ. शशि कान्त जैन के मार्ग दर्शन में और पद्मश्री डॉ. ओम प्रकाश अग्रवाल जैन की अध्यक्षता में एक भव्य समारोह का आयोजन किया गया। इसमें वरेण्य विद्वान मनीषियों का अभिनन्दन, शोध पत्रिका 'शोधादर्श' के विशेषांक का लोकार्पण और "इतिहास की उपयोगिता" पर विचार–गोष्ठी के कार्यक्रम सम्पन्न हुये।

अभिनन्दनीय विद्वान थे–इतिहासविद् पद्मश्री डॉ. ओम प्रकाश अग्रवाल जैन, लखनऊ विश्वविद्यालय के प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष डॉ. किरन कुमार थपल्याल और डॉ. अमर सिंह, प्राचीन भारतीय इतिहास के प्रोफेसर डॉ. प्रशान्त श्रीवास्तव, लखनऊ वि.वि. के हिन्दी विभाग की पूर्व विभागाध्यक्ष डॉ. सरला शुक्ल, लखनऊ क्रिश्चियन कॉलेज के शिक्षा विभाग की पूर्व विभागाध्यक्ष डॉ. प्रेमकुमारी जोशी, केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ लखनऊ में पालि विभाग के अध्यक्ष डॉ. विजय कुमार जैन, गोरखपुर वि.वि. के प्राचीन भारतीय इतिहास विभाग के पूर्व विभागध्यक्ष डॉ. शैलनाथ चतुर्वेदी,

मराठी व संस्कृत साहित्य के अध्येता विद्वान पं. काशीनाथ गोपाल गोरे, भाषा विज्ञान के प्रो. डॉ. वृषभ प्रसाद जैन, साहित्य–भूषण डॉ. परमानन्द जड़िया, और वरिष्ठ साहित्यकार समीक्षक एवं कवि श्री रवीन्द्र कुमार "राजेश"। उपस्थित विद्वानों को तिलक, पुष्पहार, अंगवस्त्र और अभिनन्दन–पत्र से सम्मानित किया गया।

तदनन्तर "इतिहास की उपयोगिता" विषय पर विचार–गोष्ठी डॉ. विजय कुमार जैन की अध्यक्षता में सम्पन्न हुयी। संचालन श्री अंशु जैन 'अमर' ने किया। परिचर्चा इस प्रस्तावना को लेकर प्रारम्भ हुयी कि इतिहास लेखक की दृष्टि सर्वांगीण होना अपेक्षित है और उसका विवेचन कदाग्रह निरपेक्ष तथा तथ्य–सापेक्ष होना अभीष्ट है।

चर्चा में यह बात उभरी कि आज के सूचना तकनीकी के आधुनिक युग में हमें अपने पूर्वजों के विषय में सही जानकारी अपेक्षित है। इतिहासकारों को इतिहास के उपलब्ध समस्त स्त्रोतों को बिना किसी पूर्वाग्रह व भेदभाव के समाहित करते हुये कदाग्रह–निरपेक्ष, पंथ--निरपेक्ष एवं तथ्य–सापेक्ष एक सच्चे व समग्र इतिहास का निर्माण करना चाहिए, तभी इतिहास की उपादेयता अथवा उपयोगिता साबित हो सकेगी।

पितामह की 26वीं पुण्य तिथि पर उनके सुपौत्र की काव्य कृति का लोकार्पण

डॉ. ज्योति प्रसाद जैन की 26वीं पुण्य तिथि पर 11 जून, 2014 ई. को अनन्त–ज्योति विद्यापीठ एवं ज्योति प्रसाद जैन ट्रस्ट द्वारा उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के प्रेमचंद सभागार में आयोजित समारोह में श्री राजीव कान्त जैन की काव्य कृति **'सोनचिरैया फिर चहकेगी'** का लोकार्पण सुविख्यात साहित्यकार एवं कवि श्री सूर्य कुमार पाण्डेय के कर कमलों एवं डॉ.शशि कान्त जैन के आशीर्वचन द्वारा सम्पन्न हुआ। 'मूर्द्धन्य साहित्यकार श्री रवीन्द्रकुमार 'राजेश' और हिन्दी साहित्य मर्मज्ञ डॉ. सरल अवस्थी ने अपनी उपस्थिति से कार्यक्रम को गरिमा प्रदान की। मंच संचालन श्रीमती बिन्दु जैन ने, संयोजन श्री नलिन कान्त जैन ने और धन्यवाद–ज्ञापन श्री संदीप कान्त जैन ने किया।

❑

डॉ. शशि कान्त जैन के 1950 और 1960 के दशक में प्रकाशित कतिपय लेख व विचार

	शीर्षक	लेख / विचार	पत्र–पत्रिका	प्रकाशन काल
1.	महावीर और उनका संदेश	लेख	नवजीवन, लखनऊ	6.4.1952
2.	The Teachings of Mahavira	लेख	The Pioneer, Lucknow	8.4.1952
3.			The Voice of Ahinsa Aliganj (Etah), (U.P.)	Nov, Dec 1952
4.			The English Jaina Grazette	Apr. 1955
5.	महावीर का साम्यवाद	लेख	जैन संदेश, मथुरा	17.4.1952
6.	Kaya-Danda and Mansa- Karma	लेख	The Voice of Ahinsa, Aliganj (Etah), (U.P.)	Sep, Oct 1953
7.	युग पथ–प्रदर्शक महावीर	लेख	नवजीवन, लखनऊ (साप्ताहिक परिशिष्टांक)	22.4.1956
8.	IAS Recruitment*	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	28.5.1956
9.	IAS Recruitment*	"	"	7.6.1956
10.	IAS Special Recruitment*	"	"	5.7.1956
11.	India And The Aftermath	"	"	20.1.1957
12.	Akbar Centenary	"	"	21.2.1957
13.	बौद्ध धर्म और अहिंसा के संबंध में कतिपय भ्रांतियां	लेख	नवजीवन, लखनऊ	31.3.1957

14.	Ahimsavadi	लेख	Hindustan Times	4.4.1957
15.			The Voice of Ahinsa, Aliganj (Etah), U.P	May. 1957
16.	The Bhabru Edict of Asoka	लेख	The Orissa Historical Research Journal, Vol.-VI, Bhubaneswar	Apr. 1957
17.	युग–पथ–प्रदर्शक महावीर	लेख	वीर (दिल्ली)	10.5.1957
18.	Neo-Buddhism	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	21.6.1957
19.	Kerala Communism	"	"	1.7.1957
20.	Lucknow's Haphazard Expansion	"	"	19.7.1957
21.	1857 Movements	"	"	11.8.1957
22.	नैतिकता या धार्मिकता	लेख	अणुव्रत	15.9.1957
23.	Language and Religion	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	17.9.1957
24.	Common Script	"	"	2.10.1957
25.	Food Problem	"	"	15.10.1957
26.	महामानव महावीर	लेख	जैन संदेश, मथुरा	17.10.1957
27.			वीर (दिल्ली)	15.11.1957
28.	Nagarjunakonda	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	10.11.1957
29.	तिमिर–हर	कविता	वीर (दिल्ली)	29.11.1957

30.	अहिंसा के सम्बन्ध में कतिपय भ्रांतियां	लेख	नवजीवन, लखनऊ	8.12.1957
31.			वीर (दिल्ली)	3.1.1958
32.	Sanitation Drive	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	9.12.1957
33.	Assessment of Indian History	Letters	CARAVAN (Delhi)	Dec.1957
34.	'पलिबोथ्रा' और पाटलीपुत्र	लेख	ब्रजभारती (ब्रज साहित्य मंडल, मथुरा)	अंक 4 वर्ष 15, 1957
35.	The Language Problem	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	4.1.1958
36.	Our National Anthem	लेख	CARAVAN (Delhi)	Jan. 1958
37.	Review of Article-'How India Lost Buddhism'	Letters	CARAVAN (Delhi)	Feb.1958
38.	Secretariat Reorganization	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	19.3.1958
39.	An humourous Anecdote	Letters	CARAVAN (Delhi)	Apr. 1958
40.	वीर शासन का जन्म स्थान–राजगृह	लेख	जैन संदेश, मथुरा	17.7.1958
41.	Development of Hindi	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	18.7.1958
42.	साहित्य अकादमी के प्रकाशनों का सम्पादन	लेख	सरस्वती (इलाहाबाद)	जुलाई 1958
43.	पंजाबी बनाम हिन्दी	पत्र	सरिता	सितम्बर 1958

44.	Jain Munis and Nudity	लेख	The Voice of Ahinsa, Aliganj (Etah), U.P.	Sep-Oct., 1958
45.	Holidays*	Readers's Forum	National Herald, Lucknow	16.10.1958
46.	Our National Calender	लेख	CARAVAN (Delhi)	Oct. 1958
47.	Over emphasis to English Language	Letters	CARAVAN (Delhi)	Oct. 1958
48.	आँसु–एक पर्यालोचन	लेख	"भारती" (बम्बई हिन्दी–विद्यापीठ की मासिक मुख्य पत्रिका)	दिसम्बर 1958
49.	Democracy in the East	Letters	CARAVAN (Delhi)	Feb.1959
50.	Rajgir	लेख	CARAVAN (Delhi)	Mar. 1959
51.	The Ten commandments	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	19.3.1959
52.	महामानव महावीर	लेख	नवजीवन, लखनऊ	21.4.1959
53.	Unemployment Problem	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	27.5.1959
54.			Northern India Patrika	27.5.1959
55.			The Poona Daily News	27.5.1959
56.			Hindustan Standard-Delhi	28.5.1959

57.	Unemployment Problem		Hindustan Standard-Calcutta	2.6.1959
58.	Review of 'India Wins Freedom'	Letters	CARAVAN (Delhi)	May. 1959
59.	The Place of English in Free India	लेख	QUEST (Bombay)	Apr-June. 1959
60.	The Jain Philosophy	लेख	Uttar Pradesh (Soochna Vibhag, U.P.)	Jul. 1959
61.	Panorma of History	लेख	CARAVAN (Delhi)	Aug. 1959
62.	Educationg the child	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	25.11.1959
63.	Development of Indian Sculpture	लेख	Uttar Pradesh (Soochna Vibhag, U.P.)	Republic Number, 1959
64.	हाथी–गुम्फा लेख का संशोधित पाठ	लेख	जैन संदेश (शोधांक–6), मथुरा	4.2.1960
65.	From Stone Age to Linguistic state	लेख	CARAVAN (Delhi)	May. 1960
66.	Mussoorie-The Queen of the Hills	लेख	Uttar Pradesh (Soochna Vibhag, U.P.)	Jun. 1960
67.	Study of Languages	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	7.9.1960
68.	Study of Various Languages	Letters to The Editor	The Pioneer, Lucknow	7.9.1960
69.	The Twenty-Sixth January	लेख	Uttar Pradesh (Soochna Vibhag, U.P.)	Republic Number, 1960

70.	Colourful History	लेख	CARAVAN (Delhi)	Jan. 1961
71.	Ups And Downs of Maratha History	लेख	CARAVAN (Delhi)	May. 1961
72.	जैन संस्कृति में कौशाम्बी	लेख	जैन संदेश (शोधांक–14)	2.8.1962
73.	The Historic Defences of India	लेख	The MIRROR (Bombay)	Feb.1963
74.	The Persian Carpet on Indian Soil	लेख	The MIRROR (Bombay)	Jul. 1963
75.	Unity in diversity	लेख	The MIRROR (Bombay)	Aug. 1963
76.	Archaeological Misconceptions by Mr. P.N. Oak	Letters	CARAVAN (Delhi)	Aug. 1963
77.	The Landmark of Indian History	लेख	The MIRROR (Bombay)	Sept. 1963
78.	Primary Education*	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	3.12.1963
79.	Why Buddhism Crumbled	लेख	CARAVAN (Delhi)	Dec. 1963
80.	मानवता	लेख	युगवाणी (लखनऊ)	अप्रैल, 1964
81.	Origin of name of 'Lcuknow'	Civic Affairs-Citizens' Views	National Herald, Lucknow	22.9.1964
82.	The origin of Lcuknow	Letters to The Editior	The Pioneer, Lucknow	Sep 23,1964

83.	श्रमण एवं ब्राह्मण	लेख	वीर (दिल्ली)	25 सितम्बर, 1964
84.	The origin of Lcuknow	Letters to The Editor	The Pioneer, Lucknow	Oct 14, 1964
85.	Origin of Lucknow	"	"	Oct 18, 1964
86.	Approach to History	लेख	QUEST (Bombay)	Oct./Dec. 1964
87.	Lucknow or Lakshmanpur	Letters to The Editor	The Pioneer, Lucknow	25.2.1965
88.	Old Kanpur Road	Citizens' Forum	The Pioneer, Lucknow	26.2.1965
89.	Toned Milk	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	7.3.1965
90.	Lucknow or Lakshmanpur	Letters to The Editor	The Pioneer, Lucknow	15.3.1965
91.	Historical Construction	लेख	QUEST (Bombay)	April/June 1965
92.	Agitation And Govt. Servants*	Letters to The Editor	The Pioneer, Lucknow	16.7.1966
93.	Jain Temple*	"	"	16.9.1966
94.	Demographic Dilemma	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	20.12.1967
95.	जैन धर्म का प्राचीनतम अभिलेखीय प्रकरण	लेख	गुरू गोपालदास वैरेया स्मृति ग्रन्थ (अखिल भारतीय दिगम्बर जैन विद्वत परिषद द्वारा प्रकाशित)	1967

96.	Christian Missions*	Readers' Forum	National Herald, Lucknow	10.1.1968
97.	"आकाशदीप": तथ्यो के संदर्भ	लेख	ज्ञानपीठ पत्रिका	जनवरी-फरवरी 1968
98.	Secretariat Reorganization	Civic Affairs-Citizens' Views	National Herald, Lucknow	19.3.1968
99.	Medium of Varsity Instruction*	Letters to The Editors	The Pioneer, Lucknow	24.4.1968
100.	Corporation Elections*	Civic Affairs-Citizens' views	National Herald, Lucknow	1.5.1968
101.	Numismatics & Museum	Letters to The Editor	The Pioneer, Lucknow	21.12.1969
102.	Thesis Presented-History of Vatsa	University Notes-लेख	The Quarterly Review of Historical Studies, Vol. -IX, Calcutta	1969-70
103.	वत्स जनपद का राजनैतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास	लेख	अनेकान्त (दिल्ली)	दिसम्बर 1970 -फरवरी 1971

नोट : *छद्म नाम (परिजन / मित्र के नाम) से प्रकाशित

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ0प्र0
प्रतिवेदन वर्ष 2019–20

तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उत्तर प्रदेश, का गठन सन् 1976 ई. में 24वें तीर्थंकर भगवान वर्धमान महावीर स्वामी का 2500वां निर्वाण महोत्सव वर्ष मनाने के लिए राज्य सरकार द्वारा गठित **श्री महावीर निर्वाण समिति, उ0प्र0,** की उत्तराधिकारी संस्था के रूप में जैन धर्म की सभी आम्नायों के महानुभावों के सहयोग से किया गया था तथा गठन के तुरन्त बाद ही उसे सोसायटी रजिस्ट्रीकरण अधिनियम के अन्तर्गत रजिस्टर्ड करा लिया गया था जिसका नियमानुसार नवीनीकरण यथासमय कराया जाता है।

समिति का वर्ष 2018–19 का प्रतिवेदन **शोधादर्श**–88–89 (जन.–जून व जुलाई–दिसम्बर 2019 ई.) के पृष्ठ 82–85 पर प्रकाशित है। यहां वर्ष 2019–20 (1 अप्रैल 2019 से 31 मार्च 2020) का प्रतिवेदन प्रस्तुत है।

आलोच्य वर्ष में समिति की प्रवृत्तियों की प्रगति निम्नवत रही :–

1. तीर्थंकार महावीर स्मृति केन्द्र शोध पुस्तकालय

पुस्तकालय की स्थापना वर्ष 1976 की श्रुत पंचमी को की गई थी और इसका विधिवत उद्घाटन 23 अक्टूबर 1976 को प्रदेश के तत्कालीन ग्राम्य विकास मंत्री माननीय डॉ. रामजीलाल सहायक के कर कमलों से सम्पन्न हुआ था। पुस्तकालय और उससे संलग्न वाचनालय श्री मुन्नेलाल कागजी जैन धर्मशाला ट्रस्ट, चारबाग, लखनऊ द्वारा धर्मशाला के प्रथम तल पर उपलब्ध कराये गये एक कक्ष में प्रारंभ किया गया था, जो मई 2001 से धर्मशाला के द्वारा भूतल पर किराये पर उपलब्ध कराये गये दो कक्षों में चल रहा है।

समिति के सदस्यों के अतिरिक्त पुस्तकालय के सदस्य भी हैं जिनकी संख्या इस वर्ष 55 रही। लखनऊ में चारबाग ही नहीं वरन् आसपास की कॉलोनिया के जैन परिवार तथा अनेक जैनेतर जिज्ञासु महानुभाव भी पुस्तकालय के सदस्य हैं। कुछ सदस्य लखनऊ के बाहर के भी हैं।

पुस्तकालय में जैन धर्म, दर्शन, संस्कृति आदि के अध्ययन हेतु जैन धर्म की सभी आम्नायों का साहित्य तथा शोधार्थियों द्वारा तुलनात्मक अध्ययन के लिए अन्य भारतीय धर्मों, दर्शनों एवं संस्कृति से सम्बन्धित महत्वपूर्ण साहित्य संग्रहीत है। अपने विशिष्ट संकलन के लिये इन विषयों के शोधार्थी पाठकों में यह पुस्तकालय विशेष लोकप्रिय है तथा लखनऊ, कानपुर

व अन्य विशविद्यालयों से सम्बद्ध शोध छात्र इससे लाभ उठाते हैं। सामान्य रुचि के पाठकों के लिए लौकिक एवं सामान्य ज्ञानवर्धक साहित्य भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है।

शोध पुस्तकालय के वाचनालय में प्रायः 50 धार्मिक, सामाजिक, सामयिक एवं शोध पत्र–पत्रिकाएं (साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक, चातुर्मासिक, षट्मासिक और वार्षिक) समिति की शोध–पत्रिका **शोधादर्श** के परावर्तन में प्राप्त होती हैं।

पुस्तकालय–वाचनालय से प्रतिदिन प्रायः 20–25 पाठक लाभ उठाते हैं। पुस्तकालय–वाचनालय का समय प्रातः 10.00 से अपराह्न 2.00 बजे तक है। शनिवार और सार्वजनिक अवकाश पर पुस्तकालय–वाचनालय बन्द रहता है।

पुस्तकालय–वाचनालय का कार्य पूर्ववत पुस्तकालय व्यवस्थापिका श्रीमती हेमा सक्सेना, एम.ए. द्वारा सुचारू रूप से देखा जाता रहा है।

2. शोधादर्श

जैन विद्या की शोध को समर्पित शोध–पत्रिका **'शोधादर्श'** का प्रकाशन फरवरी 1986 में समिति द्वारा प्रथम अंक के प्रकाशन से प्रारंभ किया गया था। इसके आद्य–सम्पादक इतिहास–मनीषी विद्यावारिधि डॉ. ज्योति प्रसाद जैन थे। जून 1988 में उनके स्वर्गवास के उपरान्त अंक 7 से प्रधान सम्पादक के दायित्व का निर्वहन डॉ. शशि कान्त ने किया। अंक 30 (नवम्बर 1996) से अंक 56 तक प्रधान सम्पादक के कार्यभार का सम्पादन श्री अजित प्रसाद जैन ने किया। उनके निधन के उपरान्त अंक 57 (नवम्बर 2005) से अंक 67 (मार्च 2009) तक श्री रमा कान्त जैन ने इसके सम्पादन के दायित्व का निर्वहन किया।

अंक 68 (नवम्बर 2009) से **शोधादर्श** के सम्पादन का दायित्व, डॉ. शशि कान्त जैन के मार्गदर्शन में, मेरे द्वारा निर्वहन किया जा रहा है।

वर्ष 2019 में **शोधादर्श** का संयुक्तांक 88–89 प्रकाशित हुआ। इसमें 116 पृष्ठों की ज्ञानप्रद व उपयोगी संग्रहणीय सामग्री प्रकाशित है। इस अंक में विशेष रूप से अहिंसा और क्षमा पर विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

साहित्य सत्कार के अंतर्गत 16 कृतियों की समीक्षा की गई। अन्य स्तम्भ भी यथावत् रहे। पत्रिका की लोकप्रियता में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई। तथा आज यह पत्रिका देश की उच्च स्तरीय धार्मिक–सांस्कृतिक शोध–पत्रिकाओं में अपना विशिष्ट स्थान रखती है।

3. तीर्थंकार छात्र सहायता कोष

इस वर्ष आर्थिक दृष्टि से निर्बल 63 विद्यार्थियों को अध्ययन जारी रखने हेतु आंशिक सहायता प्रदान करने पर रु. 61115.10 का व्यय किया गया।

4. लेखे की स्थिति

समिति के लेखे का आडिट इस वर्ष भी श्री आलोक जिन्दल, चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट द्वारा किया गया और उनके माध्यम से आयकर कार्यालय को आवश्यक विवरणी यथासमय प्रस्तुत की जायेगी।

कुल प्राप्तियां वर्ष में रु. 1,81,240.00 रहीं (इसमें रु. 300.00 पुस्तकालय सिक्योरिटी राशि भी है जो रिफन्डेबिल है) तथा व्यय रु. 1,47,126.10 हुआ। प्राप्ति–व्यय की विवरण तालिका संलग्न है। इसमें पुस्तकालय–वाचनालय का मासिक किराया सम्मिलित नहीं है क्योंकि उसका समायोजन श्री मुन्ने लाल कागजी जैन धर्मशाला ट्रस्ट को दी गई अग्रिम धनराशि से होता है।

मुन्नेलाल कागजी जैन धर्मशाला ट्रस्ट को दी गई अग्रिम किराये की अवशेष राशि रु. 51,200.00 में से वर्ष 2019–20 में रु. 1600.00 की दर से रु. 19,200.00 की धनराशि मासिक किराये के रूप में समायोजित की गई, और अग्रिम किराये की राशि रु. 32,000.00 अवशेष रही।

5. अन्तिम

विगत वर्ष 2019–20 की सभी प्रवृत्तियों के सम्पादन में मुझे समिति के अध्यक्ष श्री लूणकरण नाहर जैन का तथा प्रबन्ध समिति के सभी माननीय सदस्यों का सक्रिय सहयोग एवं मार्गदर्शन निरंतर उपलब्ध रहा। सभी क्रियाकलापों में समिति के माननीय सदस्यों का भी सौहार्दपूर्ण सहयोग प्राप्त रहा। इन सभी महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त करना मेरा व्यक्तिगत और नैतिक दायित्व है।

नलिन कान्त जैन
महामंत्री

TIRTHANKAR MAHAVIR SMRITI KENDRA SAMITI, U.P.

Statement of Receipts & Payments for the Year ending 31st March, 2020

RECEIPTS		Rs. P.	PAYMENTS		Rs. P.
Balance b/d:			Research Library:		
F.D.Rs.	25,65,000.00		Salary Libr. Asstt.	73,000.00	
Savings Bank	41,328.34		Salary Cleaner	4,650.00	
Cash in Hand	27.00	26,06,355.34	Contingencies	955.00	78,605.00
Research Library:			Shodhadarsh Magazine:		
Security Deposit	300.00		Stationery & Prtg.	6,320.00	
Subscription	880.00		Distpatch Postage	—	6,320.00
Misc. Receipts	100.00	1,280.00			
Shodhadarsh Magazine:			Stationey		283.00
Subscription	920.00		Postage		803.00
Donation	21,101.00	22,021.00	T.C.S. Kosh Scholarship Exp.		61,115.10
Interest on F.D.Rs.		1,55,784.00			
Interest on Savings Bank		2,155.00	Balance c/f:		
			F.D.Rs.	25,65,000.00	
			Savings Bank	73,672.24	
			Cash in Hand	1,797.00	26,40,469.24
		27,87,595.34			27,87,595.34

Compiled on the basis of information and explanations furnished.

For Avanish K. Rastogi & Associates
Charterd Accountants
Alok Jindal
Partner

अभिनन्दन

भारत सरकार के प्रकाशन विभाग की पत्रिका बाल भारती द्वारा आयोजित निबन्ध प्रतियोगिता में मान्या जैन को 'गांधी जी मेरी नजर में' विषयक निबन्ध लेखन पर अखिल भारतीय स्तर पर प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ। मान्या जैन श्री अजित जैन 'जलज' की सुपुत्री हैं। मान्या की बड़ी बहन अनन्या जैन ने भी राष्ट्रीय पात्रता परीक्षां (NEET) उत्तीर्ण कर शासकीय मेडिकल कालेज, सागर में प्रवेश प्राप्त किया।

डॉ. तन्वी जैन ने जून 2020 में PGI चंडीगढ़ से एम.एस. (जनरल सर्जरी) विभाग में सर्वोच्च स्थान के साथ रजत पदक प्राप्त किया। डॉ. तन्वी स्व. डॉ. शशि कान्त जैन की सुपौत्री और श्री राजीव कान्त जैन की सुपुत्री हैं।

प्रभावना जन कल्याण परिषद द्वारा आयोजित हीरक जयंती समारोह में 17 अक्टूबर 2020 को श्री सुरेश जैन, आई.ए.एस. को 'समाज भूषण' की उपाधि से अलंकृत किया गया। समारोह की अध्यक्षता श्री निर्मल कुमार सेठी, राष्ट्रीय अध्यक्ष, भारतवर्षीय दिगम्बर जैन महासभा ने की।

जैन वर्ल्ड संस्था, अमेरिका ने अपने रजत जयंती वर्ष कार्यक्रमों की श्रृंखला में 'ज्वेल्स आफ जैन वर्ल्ड' पुरस्कार से सम्मानित करने के लिए डॉ. अनुपम जैन (इन्दौर), डॉ. डी.सी. जैन (कुरुक्षेत्र), डॉ. आर.सी. जैन (वैशाली) डॉ. नलिनी बलवीर (फ्रांस) और डॉ. फिलिस ग्रनॉफ (यू.एस.ए.) को दीपावली–महावीर निर्वाण दिवस पर चयनित किया गया।

***शोधादर्श* का समस्त परिवार और *तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति* उपरोक्त सभी महानुभावों का उनकी यश–वृद्धि के लिए हार्दिक अभिनन्दन करते हैं।**

आभार

अपने पौत्र चि. अशीत के सौ. शेफाली के साथ 7–12–2019 को सम्पन्न परिणय और पौत्री सौ. मेहा के चि. केशव के साथ 16–2–2020 को सम्पन्न परिणय के उपलक्ष में रु. 10000.00 डॉ. शशि कान्त जैन ने भेंट किये। चि. अशीत और सौ. मेहा चि. नलिन कान्त और सौ. मोहिनी जैन के सुपुत्र एवं सुपुत्री हैं।

अपने पिताजी डॉ. शशि कान्त जैन की पुनीत स्मृति में उनके पुत्र सर्वश्री शिरीष कान्त, नलिन कान्त एवं राजीव कान्त तथा पुत्री श्रीमती अलका एवं श्रीमती शेफ़ाली ने रु. 10000.00 भेंट किये।

डॉ. राजेन्द्र पटोरिया एवं डॉ. श्रीमती कुसुम पटोरिया, नागपुर, ने पौत्र

चि. प्रवेक पटोरिया के जन्म के उपलक्ष में रु. 1000.00 भेंट किये।

श्रीमती सरिता अग्रवाल, कोलकाता, ने मौसाजी डॉ. शशि कान्त जैन की स्मृति में रु. 1100.00 भेंट किये।

शोक संवेदन

जयपुर में जस्टिस नरेन्द्र मोहन कासलीवाल का 10 जनवरी 2020 को निधन हो गया। वे जैन संस्कृति मंच के अध्यक्ष थे।

चेन्नई में 84 वर्षीय साहित्यकार एवं समाजसेवी श्री दुलीचन्द्र जैन का 22 अप्रैल 2020 को निधन हो गया। उनकी कई पुस्तकों का परिचय 'शोधादर्श' में दिया जा चुका है। 'करुणा अन्तर्राष्ट्रीय' के चेयरमैन के रूप में उन्होंने करुणा और शाकाहार का व्यापक प्रचार किया।

सतना में 88 वर्षीय मुनि सेवा एवं शाकाहार को समर्पित ख्यातिलब्ध विद्वान पं. निर्मल जैन का 4 जून 2020 को निधन हो गया।

आगरा में वयोवृद्ध विद्वान श्री रतन लाल बैनाड़ा का 16 अगस्त 2020 को स्वर्गवास हो गया।

दिगम्बर जैन महासमिति के पूर्व अध्यक्ष श्री प्रदीप कुमार सिंह कासलीवाल का 5 सितम्बर 2020 को इन्दौर में निधन हो गया।

डॉ. राजेन्द्र कुमार बंसल, बुढ़ार के तृतीय पुत्र श्री ज्ञानानन्द बंसल का 51 वर्ष की वय में असामायिक निधन 23 अक्टूबर 2020 को हो गया। धार्मिक और सामाजिक कर्यों में उनकी विशेष रुचि थी।

सराकोद्धारक आचार्य श्री ज्ञान सागर जी महाराज का 63 वर्ष की आयु में बारां (राजस्थान) में 15 नवम्बर 2020 को देवलोक गमन हो गया।

गिरनार गौरव आचार्य श्री निर्मल सागर जी महाराज का 74 वर्ष की आयु में गिरनारजी में 17 नवम्बर 2020 को देवलोक गमन हो गया।

वागड़ गौरव आचार्य श्री रयण सागर जी महाराज का 66 वर्ष की आयु में आनन्द नगर कालू (जि.पाली) में 22 नवम्बर 2020 को समाधिमरण हो गया।

श्री प्रदीप जैन, सम्पादक वीर/जैन प्रचारक का नई दिल्ली में 26 नवम्बर 2020 को निधन हो गया।

प्राकृत भाषा के विशेषज्ञ और शिक्षाविद् प्रो. सागरमल जैन का शाजापुर (म.प्र.) में 2 दिसम्बर 2020 को महाप्रयाण हो गया। उन्होंने अपनी मृत्यु से एक दिन पूर्व संथारा ग्रहण कर लिया था और सभी प्रकार के आहार को त्याग दिया था।

श्री शैलेन्द्र जैन के 12 वर्षीय पुत्र आदीश जैन का लखनऊ में 6 दिसम्बर 2020 को निधन हो गया। आदीश जन्म से ही एक विशेष प्रकार की बीमारी से ग्रस्त थे, जिसका उपचार बहुत कठिन था।

डॉ. माणक चन्द मुण्डफोड़ा, प्रधान सम्पादक धर्म रत्नाकर का उदयपुर में, 80 वर्ष की वय में, 31 दिसम्बर 2020 को निधन हो गया।

उपरोक्त सभी दिवंगत महानुभावों के प्रति *शोधादर्श* परिवार की भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित है और शोक से संतप्त परिवारों के प्रति हार्दिक संवेदना निवेदित है।

समाचार विविधा

पर्यावरण संरक्षण

पर्यावरण संरक्षण हेतु प्राच्य विधा एवं जैन संस्कृति संरक्षण संस्थान, लाडनूं द्वारा 7 जून 2020 को 'भारतीय संस्कृति में पर्यावरणीय जैन संदृष्टि' विषय पर एक राष्ट्रीय वेबिनार (ई–संगोष्ठी) का आयोजन किया गया। प्रो. भागचंद जैन 'भास्कर' (नागुपर) ने अध्यक्षता की और डॉ. मनीषा जैन (लाडनूं) ने संचालन किया। डॉ. श्रेयांस कुमार जैन (बड़ौत), प्रो. जिनेन्द्र कुमार जैन (उदयपुर), प्रो आनन्द प्रकाश त्रिपाठी (लाडनूं), प्रो. लोकेश कुमार जैन (गांधीनगर), श्री राजेन्द्र जैन 'महावीर' (सनावद) ने विभिन्न विषयों पर पर्यावरण संरक्षण पर अपने सारगर्भित विचार रखे।

नए संसद भवन के भूमि पूजन में 'जैन धर्म' का प्रतिनिधित्व

भारत के नये संसद भवन के भूमि पूजन में डॉ. इन्दु जैन, राष्ट्र गौरव ने जैन धर्म का प्रतिनिधित्व किया। आपने भारत की प्राचीनतम भाषा प्राकृत एवं संस्कृत में गाथा, मंगलाष्टक एवं महावीराष्टक की स्वरमयी प्रस्तुति करके न केवल सस्वर मंगल पाठ किया बल्कि जैन धर्म के साथ–साथ भारत की प्राचीनतम भाषा एवं संस्कृति का भी प्रतिनिधित्व किया, जिनसे पूरा संसद भवन परिसर गुंजायमान हो गया। डॉ. इन्दु जैन प्रो. फूलचन्द जैन एवं डॉ. मुन्नी पुष्पा जैन की सुपुत्री एवं श्री राकेश जैन की जीवन संगिनी हैं।

श्री अशोक कुमार नाहटा की पुण्यतिथि

श्री अशोक कुमार नाहटा की पुण्यतिथि की 40वीं वर्षगांठ पर 22 दिसम्बर 2020 को नई दिल्ली में भारतीय डाक विभाग द्वारा विशेष आवरणमय विरूपण जारी किया गया। पूर्व केन्द्रीय मंत्री डॉ. सत्यनारायण जटिया द्वारा श्री अशोक कुमार नाहटा स्मृति स्मारिका 'अविस्मरणीय' का विमोचन किया गया। श्री ललित कुमार नाहटा ने श्री अशोक कुमार नाहटा के स्वल्प जीवन काल में उनकी कीर्तिमान उपलब्धियों तथा उनकी उदारवृत्ति का भावपूर्ण उल्लेख किया।

आवश्यक सूचना

वार्षिक शुल्क रु. 60/–(साठ रुपये), 'महामंत्री, तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ.प्र.,ज्योति निकुंज,चारबाग, लखनऊ–226004', को 'तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति' के नाम लखनऊ में देय चेक अथवा ड्राफ्ट द्वारा भेजने का अनुग्रह करें। मनीआर्डर से भेजने पर उसकी सूचना एक पोस्टकार्ड पर भी अपने पूरे नाम व पते के साथ अवश्य भेजें। विदेशों के लिए पत्रिका का वार्षिक शुल्क 25 डालर है।

शोधादर्श षड्मासिक पत्रिका है और सामान्यतया इसके अंक जून–अन्त और दिसम्बर–अन्त में प्रकाशित होते हैं।

शोधादर्श में प्रकाशनार्थ शोधपरक एवं अप्रकाशित लेख आमंत्रित हैं। लेख कागज के एक ओर सुवाच्य अक्षरों में लिखित अथवा टंकित होना चाहिये और उसमें यथावश्यक सन्दर्भ/स्रोत सूचित किये जाने चाहियें। यथासम्भव लेख 3–4 टंकित पृष्ठ से अधिक न हो। लेख सामान्यतया हिन्दी में होने चाहियें परन्तु अंग्रेजी में भी भेजे जा सकते हैं। लेख की एक प्रति अपने पास अवश्य रख लें। अप्रकाशित लेख–रचना लौटाना कठिन होगा।

शोधादर्श में प्रकाशित लेखों को उद्धरित किये जाने में आपत्ति नहीं है, परन्तु शोधादर्श का श्रेय स्वीकार किया जाना और पूर्ण सन्दर्भ दिया जाना अपेक्षित है।

प्रकाशनार्थ लेख और समीक्षार्थ पुस्तक/पत्रिका सम्पादक को ज्योति निकुंज, चारबाग, लखनऊ--226004, के पते पर भेजे जायें।

प्रत्यावर्तन में पत्रिका की केवल एक प्रति सम्पादक को उपरोक्त पते पर भेजी जाये।

लेखक के विचारों से सम्पादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। लेख में दिये गये तथ्यों और सन्दर्भों की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं।

सभी विवाद लखनऊ में स्थित सक्षम न्यायालयों/न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार के अधीन होंगे।

सुधी पाठक कृपया अपनी सम्मति और सुझावों से अवगत करावें ताकि पत्रिका के स्तर को बनाये रखने और उन्नत करने में हमें प्रोत्साहन तथा मार्गदर्शन प्राप्त होता रहे। कृपया पत्रिका पहुंचने की सूचना भी देवें।

— सम्पादक